राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

प्रेमपत्र राधास्वामी

दूसरा भाग

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

राधास्वामी गाय कर, जनम सुफल कर ले
यही नाम निज नाम है, मन अपने धर ले

प्रेमपत्र राधास्वामी

दूसरी जिल्द

जिसको

परम संत सतगुरु हुज़ूर महाराज ने
ज़बान-ए-मुबारक से फ़रमाया

राधास्वामी मौज से प्रेम पत्र जारी।
दृढ़ विश्वास होय चरन में और प्रीत गाढ़ी॥
सुमिरन ध्यान और भजन में नित नया आनंद पाय।
सतसंगी सब उमँग उमँग राधास्वामी महिमा गाय॥

प्रकाशक

राधास्वामी ट्रस्ट

स्वामी बाग़, आगरा-२८२००५

प्रकाशक :

राधास्वामी ट्रस्ट

स्वामीबाग, आगरा-२८२ ००५

सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

छटवीं बार १०००	सन् १९८६ ई०
सातवीं बार ३०००	सन् १९९२ ई०

मूल्य :

अजिल्द : २८.००

सजिल्द : ३१.५० 37/50

मुद्रक :

सुरेन्द्रभाई शाह

पारिजात प्रिन्टरी

२८८/१, रानीप-अहमदाबाद-३८२४८०

राधास्वामी सहाय

प्रेमपत्र दूसरा भाग जो कि १ मई सन् १८९४ ई० से ३० एप्रिल सन् १८९५ ई० तक खतम हुआ, उसके

बचनों के सूचीपत्र

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मजमून बचन	नम्बर सफ़ा
१	राधास्वामी मत वालों का बरताव अपने मन और इन्द्रियों के साथ	१५
२	राधास्वामी मत वालों का बरताव साथ अपने कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी के	२१
३	राधास्वामी मत में जो हुक्म दिये हैं उनके मानने के वास्ते जुगत भी बताई है। और मतों में यह बात बहुत कम पाई जाती है	२६
४	होशियार करना राधास्वामी मत के अभ्यासियों को, वास्ते सम्हाल अपने मन और इन्द्रियों के, और दुरुस्ती से करने अभ्यास के, अपने अन्तर में	३७
५	राधास्वामी मत में जो गुरु-भक्ति जारी है, उस पर तान मारने वालों को जवाब, और वर्णन इस बात का कि सच्चे परमार्थ और सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिए अपने समय के भेदी और अभ्यासी, मनुष्य-स्वरूप गुरु से मिलना और उनके साथ दीनता और भाव और प्यार करना बहुत ज़रूर है	५५
	अर्थ शब्द नम्बर २३, बचन ४१, पोथी सार बचन छंद बंद "गूंगे ने गुड़ खाइया"	७०
६	राधास्वामी मत करनी का है, सिर्फ विद्या और बुद्धि की समझ और विचार का नहीं है	७४

नम्बर बचन	सुरख़ी यानी ख़ुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा
७	संग का बयान	८५
	सार बचन छन्द बन्द बचन ४१ "सोधत सुरत शब्द धुन अन्तर"	९१
८	सब जीवों को जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे हैं, अपने निज घर और सच्चे माता-पिता की सुध लेकर चलने और उनके चरनों में पहुँचने का जतन करना चाहिए	९४
९	परमार्थी को सतसंग में और सतगुरु के सन्मुख परमार्थ की रीत और क़ायदों के मुवाफ़िक़ बर्ताव करना चाहिए	१०१
१०	संतों के बचन हरचन्द अधिकारी प्रति हैं, पर कुल्ल जीवों को अपनी २ ताक़त के मुवाफ़िक़ उनका मानना और उनके मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और बर्तावा दुरुस्त करना ज़रूर चाहिये	१०८
११	राधास्वामी मत केवल दया का मत है और इस मत में जीव का उद्धार सहज होता है	११४
१२	चेत कर सतसंग और अभ्यास करके, परमार्थी चिन्ता और खटक हिरदे में पैदा करना कि जिससे पूरा काम बन जावें	१२६
१३	मज़बूत करना प्रतीत और प्रीत का, राधास्वामी दयाल के चरन कँवल में	१३१
१४	वर्णन प्रीत और प्रतीत का गुरु-चरनन में	१५०
१५	**राधास्वामी मत संदेश**	१६६
१६	राधास्वामी दयाल के चरनों में जैसी-तैसी प्रीत करना चाहिए, तब सहज २ सच्चा उद्धार होता जावेगा और एक दिन काम पूरा बन जावेगा	२५०

नम्बर बचन — सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन — नम्बर सफ़ा

१७ हर शख़्स को अपने जीव-चैतन्य के भण्डार का खोज और पता लगाकर वहाँ पहुँचने का जतन करना चाहिये कि जिससे परम आनन्द को प्राप्त होवे, और जनम-मरन और देह के दुख-सुख से बचाव हो जावे २५६

अर्थ शब्द नम्बर २, पोथी सार बचन छन्द बन्द, बचन ४१, "सुन्नी सुरत शब्द बिन भटकी" २६८

१८ मालिक का संसार में नर रूप धर कर औतार लेना जीवों के सच्चे उद्धार और कल्यान के वास्ते निहायत दरजे की दया और मेहर का निशान है। २७२

१९ 'इतसे मोड़ और उतसे जोड़' यानी संसार और माया के पदार्थों से चित्त को हटाकर, राधास्वामी दयाल के चरनों में यानी स्वरूप और शब्द की धार से जोड़ना चाहिये २८४

२० मन और सुरत का मुख, अन्तर में, ऊपर की तरफ़ मोड़ने, और आहिस्ता २ चढ़ाने में, हमेशा सुख और आनन्द ज़्यादा से ज़्यादा मिलेगा, और दुख, तकलीफ़ और चिन्ता, दूर और कम होते जावेंगे। इस वास्ते यह अभ्यास कुल्ल जीवों को, चाहे औरत होवे या मर्द, वास्ते अपने असली फ़ायदे के, करना लाज़िम और मुनासिब है २९३

२१ वर्णन रोशन और अँधेरी किरनियों का, जो कि पिण्ड और ब्रह्माण्ड की रचना में चैतन्य और जड़ की प्रकट अंस हैं, और उपदेश वास्ते पहुँचने निरमल चैतन्य यानी हमेशा के नूरानी देश में, जहाँ अँधेरा यानी काल और माया बिल्कुल नहीं हैं ३०३

शब्द १२, बचन ४१, सार बचन छन्द बन्द "निरखो री कोई उठकर पिछली रतियां" ३०९

२२ चैतन्य को, विशेष चैतन्य और महा चैतन्य से मेल करना चाहिये, न कि सामान्य चैतन्य और जड़ से ३११

नम्बर बचन | सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन | नम्बर सफ़ा

२३ ध्यान में आसानी अभ्भास की, और भजन में किसी क़दर कठिनता का वर्णन ३२२

२४ वर्णन निर्मल और कपट या लपेट की भक्ति का ३३५

२५ सच्चे परमार्थ की कमाई के वास्ते सच्ची और निर्मल चाह, और प्यार और खौफ़ ज़रूर है, और जो यह बातें न होंगी तो जो कुछ कार्रवाई परमार्थ की, की जावेगी, वह कर्म में दाखिल होगी। प्रेम और भक्ति की तरक्की नहीं होगी ३४१

२६ सतसंग, अंतर और बाहर, सम्हाल कर करना चाहिए, तब फल और फ़ायदा उसका प्रकट होगा ३५१

२७ जीवों को, वास्ते बचाव तकलीफ़ और दुखों से, और प्राप्ति सच्चे और अमर सुख और आनन्द के, अपने घट में, संतों की जुगत के मुवाफ़िक़ स्वरूप का ध्यान और शब्द के सुनने का थोड़ा-बहुत अभ्यास ज़रूर करना चाहिये ३६१

२८ साध के संग की महिमा और उसका फ़ायदा, जो सच्ची दीनता और प्रेम के साथ संग किया जावे ३६७

२९ वर्णन महिमा सुरत-शब्द मार्ग और संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का, कि जिससे सहज में, जीवों का सच्चा उद्धार होता है ३७९

३० क़ुदरती सबूत इस बात का कि सिर्फ़ राधास्वामी मत में, असल भेद सच्चे मालिक और उसकी क़ुदरत का, और सच्चा और पूरा तरीक़ा जीव यानी सुरत के सच्चे और पूरे उद्धार का वर्णन किया है, और जिसके समझने

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा

और अभ्यास करने के वास्ते कुछ ख़ास ज़रूरत विद्या के पढ़ने की नहीं है, यानी राधास्वामी मत के भेद और जुगत को, मर्द और औरत, पढ़े-लिखे और अनपढ़, सब आसानी से समझ सकते हैं और उसका अभ्यास मेहर और दया से बे-ख़तरे और निर्विघ्न कर सकते हैं ३९१

३१ वर्णन इस बात का कि संत-मत के मुवाफ़िक़ राधास्वामी पद कुल्ल का अख़ीर और सिद्धान्त है और यही अपार और अनन्त है। इसके परे और कोई पद नहीं है और न हो सकता है ४०५

३२ शब्द, द्वारे सुरत के, अपने निज घर में (जो कि राधास्वामी धाम है) पहुँच सकती है। और द्वारों से धुर मंज़िल तक नहीं पहुँचेगी। कहीं न कहीं रास्ते में अटक रहेगी और कारज पूरा नहीं बनेगा ४१०

३३ मन और सूरत, नौ द्वारों से झांक कर इस लोक के भोगों में फँस गये हैं। सो दसवें द्वार की तरफ़ झांकने और चलने से उन बन्धनों से छुटकारा होगा, और सन्त सतगुरु की दया से एक दिन निज घर में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होंगे ४३२

अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन नम्बर ३५, पोथी सार बचन छन्द बन्द

"आरत गाऊं स्वामी सुरत चढ़ाऊँ" ४४५

अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन ४१, पोथी सार-बचन राधास्वामी छन्द बन्द (दूसरा भाग)

"सुर्त बन्नी गुरू पाया बन्ना" ४५०

३४ कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा और भेद सुन कर (हर एक जीव को जो उनके बाल-बच्चे हैं)

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

प्रेमपत्र राधास्वामी

दूसरा भाग

बचन १

राधास्वामी मत वालों का बरताव अपने मन और इन्द्रियों के साथ

१–जो कोई सच्चा होकर परमार्थ में लगे और राधास्वामी मत में शामिल होकर उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू करे, तो उसको चाहिए कि अपने मन और इन्द्रियों की चौकीदारी करने की आदत डाले, यानी इनकी चाल-ढाल की निरख-परख करता रहे कि फ़िज़ूल कामों और फ़िज़ूल ख़्यालों और फ़िज़ूल चीज़ों में किस क़दर मन और इन्द्रियाँ बहती रहती हैं, और उन कामों और ख़्यालों और चीज़ों से इनको, जब २ वे उस तरफ़ को जावें, रोकता रहे।

२–यह काम एक दिन या जल्दी का नहीं है। जन्मान-जन्म और जुगान-जुग और सालहा-साल से यह मन, इन्द्रियों के वसीले से, मुनासिब और ना-मुनासिब और

ज़रूरी और फ़िज़ूल ख़्यालों और कामों और पदार्थों में भटकता रहता है, और कहीं भी इसको पूरी शान्ति या ठहराऊ आनंद कि जिसके पीछे फिर तृष्णा या इच्छा उससे बढ़ कर दूसरे भोग की पैदा न होवे, नहीं मिलता है। इस सबब से यह मन हमेशा दुखी और भोगों की चाह की चिंता में सदा मलीन और उदास रहता है, और जब देखो, किसी न किसी मतलब के वास्ते जतन यानी मेहनत और मशक़्क़त करता रहता है।

३–असल बात यह है कि असली स्थान सुरत यानी रूह का, राधास्वामी के चरनों से लगा कर सत्तलोक तक है, और असली स्थान मन का त्रिकुटी में है, और जो कि वहाँ का थोड़ा-बहुत सुख और आनन्द यह मन भोगे हुए है, और उसी स्थान के मसाले का इसका ख़मीर है, इस सबब से यह मन जब तक कि उलट कर त्रिकुटी में न जावेगा, तब तक नीचे के स्थानों में, भूल और भरम करके हर एक काम और ख़्याल और पदार्थ में, उस असली स्थान के आनंद को ढूँढता है, और जैसे २ अपने २ संगियों से जिस २ बात या पदार्थ की महिमा और उसकी प्राप्ति में आनंद और मान-बड़ाई वग़ैरा का हाल सुनता है, उसी मुवाफ़िक़ उस पदार्थ के हासिल करने के लिये मेहनत और जतन करता है, और जब वह पूरा आनंद नहीं मिलता, तब उसी पदार्थ और उसी काम से चित्त

इसका किसी क़द्र हट जाता है। यानी फिर उसकी तरफ़ इसकी वैसी तवज्जह नहीं रहती है, और दूसरे पदार्थों या कामों या ख़्यालों की तरफ़ जिनकी ज़्यादा तारीफ़ सुनी है, लग जाता है। और ऐसे ही कभी किसी और कभी किसी चीज़ में इसका शौक़ लगता रहता है। और कभी ख़ाली नहीं रहता है, यानी अपनी चंचलता नहीं छोड़ता है।

४—सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि अपने मन और इन्द्रियों की चाल की जाँच करता रहे। और जब वह ना-मुनासिब और ग़ैर-ज़रूरी और फ़िज़ूल ख़्यालों या कामों में तवज्जह करें, उसी वक़्त या जिस क़द्र जल्दी होश और समझ आवे, उनको रोक कर या तो चरनों की तरफ़ अपने अंतर में लगावे, या सुमिरन और ध्यान करे, या पोथी का पाठ करे। और नहीं तो जो ज़रूरी और मुनासिब कार या ख़्याल दुनियावी होवे, उसमें लगावे। ख़ुलासा यह कि मन और इन्द्रियों को बाहर की तरफ़ या अपने अन्तर में नीचे की तरफ़, बे-फ़ायदा बहने से, जहाँ तक मुमकिन होवे, रोकता रहे। और जब कभी इसका बल पेश न जावे, तब चरनों में प्रार्थना करे, और अपनी ना-लायक़ी पर अफ़सोस करके आइंदा को हिम्मत बाँधे कि फिर ख़्याल या तरंग के उठते ही रोक लगाऊँगा। और जब ऐसा मौक़ा होवे, उस वक़्त फ़ौरन नाम के सुमिरन या स्वरूप

के ध्यान या शब्द के श्रवण में लग जावे, तो वह तरंग जो बहुत ज़बर न होगी, हट जावेगी। और जो पूरी-पूरी न हटा सके, तो भी इस खैंचा-तानी में उसका ज़ोर बहुत कम हो जावेगा, यानी यह उसको ऊपर की तरफ़ खींचेगा और वह तरंग नीचे या बाहर की तरफ़। जो इसकी ताक़त ज़बर होगी तो वह तरंग दूर हो जावेगी और मन अंतर में चरनों में लग जावेगा। और जो तरंग ज़बर हुई, तो भी उसका ज़ोर बहुत घट जावेगा, और धार उसकी बाहर या नीचे की तरफ़ बहुत कमज़ोर होकर जारी होगी। इसी तौर से लड़ाई करते २ अभ्यासी की ताक़त बढ़ती जावेगी। और फिर वह हर क़िस्म की तरंग को उसके उठते ही राधास्वामी दयाल की दया से जीत सकेगा।

५–मालूम होवे, कि मन और उसकी तरंग का ऐसा हाल है कि जब ख़याल करके अंतर में पहिले हिलोर होकर कोई तरंग काम, क्रोध, लोभ, मोह या अहंकार या दस इन्द्रिय के भोग की प्रकट हुई, और इस शख़्स ने उसको मदद देकर बढ़ाना शुरू किया, और उसकी धार बढ़ कर उस इन्द्रिय के द्वारे तक आ गई कि जिस इन्द्रिय के विषय का भोग लेना मंज़ूर है, तो इस बक़्त जो कोई अभ्यासी उस तरंग की धार को रोकना या उलटना चाहे, तो उसका उलटना बहुत मुश्किल मालूम होवेगा। जो किसी तरह से उस वक़्त वह भोग नहीं भोगा जा सकता है, तो यह तरंग

की धार दूसरा रूप धरके बाहर निकलेगी, यानी अक्सर तो वह क्रोध रूप धर कर प्रकट होवेगी और अभ्यासी इसके रोकने में अपने आप को बे-इख़्तियार और बे-ताक़त देखेगा। एक तरकीब से अलबत्ता यह तरंग की धार उलट सकती है, और वह सच्चा ख़ौफ़ और सच्चा रंज और सच्ची शरम और हया है। यानी जब तेज़ ख़ौफ़ ग़ालिब होवे, या अपनी बे-इज़्ज़ती का ख़्याल दिल में पैदा हो जावे, या कोई सख़्त मुसीबत या रंज का खटका मन में आजावे, तो उस वक़्त कैसी ही ज़बर तरंग किसी क़िस्म की क्यों न होवे, फ़ौरन इन्द्रिय द्वार से लौट कर मन की मन में समा जावेगी।

६—इसी वास्ते सच्चे परमार्थियों ने ख़ौफ़ और रंज और फ़िक्र को वास्ते इलाज अपने मन की बीमारी के, मुक़द्दम रक्खा है। बल्कि बाज़ों ने अपने मालिक से आप यह बात माँगी है कि किसी क़िस्म की बीमारी यानी रोग और किसी क़िस्म की चिंता उनको ज़रूर बख़्शिश होवे, कि उसके सबब से उनका मन किसी क़दर दुबला और कमज़ोर रहा आवे और भोगों में बहुत चंचलता न करे। संतों ने डर की महिमा इस तौर पर करी है :—

डर करनी डर परम गुर, डर पारस डर सार।
डरत रहे सो ऊबरे, ग़ाफ़िल खाई मार॥

७—और रोग और सोग और चिन्ता की निस्बत ऐसा कहा है :—

रोगी सद् जीवित रहे, बिन रोगहि मर मर जाय ॥
सोगी नित हरखत रहे, बिन सोग चौरासी जाय ॥
चिन्ता में जो नित रहे, सो मिले अचिन्ते आय ॥

८—ख़ुलासा यह है कि जो अपने मन को परमार्थ की चिंता में रक्खेगा और सच्चे मालिक और सतगुरु की अप्रसन्नता का ख़ौफ़ दिलाता रहेगा और अपने प्रीतम के बिछुड़ने यानी जुदाई का सोग और रंज उसके मन में जब-तब पैदा होता रहेगा और दुनिया और अपने मन की बीमारी का हाल देख कर सुस्त और उदास होता रहेगा, वही शख़्स जल्दी मन और इन्द्रियों को क़ाबू में लावेगा और परमार्थ का असली फ़ायदा उठावेगा ।

९—और चंचल मन हमेशा धक्के खाता रहेगा, क्योंकि उसको दरबार में दख़ल नहीं मिल सकता । और रास्ते ही में से काल और माया उसको उसकी चाह के मुवाफ़िक़ अनेक तरह की तरंगें उठवा कर गिरा देंगे, यानी नीचे की तरफ़ को वापिस कर देंगे और उसकी चढ़ाई नहीं होने देवेंगे ।

१०—अब, विचारना चाहिए कि सच्चे परमार्थी को किस क़दर ज़रूरत अपने मन और इन्द्रियों के सम्हाल की है । इसी का नाम निरख और परख है । निरख से यह

मतलब है कि अपने मन और इन्द्रियों की चाल पर नज़र रक्खे, और परख यह है कि जब वे ग़ैर-वाजिब या ना-मुनासिब या ग़ैर-ज़रूरी और फ़िज़ूल कामों या ख़्यालों या चीज़ों या बातों में लगें, तो उसी वक़्त उनको उस तरफ़ से हटा कर मुनासिब और फ़ायदेमंद काम और ख़्याल में लगावे। बहुत से इल्म वाले लोग भी अपना बरताव और व्यवहार बहुत सम्हाल के साथ रखते हैं और अपना वक़्त फ़िज़ूल कामों या बातों में ख़र्च नहीं करते। फिर परमार्थी पर तो उनसे भी ज़्यादा फ़र्ज़ है कि अपने वक़्त की सम्हाल रक्खे कि बे-फ़ायदा ख़र्च न होवे। और अपने मन और इन्द्रियों की भी रोक रक्खे कि ना-मुनासिब और फ़िज़ूल कामों और बातों की तरंगें न उठावें। तब कोई दिन के इस क़िस्म के अभ्यास से, वह अपने मन और इन्द्रियों की सच्ची और पूरी चौकीदारी और सम्हाल कर सकेगा और फिर परमार्थ का गहरा फ़ायदा हासिल करता जावेगा।

बचन २

राधास्वामी मत वालों का बरताव साथ अपने कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी के

१—राधास्वामी मत के अभ्यासियों को हुक्म है कि अपने घर में रह कर और पेशा या रोज़गार ब-दस्तूर जारी रख कर, जो जुगत कि उनको बताई जावे, उसका

अभ्यास दो बार, तीन बार, या चार बार हर रोज़ एक-एक घंटे या कुछ कम, करते रहें और दुनिया की फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा चाहें उठानी मौक़ूफ़ करें। और जिस वक़्त अभ्यास करें, उस वक़्त तो ज़रूर इस क़दर होशियारी रक्खें कि दुनिया के ख़्याल उनके मन में जहाँ तक मुमकिन होवे, न आवें, और जो बग़ैर इरादे के ऐसे ख़्याल उठें, तो उनको जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, हटा देवें।

२—सतसंगी को चाहिए कि अपने कुटुम्ब-परिवार के संग, प्रीत-भाव के साथ बरताव करे और जिसका जो हक़ होवे, जहाँ तक मुमकिन होवे, उसको अदा करे। जो कुटुम्बी इसके साथ सच्चे परमार्थ में शामिल हो जावें तो बहुत अच्छा, नहीं तो, एक दो या तीन मरतबा इसको चाहिए कि उनको राधास्वामी मत की बड़ाई और उसके अभ्यास का फ़ायदा खोल कर समझावे। जो यह बात उनकी समझ में आजावे और वे अपनी राज़ी से जिस क़दर शामिल होवें, उनको अपने साथ परमार्थ में लगा लेवे। और जो वे टेकी या करमी और भरमी होवें और संतों के बचन को न मानें और भेख और पंडितों की चाल के मुवाफ़िक़ अपना बरताव जारी रक्खें, तो राधास्वामी मत के अभ्यासी को चाहिए कि उनके साथ ज़िद्द और अदावत न करे। उनको उनके हाल पर छोड़ देवे और दुनिया का व्यवहार उनके साथ ब-दस्तूर बर्तता रहे।

३—जो इसके कुटुम्बी बे-फ़ायदा झगड़ा और लड़ाई इसके साथ इस निमित्त करें कि यह राधास्वामी मत को छोड़ कर उन्हीं का संग देता रहे, तो (जो इसकी समझ में राधास्वामी मत की बड़ाई अच्छी तरह आगई है) उनसे साफ़ कह देवे कि वह उनका संग नहीं दे सकता है, चाहे वे उससे प्रीत भाव और दुनिया के व्यवहार का बरतावा रक्खें या नहीं, लेकिन उनके दीन और दुनिया के मुआमले में किसी तरह से दख़ल न देवे, जिस तरह का परमार्थ और व्यवहार उनको भावे, वे ब-दस्तूर करते रहें। धन की मदद जिस क़दर हो सके उनकी करता रहे और एहतियात रक्खे कि इसकी बे-परवाही के सबब से उनको किसी तरह की तकलीफ़ न होवे।

४—जो इसकी स्त्री और पुत्र परमार्थ में इसके संगी हो जावें और माता, पिता और भ्राता और बहन भी संग देवें, तो इन सब की ज़्यादा ख़ातिरदारी और प्यार-भाव करे, क्योंकि यह सब धुर मंज़िल तक का संग देकर, आख़िर को, सब मिल के एक ही स्थान यानी सत्तलोक और राधास्वामी धाम में बासा पावेंगे, और जब तक दुनिया में उनका संग है, तब तक एक दूसरे को दोनों काम में यानी स्वार्थ और परमार्थ में मदद देवेगा। धन्य भाग है ऐसे सतसंगी के कि जिसका कुल्ल घर परमार्थ में उसके शामिल है, और जो सब शामिल न होवें और थोड़े से ही

जैसे स्त्री और पुत्र शामिल होवें, तो भी भागवान है कि उसको घर में भी मदद मिल सकती है और सतसंग में भी मदद तैयार है ॥

५—अपनी बिरादरी से भी राधास्वामी मत के सतसंगी को जहाँ तक मुमकिन होवे, ऐसी होशियारी और सम्हाल के साथ बरताव करना चाहिए कि जिसमें कोई झगड़ा और बखेड़ा पैदा न होवे और न किसी से दुश्मनी या अदावत क़ायम होवे। हर जगह और हर हालत में दीनता यानी नियाज़-मंदी बड़ा भारी असर वाला औज़ार काम देने के वास्ते सतसंगी के पास मौजूद रहता है। जहाँ जैसा मौक़ा और मुनासिब देखे, वहाँ उसी मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे, और बे-परवाही और धमकी और सख़्ती के बचन किसी से या किसी की निस्बत ज़बान से निकालना मुनासिब नहीं। इसमें नाहक़ तकरार और फ़िसाद खड़ा होता है और सतसंगी को फ़िसाद और झगड़े को हमेशा जहाँ तक मुमकिन होवे, बचाना चाहिए ताकि उसके परमार्थ में ख़लल और नुक़सान न आवे।

६—अपने दोस्तों से भी राधास्वामी मत के सतसंगी को प्यार भाव के साथ बरताव रखना चाहिए। पर जो वे और रिश्तेदार और बिरादरी के लोग जब २ मिलें इसके परमार्थ की हँसी या खिल्ली उड़ावें और तान और तंज़ के बचन कहते रहें, तो एक, दो, या तीन बार उनको सहूलियत

के साथ जबाब साफ़ देकर उनकी ग़लती पर उनको ख़बरदार कर देवे, और राधास्वामी मत की महिमा और बड़ाई उनके रू-ब-रू बयान कर देवे। और जो फिर भी वे अपनी आदत हँसी और खिल्ली की न छोड़ें और जब २ मिलें, तब २ उस सतसंगी के साथ छेड़-छाड़ करते रहें, तो मुनासिब है कि उनसे कम मिले और अपने वक़्त फ़ुरसत को सुमिरन, ध्यान या भजन या पाठ में लगाना शुरू कर देवे। राधास्वामी दयाल की मेहर से वे सब आहिस्ता २ आपही उस सतसंगी की तरफ़ से हट कर अलेहदा सोहबत इख़्तियार कर लेंगे और इससे आइन्दा को बहुत सरोकार न रक्खेंगे। जब ऐसी सूरतें होती जावें तो जानो कि राधास्वामी दयाल की दया है कि वे आप अपने अभ्यासी सतसंगी का पीछा हर एक से छुड़ाते जाते हैं। और एक दिन इसी तरह सब रिश्ते और डोरियों को बिल्कुल ढीला करके सुरत को सहज में अपने निज घर पहुँचा देवेंगे।

७—सतसंगी को चाहिये कि जो उसके घराने में पुरानी रस्में जारी हैं और उसके कुटुम्बी उनको बिरादरी की ख़ातिर ब-दस्तूर जारी रखना चाहें तो उनको उन रस्मों में बर्तने देवे। और जो वे परमार्थ में इसका संग दे रहे हैं, तो इसको भी मुनासिब है कि ज़ाहिरी तौर पर उन रस्मों में अपने कुटुम्बियों का संग देवे। और अंतर में यह भी और कुटुम्बी भी राधास्वामी का ध्यान करें। इसमें किसी तरह

का परमार्थी हर्ज नहीं होगा। जब तक सतसंगी गृहस्थ में बैठा है, तब तक उसको अपनी बिरादरी से थोड़ा-बहुत व्यवहार करना ज़रूर और मुनासिब है। और इस वास्ते उनकी ख़ातिर कोई २ पुरानी रस्म और चाल भी जारी रखना मुनासिब है। और जिसमें बिरादरी के शरीक होने या दख़ल देने की ख़ास ज़रूरत नहीं है, उस रस्म में कमी-बेशी करने का इख़्तियार है, और जिस रस्म के सबब से कोई ख़ास तकलीफ़ या नुक़सान या मुशकिल उठानी पड़े और ऐसी रस्म को बदलना मुनासिब मालूम होवे और बिरादरी का उसमें ख़ास दख़ल नहीं है, तो इख़्तियार है कि उस रस्म को जिस तौर से मुनासिब होवे बदल देवे। पर इस क़दर एहतियात रक्खे कि कोई काम अहंकार और ज़बरदस्ती (और लोगों के दिल दुखाने को) दिखावे के साथ न करे कि इसमें नाहक़ तकलीफ़ और नुक़सान उठाना पड़ेगा।

॥ शब्द ३ ॥

राधास्वामी मत में जो हुक्म दिये हैं, उनके मानने के वास्ते जुगत भी बताई है। और मतों में यह बात बहुत कम पाई जाती है।

१—मालूम होवे कि हर एक मत में हुक्म दिये गए हैं–कोई मानने के वास्ते और कोई छोड़ने के वास्ते। इन हुक्मों का पढ़ लेना और ज़बान से कह देना और सुना देना बहुत आसान है। पर उनके मुवाफ़िक़ बरताव करना, इस तौर पर कि जो बात करना चाहिये, उसको थोड़ा बहुत ज़रूर करना, और जो बात मना है, उसको जहाँ तक मुमकिन होवे, न करना–यह काम बहुत मुशकिल है। क्योंकि इस बरताव में मन और इन्द्रियों पर चोट पड़ती है और उस चोट की बरदाश्त हर किसी को नहीं हो सकती है।

२—यही सबब है कि कुल्ल मतों में (१) बहुत से लोग तो अपने मत से बिल्कुल ना-वाक़िफ़ यानी मूरख हैं और (२) जो थोड़ी-बहुत समझ-बूझ रखते हैं, वह बाचक हैं, यानी ज़बानी अपने मत के हुक्म और क़ायदे सब सुना सकते हैं पर उनके मुवाफ़िक़ बरताव बिल्कुल नहीं है और (३) कोई बिरले यानी बहुत कम ऐसे लोग होंगे जो थोड़ी-बहुत कोशिश, हुक्म और क़ायदों के मुवाफ़िक़ अपना बरताव दुरुस्त करने की, कर रहे हैं, और जाँच कर देखते हैं कि उनकी मेहनत और कोशिश बहुत कम फ़ायदा देती है, यानी मन और इन्द्रियाँ और उनकी तरंगें बहुत ज़बर हैं और उनकी रोक और अटक बहुत मुशकिल बल्कि ना-मुमकिन मालूम होती है।

३—इससे ज़ाहिर है कि जितने हुक्म हर एक मत के आचार्य ने दिये हैं, वह सब बेकार और बे-फ़ायदा हो गये। क्योंकि आम तौर पर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई कहीं नज़र नहीं आती है, बल्कि बहुत से मुआमलों में साफ़ उन हुक्मों के बर-ख़िलाफ़ यानी उलटा बरताव होता है। और फिर वे लोग अपनी उलटी कार्रवाई देख कर न शरमाते हैं न पछताते हैं, और न ख़ौफ़ मालिक या अपने आचार्य का दिल में लाते हैं। अब किस तरह यक़ीन किया जावे कि इस क़िस्म के लोग अपने आचार्य का हुक्म मानते हैं? या उनसे उम्मीद अपने उद्धार की रखते हैं? ऐसे लोगों की कार्रवाई पर पूरा २ भरोसा और एतबार न दुनिया के मुआमलों में हो सकता है, न दीन के मुआमले में। क्योंकि जब उनका कोई ख़ास मतलब या नफ़े का मुआमला होगा, उसमें फ़ौरन अपनी बुद्धि और चतुराई के साथ सत्य और असत्य और हक़ और ना-हक़ और दूसरे का नुक़सान और हक़-तल्फ़ी का ख़याल छोड़ कर, जो कुछ कार्रवाई होगी, उसको फ़ौरन अपने, दुनिया के मतलब के पूरा करने के वास्ते उलट-पलट कर देंगे।

४—कोई २ मत में ऐसा लिखा है कि जो कोई हुक्मों को न मानेगा, वह जहन्नुम यानी नरकों में सज़ा पावेगा और उद्धार उसका नहीं होगा। पर यह डर बहुत कम असर लोगों के दिल पर पैदा करता है, क्योंकि प्रत्यक्ष यानी

मौजूदा हाकिम का ख़ौफ़ सज़ा वग़ैरा का, यह मन बहुत कम मानता है, और अनेक तरह की तदबीर और जुगती निकाल कर क़ानून के पंजे से अपनी निकासी ढूँढ़ लेता है। फिर ग़ायब हाकिम यानी मालिक का डर कौन माने ? सिवाय इसके, विद्या और बुद्धिवान लोगों ने बहुत सी किताबें हर एक मत में ऐसी बनाई हैं कि जिससे लोगों के दिल से इस बात का यक़ीन भी जाता रहा कि आया नर्क, चौरासी और जहन्नुम वग़ैरा, मौजूद हैं। बल्कि ऐसी समझौती उनको दी गई है कि यह मुक़ामात और सज़ायें, वास्ते डराने और धमकाने नादान जीवों के, उस्ताद लोगों ने अपनी मान-बड़ाई और धन पैदा करने के मतलब से तजवीज़ की हैं, और असल में उनका कहीं वजूद नहीं है।

५—इस तौर पर आम लोग हर एक मत में थोड़े या बहुत निडर होकर बर्तते हैं और वहाँ के हुक्मों के मानने या न मानने की कुछ परवाह नहीं करते। और जो लोग कि आम लोगों के अफ़सर और अगुवा और समझाने-बुझाने वाले हैं, वे आपही उन हुक्मों पर जैसा कि चाहिये, नहीं चलते। फिर औरों की सम्हाल उनसे क्या हो सकती है ?

६—यहाँ तक हाल, और मतों का, बयान किया गया। अब राधास्वामी मत का हाल लिखा जाता है कि इस मत में जितने हुक्म हैं वह बतौर नसीहत-नामे के लिखे

गये हैं और यह उपदेश है कि उनका मानना, वास्ते अपने फ़ायदे और भले के जीवों को मुनासिब और ज़रूर है।

७—और उन हुक्मों के साथ ही अपदेश, वास्ते कमाने सुरत-शब्द योग के, लिखा गया है कि जब तक कोई अभ्यास करके अपने मन और सुरत को इन्द्रिय घाट से हटा कर, ऊँचे की तरफ़ अपने घट में नहीं चढ़ावेगा, तब तक उसका उद्धार नहीं हो सकता है।

८—और यह भी संग २ उपदेश है कि कुल्ल मालिक, सत्त पुरुष, राधास्वामी दयाल की, जो घट २ में मौजूद हैं सच्चे मन से सरन लेकर जो कोई अभ्यास में लगेगा, उसी को मेहर और दया प्राप्त होगी। और वही मेहर और दया आहिस्ता २ एक दिन उसके जीव का सच्चा उद्धार कर देगी, यानी उसकी सुरत को सत्तलोक और राधास्वामी के चरनों में पहुंचा देगी। कि जहाँ पहुँच कर वह अमर और अजर आनंद पाकर हमेशा को मगन और सुखी हो जावेगी और जनम-मरन और दुख-सुख के झगड़ों से हमेशा को उसका बचाव हो जावेगा।

९—और राधास्वामी मत में यह भी पहिले ही समझाया जाता है कि जो कुछ रचना बाहर ब्रह्माण्ड वग़ैरा में मौजूद है, वह सब छोटे नमूने के तौर पर हर एक आदमी के पिंड में मौजूद है। और जो कि कुल्ल

मालिक सब जगह मौजूद कहा जाता है, तो हर एक जीव के संग उसके पिंड में भी मौजूद है । इस वास्ते सच्चे मालिक से मिलने का रास्ता राधास्वामी मत में हर एक जीव के घट में बताया जाता है ।

१०—अब मालूम करो कि कर्म तीन क़िस्म के हैं । एक, संचित कर्म जो कि आइन्दा जनमों में भोगे जायँगे । दूसरे, प्रारब्ध कर्म जो कि इसी जनम यानी देह में भोगने पड़ेंगे । और तीसरे, क्रियमान कर्म जो इस जनम में बनते हैं और जिनका फल कुछ इसी जनम में और कुछ आगे के जनमों में भोगना पड़ेगा । और जब तक कि यह तीनों क़िस्म के कर्म काटे नहीं जावेंगे, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार होना मुमकिन नहीं है ।

११—अब समझना चाहिए कि राधास्वामी मत की ख़ूबी और बड़ाई इस बात में है कि राधास्वामी दयाल और संतों ने ऐसी जुगत दया करके बताई है कि उसके कमाने से दिन २ जीव का घाट यानी स्थान बदलता जावेगा । और इसी कमाई के साथ इसके कर्म सहज में कटते जावेंगे । और इसी जन्म में वह संतों की दया से निःकर्म होता जावेगा । फिर जो हुक्म कि नसीहत के तौर पर लिखे हैं, संतों का जीव, उनकी मेहर और दया से आप ही अपने मन और इन्द्रियों पर ज़ोर देकर मानता जावेगा । और रफ़्ता २ एक दिन ऐसे मुक़ाम पर पहुँच

जावेगा कि जहाँ पर कर्म और भर्म और काल और माया का असर इस पर हरगिज़ नहीं पहुँच सकेगा। और इस तौर पर एक दिन अपना पूरा उद्धार जीते जी आप देख लेगा।

१२—अब वह तरकीब कि जिससे सुरत, मन और इन्द्रिय और पिंड और ब्रह्माण्ड से न्यारी होकर अपने निज घर में पहुँचे और तीनों क़िस्म के कर्म यहाँ के यहाँ ही कट जावें, तफ़सील के साथ आगे बयान की जाती है, कि जिससे संतों की दया का हाल अच्छी तरह समझ में आवेगा, और तब राधास्वामी मत की बड़ाई का थोड़ा बहुत यक़ीन मन में आवेगा।

१३—जिस वक़्त कि जीव राधास्वामी मत में शामिल हुआ, उसी वक़्त से उसको दो क़िस्म का अभ्यास करना पड़ता है, एक वास्ते समेटने मन और सुरत बिखरी हुई के, असली बैठक की जगह पिंड में, और दूसरा वास्ते उनको चढ़ाने के आकाश में, और फिर उसके और पिंड के परे ब्रह्माण्ड में, और फिर उसके भी परे संत अथवा दयाल देश में, जहाँ सच्चा और पूरा और अमर आनन्द प्राप्त हो सकता है। और मालूम होवे कि इससे नीचे के देश में ऐसा पूरा और अमर आनंद ब-सबब मिलौनी माया के हासिल नहीं हो सकता है।

१४—पहिले अभ्यास का यह फ़ायदा है कि मन और सुरत जो जगह २ पिंड में और बाहर अनेक पदार्थों और जीवों में बँधे और बिखरे हुए हैं, सिमट कर मध्य में आँखों के परे जमा होवें। वही असली बैठक का स्थान है।

१५—इतने ही अभ्यास में जो दुरुस्ती से बन आवे, इस क़दर रस और आनंद मिलेगा और कैफ़ियत नज़र आवेगी कि इस जीव के दिल में सच्चा शौक़ और प्यार अपने सच्चे और कुल्ल मालिक के चरनों में पैदा हो जावेगा, और अपने घट में सब सामान के भंडार होने का यक़ीन दिल में आवेगा।

१६—दूसरे अभ्यास का यह फ़ायदा है कि मन और सुरत धुन की डोरी पकड़ के ऊपर को चढ़ेंगे, और अपने सच्चे और प्यारे मालिक की दया और मेहर के परचे अंतर में सिवाय मामूली रस और आनंद और कैफ़ियत वग़ैरा के, देखने लगेंगे। तब सच्चा प्रेम जागना शुरू होगा और सच्चा यक़ीन मालिक के हाज़िर और नाज़िर और हर वक़्त अंग-संग मौजूद होने का दिल में आता जावेगा। और जिस क़दर यह हालत पैदा होती, और आइन्दा बढ़ती जावेगी, उसी क़दर इस जीव के मन में सच्चा ख़ौफ़ अपने सच्चे मालिक की अप्रसन्नता, यानी नाराज़गी, का पैदा होता जावेगा और उसी क़दर यह जीव ना-पसंद और बुरे कामों से आप बचता जावेगा, और जिन कामों के वास्ते

हुक्म है और मालिक की प्रसन्नता उसमें हासिल होने की उम्मीद है, उसमें यह जीव आप बर्तने लगेगा ।

१७—खुलासा यह कि जब कोई काम इस जीव से नाक़िस या ना-पसन्द बनेगा, फ़ौरन उसको मालिक की अप्रसन्नता का हाल, अपने अन्तर में, वक़्त अन्तर अभ्यास के, मालूम हो जावेगा । यानी उस रोज़ मामूली रस और आनन्द भजन का नहीं मिलेगा और न कुछ ख़ास मेहर और दया मालूम पड़ेगी । इस भारी नुक़सान के खौफ़ से यह जीव आप कोशिश करेगा कि जिस से इस पर दया और मेहर दिन २ ज़्यादा होती रहे, और भजन का रस और आनन्द मिलता रहे । इस तरकीब के साथ जीव सच्चे तौर पर आसानी के साथ, तामील सच्चे हुक्मों की, कर सकता है, और नहीं तो चाहे जिस क़दर पढ़ो और समझो, और चाहे जिस क़दर बातें बनाओ, यह मन और इन्द्रियाँ हरगिज़ किसी के क़ाबू में नहीं आवेंगे । कहीं २ अगर किसी ख़ास खौफ़ या दुनियावी नुक़सान के ख़्याल से जो कोई बच रहा, या उसने दुरुस्ती से बरताव किया, यह आम जीवों के वास्ते काफ़ी नमूना नहीं हो सकता है । आम तौर पर, जो कोई बचेगा, वह राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक की दया, और अपने वक़्त के संत सतगुरु की मदद से बचेगा, और उस दया और मदद हासिल करने को राधास्वामी मत के

मुवाफ़िक़ अभ्यास करना ज़रूर दरकार है और उसके उसूल आर क़ायदों के मुवाफ़िक़ समझ और बूझ सम्हालना चाहिये।

१८—अब राधास्वामी मत के अभ्यासी के कर्मों के कटने का हाल सुनो कि जिस क़दर यह जीव अभ्यास करके ऊपर को चढ़ता जाता है, उसी क़दर उसके कर्मों का दफ़्तर साफ़ होता जाता है। यानी अन्दर में जो चैतन्य आकाश है, उसमें सब संचित कर्मों के नक़्श मौजूद हैं। जैसे २ सुरत और मन उस आकाश मन्डल से गुज़र करते हैं, वे कर्म ज़िंदा हो कर, घड़ियों और पलों में, अपना भोग दे देते हैं और कर्मों का मैदान इस तरह साफ़ होता चला जाता है। दूसरे, प्रारब्ध कर्मों का असर ब-सबब नित्त अभ्यास चढ़ाई मन और सुरत के, बहुत कम व्यापता है। यानी जब सुरत आँख के मुक़ाम पर, जैसे जाग्रत अवस्था में, बैठती है, उस वक़्त संसार और देह के दुख-दर्द और चिंता और फ़िक्र सब व्यापते हैं। और जिस क़दर कि सुरत की धार अपने अन्तर में मुतवज्जह होवे यानी खिंच जावे, जैसे सोने के वक़्त या गहरे नशे या ग़श की हालत में, या जब कि डाक्टर लोग शीशी सुँघा कर फोड़ा चीरते हैं या बदन काटते हैं, उस वक़्त देह और संसार का दुख और सुख बहुत कम बल्कि बिल्कुल नहीं व्यापता है। इसी तरह जिस क़दर अभ्यास करके सुरत

का अन्तर में खिंचाव और चढ़ाव हुआ है, उसी क़दर प्रारब्ध कर्मों का वेग यानी असर उस अभ्यासी को कम मालूम होवेगा। तीसरे, क्रियमान कर्मों का फल इस तौर पर दूर हो जावेगा कि राधास्वामी मत का अभ्यासी जिसने सच्ची सरन राधास्वामी दयाल की ली है, जो कुछ काम ज़रूरी करेगा, वह उनकी मेहर और दया और मौज के आसरे करेगा और फल की इच्छा उनकी मौज और दया के आसरे रक्खेगा। जो मौज मुवाफ़िक़ हुई तो बहुत अच्छा, और जो ना-मुवाफ़िक़ हुई तो भी बहुत अच्छा। हर हाल में अपने प्यारे मालिक की मौज और मरज़ी के मुवाफ़िक़ अपने मन को चलाना और उसी में राज़ी रहना।

१६—जब इस तौर पर अभ्यासी ने कर्म किये तो उसका बन्धन उन कर्मों और उनके फल में मुतलक़ नहीं हुआ। इस तरह रफ़्ता २ सब कर्म कटते जावेंगे। और जब अभ्यासी मेहर और दया से त्रिकुटी के मुक़ाम तक पहुँचेगा, तब सब झगड़े और बखेड़े, काल और कर्म और माया और भरम वग़ैरा के, नीचे रह जावेंगे। और अभ्यासी की सुरत इन सब से न्यारी होकर अपने निज घर में, यानी सत्तलोक और राधास्वामी धाम में, पहुँच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होवेगी।

बचन ४

होशियार करना राधास्वामी मत के अभ्यासियों को, वास्ते सम्हाल अपने मन और इन्द्रियों के, और दुरुस्ती से करने अभ्यास के, अपने अन्तर में

१—जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल हुए हैं, उनको चाहिए कि जिस क़द्र बन सके मन के विकारों में न बरतें, और अपना भजन और ध्यान होशियारी के साथ करें कि जिसमें मन, दुनिया के ख़्यालों में, बहुता न फिरे, और थोड़ी देर को ज़रूर एकाग्र होकर शब्द या स्वरूप में लग जावे। और थोड़ा बहुत रस और आनन्द अन्तर में पावे।

२—जो इस क़द्र होशियारी नहीं की जावेगी कि थोड़ा बहुत मन एकाग्र होकर अभ्यास में लगे, तो अन्तर में कुछ भी रस नहीं आवेगा। और न कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया का परचा अन्तर में मिलेगा। क्योंकि राधास्वामी दयाल का बचन है कि जो कोई मन के विकारों में बर्तेगा, वे उसका संग नहीं दे सकते, यानी कुछ मदद नहीं कर सकते।

३—मन के विकारों से मतलब यह है कि पाँचों दूत–अहंकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह के साथ, और दसों इन्द्रियों की तरंगों में निडर और निलज्ज होकर, और ज़रूरी और फ़िज़ूल चाहों का फ़र्क़ न करके बे-तकल्लुफ़ बरताव करना। अब इन विकारों का थोड़ा सा हाल लिखा जाता है।

१–अहंकार का अंग

४–इस अंग की जड़ वहीं समझनी चाहिये जहाँ से कि 'अहं' शब्द का ज़हूर हुआ। यह अंग सब से ज़बर है और सबसे पीछे इसका पूरा-पूरा अभाव होगा।

५—मान और बड़ाई की चाह हर एक के दिल में इसी अंग के सबब से पैदा होती है।

६—सन्तों ने कहा है कि हर एक आदमी के मन में अनेक तरह के मान धसे रहते हैं, जैसे (१) ज़ात-पांत का अहंकार (२) ख़ानदान यानी घराने का अहंकार (३) धन और हुकूमत का अहंकार (४) विद्या और हुनर का अहंकार (५) रूप, ज़ेवर और पोशाक और सवारी वग़ैरा का अहंकार (६) देह, बल और कुटुम्ब और बिरादरी का अहंकार (७) क़ौम की बड़ाई का अहंकार (८) बुद्धि, चतुराई और गुण का अहंकार (९) औलाद और नौकर-चाकरों का

अहंकार (१०) मकान और जायदाद का अहंकार (११) इज़्ज़त और हुरमत का अहंकार (१२) बुज़ुर्गों की अमीरी और बड़ाई का अहंकार (१३) राजों और अमीरों और साहूकारों और बड़े आदमियों से दोस्ती और जान-पहिचान होने का अहंकार (१४) बैराग और त्याग का अहंकार और (१५) अभ्यास का अहंकार वग़ैरा २।

७—जब तक यह मान मन से दूर न होंगे या किसी क़दर ढीले नहीं पड़ेंगे, तब तक सच्चे मालिक और सतगुरु के चरनों में सच्ची दीनता और सच्चा प्रेम मन में नहीं आवेगा। इस वास्ते हर एक आदमी को चाहिए कि जहाँ तक बन सके सतगुरु और उनके सतसंग से निष्कपट होकर दीनता के साथ बरताव करे तो कुछ फ़ायदा परमार्थी प्राप्त होगा। और इसी तरह अभ्यास के समय अन्तर में भी दीनता के साथ भजन और ध्यान में लगे, तब अन्तर में रस आवेगा।

मान मद त्याग करो गुरु संग ॥टेक॥

जब लग सजनी मान न छोड़ो।
तब लग रहो तुम तंग ॥ १ ॥

करम भरम जब लग नहिं छूटे।
नहिं धारो गुरु रंग ॥ २ ॥

बैर ईर्षा नित्त सतावे ।
करत रहो तुम सब से जंग ॥ ३ ॥

याते कहना मान पियारी ।
सीखो भक्ती ढंग ॥ ४ ॥

दीन होय गुरु सरनी आओ ।
चित्त से चेत करो सतसंग ॥ ५ ॥

गुरु भक्ती की रीत सम्हालो ।
धुन में सुरत लगाओ उमंग ॥ ६ ॥

नित अभ्यास करो अस कोई दिन ।
प्रेम बसे तुम्हरे अँग अँग ॥ ७ ॥

राधास्वामी मेहर से सुरत चढ़ावें ।
होयँ करम सब भंग ॥ ८ ॥

२–काम का अंग

८–यह अंग भी बहुत ज़बर है और जड़ इसकी दसवें ठार में है, और रचना की तरक़्क़ी का सबब यही अंग है ।

९–और सब तरह की कामना यानी चाहें इसी अंग के सबब से जीवों के मन में पैदा होती हैं ।

१०–ब्रह्माण्ड में इस अंग की धार बहुत सूक्ष्म है, लेकिन पिंड में जिस क़दर कि उतार नीचे को होता गया, उसका ज़ोर बहुत बढ़ता गया है ।

११–परमार्थी अभ्यासियों को लाज़िम है कि इस अंग से बचते रहें। और जो गृहस्थी हैं, वह एहतियात के साथ अपना बर्ताव करें। यानी ज़्यादती न होने पावे, नहीं तो अभ्यास के फ़ायदे में कसर पड़ेगी, क्योंकि काम अंग के साथ चैतन्य की धार नीचे को उतरती है।

१२–काम अंग का असर मन पर बहुत जल्द होता है। इस क़िस्म के बचन सुन कर या पढ़ कर या उनका ख़्याल करके या कोई ख़ूबसूरत स्त्री को देख कर या उसका ज़िक्र सुन कर या उसकी तसवीर देख कर या औरतों के पास बैठने-उठने से या उनके लिबास और पोशाक वग़ैरा के देखने से, कामी पुर्षों के मन में, फ़ौरन काम अंग जागता है। और चाहे उनको उसका भोग प्राप्त न होवे, लेकिन इसके ख़्याल करने ही में बहुत सा हर्ज और नुक़सान परमार्थी अभ्यासी का हो जाता है। यानी उसके मन की हालत किसी क़दर बदल जाती है। यानी इस क़दर चैतन्य धार का उतार या बहाव हो जाता है कि कुछ देर तक उसका मन अभ्यास के क़ाबिल नहीं रहता है। इस वास्ते राधास्वामी मत के अभ्यासी को मुनासिब और लाज़िम है कि ऐसी हालतों में अपना बचाव रक्खे। यानी ऐसे ख़्यालों और ज़िक्रों में और ऐसे तमाशों वग़ैरा में शामिल न होवे, और पहिले ही दम अपने मन को उस तरफ़ से हटा लेवे। नहीं तो थोड़ा बहुत शामिल हो जाने पर मन का हटाना बहुत मुश्किल मालूम पड़ेगा, बल्कि ना-मुमकिन होगा।

१३–मालूम होवे कि यह मन आप ही चोर है यानी रसों का रसिया है। इस सबब से काम की तरंग और ख़्याल और ज़िक्र और तमाशे वग़ैरा में आप ही दौड़ कर जाता है और उन बातों में रस और मज़ा लेता है।

१४–चाहे उस वक़्त परमार्थी बुद्धि याद भी दिलावे, और इसको होशियार भी करावे, पर यह मन रस में आसक्त होकर तवज्जह नहीं करता है और उन ख़्यालों से नहीं हटता, जब तक कि पूरा रस अपने ख़्याल में नहीं ले लेता है। इस वास्ते परमार्थी को चाहिये कि जिस क़दर होशियारी और एहतियात बने, शुरू में, ऐसे ख़्याल या बातों के, करे। और जब उसमें लिपट गया तब जल्दी से नहीं हटता है।

१५—जो काम की निस्बत ऊपर बयान किया गया, यही हाल कुल्ल कामनाओं का समझना चाहिये। यानी जो कामना जिसके दिल में ज़बर है, वह उस कामना के ख़्याल या बात-चीत और विस्तार वग़ैरा और पूरे करने में ऐसा ही आधीन और आसक्त और बेहोश है, जैसे कामी, कामिन के साथ होता है। इस वास्ते परमार्थी अभ्यासी को कोई कामना संसार की बहुत ज़बर नहीं उठाना चाहिये, और न काम अंग में ना-मुनासिब और ना-जायज़ और बे-मौक़े बर्ताव करना चाहिये। अपनी सब चाहें राधास्वामी दयाल

के चरनों में अर्पण करके, जो कुछ जिस-जिस मुआमले में मौज से होता जावे, उसको राधास्वामी दयाल की मौज समझ कर, उसी पर राज़ी होवे और शुकर करे। और जो किसी मुआमले में ज़रूरत ज़्यादा होवे, तो राधास्वामी दयाल के चरनों में भजन के वक़्त प्रार्थना करे। वे अपनी मेहर और दया से कोई न कोई तरह से इसका काम बनावेंगे, या वह ज़रूरत दूर कर देंगे।

३–क्रोध का अंग

१६–यह अंग भी बहुत ज़बर है और जड़ इसकी त्रिकुटी में है। जब २ कामना मन के मुवाफ़िक़ पूरी नहीं होती है, तब ही क्रोध अंग जागता है, कभी अपने ऊपर जो कसर अपनी नज़र आती है, और कभी दूसरे पर, जो उसकी तरफ़ भरम, कसर डालने का, इसके मन में पैदा होता है।

१७–इस अंग के साथ चैतन्य की धार शरीर में या बाहर फैल कर किसी क़दर भस्म हो जाती है। और इस वास्ते अभ्यासी को चाहिये कि इस अंग से बहुत डरता रहे और जहाँ तक हो सके, इसमें जान कर या भूल कर कभी बर्ताव न करे। सिर्फ़ मसलहत के मुवाफ़िक़ बर्ताव चाहिये कि जिसमें बन्दोबस्त अन्दर या बाहर दुरुस्ती के साथ जारी रहे, और हर एक अंग या शख़्स अपनी अपनी कार्रवाई मुनासिब करता रहे।

१८–जो कोई मामूल से ज़्यादा ज़ोर, सुरत के चढ़ाने के लिये, भजन या ध्यान में देते हैं, उनको अकसर यह दोनों अंग, यानी काम और क्रोध, अंतर में ज़्यादा सताते हैं। बल्कि क्रोध अंग ज़्यादा ज़बर होकर ज़रा २ सी बात में बाहर प्रकट हो जाता है।

१९–सबब इसका यह है कि जब सुरत ऊपर को किसी क़दर चढ़ेगी, तो जो वह निर्मल और साफ़ है तो ऊपर ठहर सकेगी। नहीं तो, जिस अंग की मलीनता उसमें विशेष करके है, वही अंग प्रकट होकर सुरत को नीचे उतार लावेगा, जैसे काम का धार अन्तर में तरंग उठा कर सुरत को नीचे को गिरा देवे या क्रोध की धार उठ कर सुरत को फैला देवे। इस वास्ते अभ्यासी को अपनी सफ़ाई का ज़्यादा ख़्याल रखना चाहिये, इस तौर पर कि जाग्रत और स्वप्न की हालत में उसके होश दुरुस्त रहें, यानी मन और इन्द्रियाँ उसकी काम और क्रोध की तरंग के साथ न बहें। तो भजन और ध्यान के समय और उसके पीछे भी थोड़ा बहुत यक़ीन पड़ेगा कि यह तरंगें उसकी सुरत को नहीं उतारेंगी। और जो जाग्रत के समय मन चलायमान हो जाता है और होश नहीं लाता है, तो अभ्यास के समय या उसके पीछे भी इसकी होशियारी काम नहीं देगी।

४-लोभ का अंग

२०—यह अंग बहुत ओछा और नाक़िस है, और शुरूआत इसकी सहसदलकँवल और उसके नीचे से समझना चाहिये । जिस किसी में यह अंग ज़बर है, वह परमार्थ से ख़ाली रहेगा, क्योंकि उसकी वृत्ति का ज़बर झुकाव बाहर की तरफ़ पदार्थों में होगा, और ऐसी हालत वाले से अभ्यास, सुरत और मन को समेटने और चढ़ाने का, नहीं बन सकता ।

२१-सिवाय इसके लोभी पुरुष कभी संतों के बचन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं कर सकेगा, क्योंकि वह अपने लोभ की तरंग को पूरा करने के वास्ते जीवों को दुख पहुँचाने और उनका हक़ मेटने में ज़रा ख़ौफ़ नहीं करेगा और इस सबब से उसको परमार्थ का लाभ नहीं मिल सकेगा ।

२२-यहाँ लोभ से मतलब यह है कि अपने वाजिबी हक़ से ज़्यादा हासिल करने की चाह उठा कर, जिस तरह वह चाह पूरी होवे, उसके निमित्त जतन करे, चाहे उसमें जीवों को दुख और नुक़सान पहुँचे ।

२३-लोभी पुरुष सच्चे परमार्थ और सच्चे प्रेमियों की हमेशा निंदा करेगा और आप अपने जीव के सच्चे कल्यान के निमित्त कुछ ख़र्च नहीं कर सकेगा, बल्कि सच्चे प्रेमियों को ख़र्च करते हुए देख कर, अपने मन में बहुत

जलेगा और कुढ़ेगा। और उनको नादान और मूर्ख कहेगा, जिसके सबब से अपने सिर पर निंदा का भार और पाप चढ़ावेगा।

२४–राधास्वामी मत के अभ्यासियों को लोभ अंग से ज़रूर बचते रहना चाहिये, बल्कि अपने हक़ और वाजिबी आमदनी से मालिक के प्रसन्न करने और जीवों के उपकार के निमित्त कुछ ख़र्च करना चाहिये। तब कुछ परमार्थ मिलेगा यानी मालिक के चरनों का प्रेम हिरदे में पैदा होगा।

५–मोह का अंग

२५–यह अंग भी लोभ अंग के मुवाफ़िक़ बहुत ओछा और परमार्थ के वास्ते नाक़िस है, और शुरूआत इसकी सहसदलकँवल और उसके नीचे से है। वाजिबी और मुनासिब तौर का मोह इस क़दर दुखदाई नहीं है। पर ज़्यादती इसकी बहुत नुक़सान और तकलीफ़ पैदा करती है। और ऐसा आदमी परमार्थ में बहुत कम लग सकता है, क्योंकि वह हमेशा उन लोगों का जिनमें उसको मुहब्बत और मोह विशेष है आधीन रहेगा। और जैसे वह उसको चलावेंगे, वैसी चाल चलेगा। फिर उससे सतगुरु और मालिक का बचन, जो कि उसके मोहब्बत वालों के मन के ख़िलाफ़ होगा, नहीं माना जावेगा, और न मालिक के चरनों में उससे गहरी प्रीत करी जावेगी।

२६–मोही आदमी दुनियादारों और कुटुम्बी और बिरादरी के डर और लज्जा से सतसंग भी नहीं कर सकेगा, और इस सबब से उसकी आँख भीं नहीं खुलेगी, और बुद्धि भी मलीन यानी संसारी रही आवेगा, और परमार्थ की बड़ाई और ज़रूरत उसके मन में नहीं समावेगी। बल्कि सच्चे परमार्थ और परमार्थियों की निंदा करने को तैयार होगा, और जो भक्ति के अंगों में सच्चे परमार्थी और प्रेमी जन बरतेंगे, उनको देख २ करके वह अपने मन में जलता और कुढ़ता रहेगा। इस सबब से सच्चा परमार्थ इस को कभी हासिल न होगा।

ईर्षा और विरोध का अंग

२७—सिवाय ऊपर के लिखे हुए अंगों के दो अंग और भी हैं कि वह अहंकार और क्रोध से क़रीब २ मिले हुये हैं। यानी जिसके मन में अहंकार ज़्यादा है, उसको दूसरे की मान और बड़ाई देख कर ज़रूर ईर्षा आवेगी। और जो कोई विशेष अहंकारी और क्रोधी है, वह दूसरे से, जो वक़्त क्रोध या मान बड़ाई के मुआमले में थोड़ा बहुत उसका मुक़ाबला करेगा, बिरोध यानी दुश्मनी करने लगेगा। इस तरह यह दोनों अंग, ईर्ष्या और विरोध के, उन पाँचों अंगों से थोड़े बहुत मिले हुए हैं। अब इनका थोड़ा सा हाल जुदा २ लिखा जाता है,

तांकि अभ्यासी जीव इन अंगों से डरते रहें और जहाँ तक बने, इनके चक्कर में न आवें।

ईर्षा का अंग

२८—अभ्यासी के वास्ते यह अंग बहुत नुक़सान देने वाला है, क्योंकि जब ईर्षा किसी की तरफ़ से, उसकी बड़ाई देख कर, या भरम के सबब से, मन में बस जाती है, तब हमेशा उसको देख कर या उसका ज़िक्र सुन कर एक क़िस्म की जलन पैदा होती है कि वह बिरह और प्रेम अंग को थोड़ा बहुत सुखा देती है और भजन और ध्यान का रस नहीं आने देती है। और जो २ तरंगें कि ईर्षा के सबब से उस शख़्स की तरफ़ उठती हैं, वे भी विरोध की बढ़ाने वाली और भजन के रस और आनन्द से दूर डालने वाली होती हैं। यानी ऐसे ही ख़्याल उठा करते हैं कि किस तरह उस आदमी को नुक़सान या दुख पहुँचे, और उसकी निंदा सुनने में चित्त मगन होता है। और आप भी अनेक तरह से उसकी बुराई और निंदा करता है। यानी अपने ऊपर पाप पर पाप बढ़ाता है। और जो दूसरी तरफ़ से भी बराबर मुक़ाबला होता जावे, तो यह ईर्षा का अंग विरोध की सूरत पैदा करता है, यानी पूरी दुश्मनी आपस में हो जाती है। और फिर उसके बढ़ाव में और जारी रहने में दोनों का परमार्थी नुक़सान

होता है। इस वास्ते अभ्यासी परमार्थी को ईर्षा के अंग में बर्ताव करने से बहुत परहेज़ करना चाहिये। बल्कि जो किसी वक़्त अपना थोड़ा बहुत नुक़सान या हर्ज भी हो जावे तो कुछ ख़्याल न करे, और जहाँ तक बने ईर्षा को चित्त में न धसने देवे।

२९–जो किसी अपने बराबर वाले की बड़ाई या मान प्रतिष्ठा होवे तो उसको देख कर अंतर में जलन न लावे और यह समझे कि बिना मौज मालिक के कोई बड़ा या छोटा नहीं हो सकता। फिर जो कोई उसके साथ ईर्षा करेगा, वह मालिक के हुक्म के साथ बर-ख़िलाफ़ी करेगा, और हुक्म अदूली के पाप का भागी होगा। इस वास्ते परमार्थी को मुनासिब है कि अपने काम का फ़िक्र करे और दूसरों के काम के झमेले में न पड़े, और अपने चित्त में सदा दीनता रक्खे, और जिसको मालिक बड़ाई देवे, उसके सामने जो अपना काम पड़े, ज़रूर दस्तूर के मुवाफ़िक़ दीन होवे और वहाँ अहंकार न करे, नहीं तो अपना नुक़सान करेगा।

विरोध का अंग

३०–यह अंग अकसर क्रोध या ईर्षा के पीछे पैदा होता है और कभी भरम करके भी मन में धस जाता है और फिर बढ़ता चला जाता है। यह अंग भी दूसरे की

तरफ़ से अंतर में जलन और गुस्सा पैदा करने वाला है और जब, और जिस घट में, यह अंग प्रकट होगा, भक्ति और दीनता और विरह और प्रेम को सुखा देगा।

३१–यह संसारी जीवों का हाल है कि जिस किसी से किसी बात पर नाराज़ हो जावें तो उसके विरोधी हो जावें। पर सच्चे परमार्थी जीवों को हुक्म है कि जहाँ तक मुनासिब होवे, औरों के क़सूरों को मुआफ़ करें और उनकी बुराई और ऐब को याद न लावें, यानी अपने मन में धसने न देवें, क्योंकि इसमें उनके परमार्थ का नुक़सान है।

३२–सच्चे मालिक को यह अंग जैसे ईर्षा और बिरोध और क्रोध वग़ैरा निहायत ना-पसंद हैं। और जिस घट में इनका थाना है, वहाँ उसका नूर प्रकट नहीं हो सकता। सच्चा मालिक दीनता और प्रेम को पसंद करता है। सो सच्चे परमार्थी को चाहिये कि अंतर में अपने इन्हीं अंगों का, जहाँ तक बने, बर्ताव रक्खे और ईर्षा और विरोध और क्रोध को न आने देवे। लेकिन बाहर बन्दोबस्त के वास्ते और ख़ास कर संसारी लोगों से व्यवहार और बर्ताव के वास्ते, जैसा जहाँ मुनासिब होवे, ज़ाहिरी तौर पर बर्ताव करे। पर अपने मन में किसी से असली विरोध या ईर्षा को ठहरने न देवे, और जिस क़दर जल्दी हो सके इन ख़्यालों

को हटा कर सफ़ाई कर लेवे, ताकि अभ्यास और सतसंग में बहुत विघ्न न डालने पावें।

मन और इन्द्रियों का वर्णन

३३–यह मन ज़ाहिरा इन्द्रियों का आधीन मालूम होता है, यानी जिस तरफ़ इन्द्रियाँ जाती हैं, मन भी उसी तरफ़ जाता है। पर असल में इन्द्रियों की चाल मन के हाल पर मौक़ूफ़ है। यानी जो मन भोगी और विलासी है, वह हमेशा इन्द्रियों के संग चंचल रहेगा, और उसकी इन्द्रियाँ भी, भोगों में भरमती रहेंगी। पर जो मन परमार्थी है, वह आप भी किसी क़द्र निश्चल रहता है और उसकी इन्द्रियाँ भी मुनासिब तौर पर और मुनासिब तरफ़ जाती हैं। अंधाधुंध चाल उनकी नहीं होती है।

३४–इस मन की अजीब बनावट है कि अपनी मानन यानी समझ के मुवाफ़िक़ जल्द दुखी और सुखी हो जाता है और असली दुख-सुख का ख़्याल बहुत कम करता है। इस वास्ते इस बात की बड़ी ज़रूरत है कि परमार्थी जीव पहिले कोई दिन सतगुरु या साध गुरु या सच्चे अभ्यासी सतसंगी का सतसंग करें और बचन चित्त देकर होशियारी के साथ सुने और उनका मनन भी करे। और जो अपने फ़ायदे की बातें होवें उनको फ़ौरन ग्रहण करता जावे। और जो नुक़सान की बातें होवें, उनको छोड़ता जावे। तो कुछ

अरसे में ऐसे परमार्थी की समझ और विचार बदल जावेगा, यानी उसकी समझ और हालत परमार्थी होती जावेगी। और संसारी अंग और ख़वास जो कि थोड़े बहुत पशुओं के मुवाफ़िक़ होते हैं, दूर होते जावेंगे। और तब इस मन की मानन और समझ बदलेगी यानी दुनियादारों के मुवाफ़िक़ इस का व्यवहार और बर्ताव नहीं रहेगा। बल्कि सच्चे भक्त और प्रेमी जनों की समझ और चाल इसमें आती जावेगी।

३५–मालूम होवे कि परमार्थियों की चाल दुनियादारों की चाल के बर-ख़िलाफ़ यानी उलटी होती है। दुनियादार धन, स्त्री, पुत्र और नामवरी के वास्ते जान देने को तैयार होते हैं, और परमार्थी अपने सच्चे मालिक के चरनों पर इन सब को, बल्कि अपने तन मन और जान को, वारने को तैयार रहता है।

३६–उसकी नज़र में मालिक की प्रसन्नता और उसके नूर के दर्शन के बराबर कोई चीज़ रचना भर में नहीं ठहरती है। और दुनियादार, धन और नामवरी की, सबसे ज़्यादा क़द्र करते हैं और मालिक की तरफ़ से बे-ख़बर रहते हैं।

३७–परमार्थी हर एक के साथ दीनता और प्यार के साथ बर्तना चाहता है, पर दुनियादार अहंकार और मान और बे-परवाही की नज़र से हर एक को देखता है।

३८–परमार्थी को दुनिया के सामान सब नाशमान और ना-चीज़ और दुखदाई नज़र आते हैं और संसारी इन चीज़ों की बड़ी क़दर करता है और उनको बड़ी न्यामत, और अपने वास्ते निहायत सुखदाई, देखता है। इस सबब से परमार्थी और संसारी जीवों का आपस में मेल नहीं हो सकता, क्योंकि उनके मन और समझ की हालत जुदी २ है।

३९–दुनियादारों की मानन और समझ ग़लत है। और यह ग़लती उनको अख़ीर वक़्त पर या निहायत सख़्त तकलीफ़ के वक़्त पर नज़र आती है कि उस वक़्त कोई शख़्स या सामान जिसका उन्होंने बड़ा भरोसा बाँधा था, उनकी मदद नहीं कर सकता, बल्कि उनको छोड़ कर सब जुदा हो जाते हैं। और परमार्थी ने जो समझ धारन की है, उसका फ़ायदा उसको हर वक़्त और तकलीफ़ या अख़ीर के वक़्त बहुत ज़्यादा मालूम होता है। यानी जिस सच्चे मालिक को उसने अपना सच्चा माता और पिता मान कर पकड़ा है और उसकी याद अंतर में बढ़ाई है, वह मालिक-दयाल हर वक़्त उसकी ख़बरगीरी करता है और तकलीफ़ के वक़्त ज़रूर मौजूद होकर और अपने दर्शन देकर और कुल्ल तकलीफ़ को फ़ौरन दूर करके महा सुख और आनन्द अपने बच्चे को देता है।

४०–अब समझना चाहिये कि हर एक परमार्थी जीव

को परमार्थियों की चाल और समझ धारन करके और चेत कर सतसंग और अभ्यास करके अपने मन और इन्द्रियों की हालत, जिस क़दर जल्दी हो सके, बदलना चाहिये कि जिससे हमेशा आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता रहे । क्योंकि जब तक यह संसारी या मिलौनी के अंग में थोड़ा बहुत बर्ताव रक्खेगा, तब तक सतसंग में भी कभी सुखी और कभी दुखी होता रहेगा । और जब संसारी ख़्वास और चालें मन से निकल जावेंगी, तब दुख भी इसके पास नहीं आवेगा । और जो आवेगा तो यह उसको जल्द अपनी समझ और विचार की मदद से दूर कर देगा ।

४१–ख़ुलासा यह है कि जिस मन में दुनिया और दुनियादार और माया के पदार्थों का भाव ज़बर है और दुनियादारों के स्वभाव और चाल के मुवाफ़िक़ उसका बर्ताव और व्यवहार है, वही मन संसारी है । और जिस मन में सच्चे मालिक और सतगुरु और सतसंग और सच्चे मालिक के नाम यानी शब्द और प्रेम का भाव ज़बर है, और भक्तों और प्रेमियों की चाल के मुवाफ़िक़ उसका व्यवहार और बर्ताव जारी है, वही परमार्थी मन है ।

४२–ऐसे परमार्थी मन की चाल, संसारी मन की चाल से जुदी होगी । और इस वास्ते उसकी इन्द्रियों की

चाल और रीत भी संसारी जीवों की इन्द्रियों से जुदी होगी। यानी परमार्थी की इन्द्रियाँ चंचल नहीं होवेंगी और संसारी जीव और माया के पदार्थ और संसारी बातों में उनकी तवज्जह बे-ज़रूरत और बग़ैर किसी ख़ास काम के नहीं जावेगी।

४३–जो परमार्थी अभ्यासी इस तरह की सम्हाल अपने मन और इन्द्रियों की रक्खेगा, उसको बहुत कम माया और भरम और काल और करम का झटका लगेगा, और अपने अंतर में थोड़ा बहुत रस और आनन्द अभ्यास का लेता रहेगा, और सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया और मेहर के भी परचे उसको अन्तर और बाहर बराबर मिलते जावेंगे, और उसके सुरत और मन को परमार्थ में पुष्ट और मज़बूत करते जावेंगे।

बचन ५

राधास्वामी मत में जो गुरु-भक्ति जारी है, उस पर तान मारने वालों को जवाब, और वर्णन इस बात का कि सच्चे परमार्थ और सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिये अपने समय के भेदी और अभ्यासी, मनुष्य-स्वरूप गुरु से

मिलना और उनके साथ दीनता और भाव और प्यार करना बहुत ज़रूर है।

१–राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ सुरत यानी रूह कुल्ल मालिक, सत्त पुरुष, राधास्वामी की अंस है और उन्हीं के चरनों से निकस कर और नीचे उतर कर पिंड में, नेत्रों के मुक़ाम पर, बैठ कर अपनी देह और दुनिया की कार्रवाई करती है। और रास्ते में जितने मुक़ाम हैं, उन हर एक मुक़ाम पर ठहरती हुई उतरी है। इसी तौर पर जब संत सतगुरु की दया से उलटने की जुगती का भेद लेकर उसका अभ्यास करेगी तब हर एक मुक़ाम पर चढ़ती हुई, और वहाँ कुछ दिन ठहर कर, सैर करती हुई, कुछ अरसे में अपने निज स्थान पर जा पहुँचेगी।

२–हर एक स्थान का जो रूप है, वह आदि में सुरत ने ही वक़्त उतार के धारन किया और इसी तरह लौटते वक़्त वही रूप उसका हर एक स्थान पर होता जावेगा।

३–उतार के वक़्त जो रूप कि सुरत ने जिस मुक़ाम पर कि धारण किया, वह रूप नीचे की रचना का करता और मालिक है।

४–उलटते वक़्त जब तक कि सुरत अपने से ऊपर के स्थान के रूप में प्यार और भाव लाकर और उससे मिलने

की चाह ज़बर उठा कर, जो जुगत कि संतों ने दया करके बताई है, उसका अभ्यास रोज़मर्रा शौक़ के साथ न करेगी, तब तक उस स्थान और स्वरूप की प्राप्ति न होगी, यानी वह मुक़ाम फ़तह न होगा।

५-इसी तरह, हर एक स्थान की भावना करके रास्ता चलेगा, और धुर मुक़ाम यानी राधास्वामी के चरनों में पहुँचने का इरादा पक्का और सच्चा करके, हर एक रास्ते की मंज़िल को तै करती हुई, सुरत चलेगी और हर स्थान पर अपना असली रूप धारन करती हुई जावेगी।

६-जो कि हर एक स्थान का धनी यानी मालिक नीचे की रचना का करता और मालिक है, इस वास्ते इसी क़िस्म का भाव अपने से ऊपर के स्थान के स्वरूप में धारन करके सुरत को चलना पड़ेगा।

७-लेकिन जो कि धार आदि में राधास्वामी दयाल के चरनों से जारी होकर, हर एक स्थान पर ठहरती हुई, और रूप धर कर रचना करती हुई चली आई है और जो कि अभ्यासी सुरत को धुर मुक़ाम पर पहुँच कर अपने सच्चे माता-पिता और कुल्ल मालिक का दर्शन करना मंज़ूर है, इस वास्ते उसको मुनासिब और लाज़िम है कि बजाय इसके कि हर एक मुक़ाम के धनी को मालिक समझ कर उसमें प्यार और भाव लाकर चले, सिर्फ़ कुल्ल मालिक

राधास्वामी का ध्यान, और उन्हीं के चरनों में प्यार और भाव धर कर रास्ता तै करे। इसमें उसको पूरी मदद् और दया हर जगह मिलती जावेगी। और हर मुक़ाम पर इष्ट के बदलने की ज़रूरत न होगी क्योंकि एक से ज़्यादा स्वरूप में सच्चा और पूरा भाव और प्यार नहीं आ सकता है। और जब कि वे सब स्वरूप, रास्ते के, सिर्फ़ अपनी अपनी हद् में कार्रवाई कर सकते हैं और अपने से ऊपर के स्थान में उनका कुछ दख़ल नहीं पहुँच सकता है, तो वह पूरे और सच्चे करता और मालिक नहीं हो सकते। यह सब कार-परदाज़ यानी कारिन्दे हैं, और राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक। और उनका हुकम सब जगह जारी है। इस वास्ते उन्हीं का इष्ट मज़बूत बाँध कर और उन्हीं के चरनों में पूरा प्यार और भाव लाकर चलना चाहिये, तो रास्ता सुखाला और आसानी से तै होगा, और किसी क़िस्म का ख़तरा और विघ्न रास्ते में वाक़े न होगा।

८—यहाँ पर इस बात का जताना बहुत ज़रूर है कि जो लोग सत्त पुरुष राधास्वामी से बे-ख़बर रहे, और जिनको सतगुरु, भेदी धुर धाम के, नहीं मिले, उन्होंने रास्ते में धोखा खाया। यानी जिस मुक़ाम तक जिसकी रसाई हुई, वह उसी मुक़ाम के धनी को मालिक और करता समझ कर वहीं ठहर गये, और आगे चलने का रास्ता उनका बंद हो गया। और इसी सबब से अनेक मत दुनिया में जारी

हो गये। पर जिन को कि संत सतगुरु भाग से मिले, उनको धुर मुक़ाम यानी राधास्वामी पद का भेद मिला। और वही रास्ते के सब मुक़ामों को तै करते हुए, सच्चे मालिक के चरनों में पहुँचे। और जिस ख़तरे में कि और लोग जिनको धुर मुक़ाम का भेद नहीं मिला, पड़ कर धोखा खा गये, वे उस ख़तरे से बच गये।

६—मालिक के चरनों में प्यार और भाव भी कई तरह पर करते हैं। बाज़ों ने (१) पुत्र-भाव यानी मालिक को बाल स्वरूप मान कर प्रीत करी। और किसी किसी ने (२) सखा-भाव यानी मित्र-भाव माना, और कोई (३) स्वामी और सेवक यानी दास-भाव क़ायम करते हैं, और बहुत से (४) पति और स्त्री-भाव मानने हैं, और बिरले (५) पिता पुत्र-भाव मान कर प्रीत करते हैं। हरचंद कि सब का मतलब मालिक के चरनों में प्रीत पैदा करने और बढ़ाने का है, पर इन सब में पति और स्त्री और पिता-पुत्र भाव बहुत उम्दा है, बल्कि पिता पुत्र-भाव सब में बेहतर और सुखाला और निर्मल और निर्विघ्न है। और ख़ास कर इस ज़माने में कि जीव निहायत निबल और कमज़ोर हो गया है और काल के झकोले और माया का लुभाव अनेक रीत से ज़बर हो रहा है, पिता-पुत्र भाव में सहज जीव का गुज़ारा यानी उद्धार मुमकिन है। इस वास्ते मुनासिब मालूम होता है कि हर

एक सच्चा परमार्थी अभ्यासी राधास्वामी दयाल के चरनों में माता और पिता भाव धारण करके, तब अपनी प्रीत और प्रतीत बढ़ावे, और संतों से जुक्ति लेकर नित्त उसका अभ्यास विरह और प्रेम अंग के साथ करे, तो आहिस्ता आहिस्ता एक दिन उसका कारज बन जावेगा। और सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल की दया और मेहर और रक्षा के परचे जीते जी अंतर और बाहर देख कर दिन २ उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और अपने सच्चे और पूरे उद्धार की निस्बत कोई शक उसके दिल में बाकी न रहेगा।

१०–ऊपर के लिखे हुए हाल से मालूम होगा कि राधास्वामी मत में जो अभ्यास मन और सुरत के समेटने और चढ़ाने का मुक़र्रर है, उसमें इष्ट और ध्यान, सिर्फ़ एक सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का धारन किया जाता है, और उन्हीं के चरनों में प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाई जाती है। और जो कि हर एक स्थान पर उनके चरन मौजूद हैं, सो उन्हीं का ध्यान करता हुआ और शब्द की धुन सुनता हुआ अभ्यासी रास्ता तै करता है।

११–अब ख्याल करो कि अभ्यासी या उलटने वाली सुरत, हर एक स्थान पर, अपने ही स्वरूप को सम्हालती हुई, यानी धारन करती हुई, चली जाती है और राधास्वामी

दयाल के चरनों की धार अथवा धुन की डोरी पकड़ कर, रास्ता सुखाला तै करती है, और किसी ग़ैर की पूजा और ध्यान का, सिवाय कुल्ल मालिक के, इस मत के अभ्यास में दख़ल नहीं है। जब कुल स्थान तै हो गये, तब सुरत अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के सम्मुख पहुँच कर, दर्शन का आनन्द और बिलास करती है। और उसको ताक़त हासिल हो जाती है कि जब चाहे जब चरनों में मिल जावे और जब चाहे जब अलेहदा हो कर सम्मुख दर्शन का रस लेवे।

१२–चरन से मतलब यह है कि सुरत यानी चैतन्य की धार, जो ऊँचे देश से उतर कर आई है और उसी ही धार का सिलसिला धुर पद से लगा हुआ है, वही उस कुल्ल मालिक का चरन है। यानी उसकी धार दूर से दूर तक फैली और पसरी हुई है। और चैतन्य शक्ति उसी के वसीले से हर जगह पहुँचती है, और दया और मेहर की धार भी उसी धार के साथ रवाँ होती है।

१३–अब ख़्याल करो कि जो संत सतगुरु की रसाई, यानी पहुँच, ऊँचे से ऊँचे स्थान तक शब्द की धार के साथ है, उनमें और उस धार में और फिर उस धार के भंडार में किसी तरह का फ़र्क़ और भेद नहीं रहा। हर एक स्थान का स्वरूप, उनका स्वरूप हुआ, और वही स्वरूप असल में सब सुरतों के स्वरूप हैं जो वक़्त उतार के राधास्वामी

दयाल के चरनों से हर एक सुरत धारन करती हुई चली आई है। फिर ऐसे संत सतगुरु की पूजा और उनके चरनों में भाव और प्यार करना ऐसे है जैसे अपने स्वरूपों में प्यार और भाव और कुल्ल मालिक की पूजा और उसके चरनों में प्यार और भाव करना।

१४–जिनकी दृष्टि स्थूल और मोटी है, और अंतरी भेद की उनको ख़बर नहीं है, वे ऐसा ख़्याल करेंगे कि ऐसे संत सतगुरु की पूजा आदमी की पूजा है, और ऐसा कहेंगे कि यह पूजा और प्यार और भाव मालिक की पूजा और प्यार और भाव के मुक़ाबिले में किसी तरह दुरुस्त और सही नहीं हो सकती। पर इस बात के कहने से उन लोगों की निहायत दरजे की बे-ख़बरी और बिना सोच और बिचार के ओछी समझ ज़ाहिर होती है, जैसा कि नीचे के लिखे हुए बयान से मालूम होगा।

१५–इस लोक की रचना में सब में उत्तम और श्रेष्ठ मनुष्य-शरीर है, यानी कुल्ल जानदारों का हाकिम और अफ़सर है और सब चीज़ पर थोड़ा या बहुत उसका हुक्म जारी है, और सब जानदारों और चीज़ों से वह जैसा २ मुनासिब समझता है काम लेता है, और कुल्ल इल्म और अक़्ल और हुनर और फ़न और कारीगरी और चालाकी और बंदोबस्त की तजवीज़ें उसी मनुष्य-स्वरूप से ज़ाहिर हुए।

१६–जो ईश्वर और परमेश्वर या मालिक या कोई उसकी अंस या कला इस लोक में वास्ते सिखाने या जारी करने नई और फ़ायदेमन्द चाल या इल्म या अक़्ल के, प्रकट हुई, उसने भी वही उत्तम और श्रेष्ठ मनुष्य-स्वरूप धारन करके कार्रवाई करी। इसी तरह जो कोई भारी विद्यावान या नीति के बनाने और चलाने वाले या हकीम या वैद्य या डाक्टर या और कोई हुनर और कारीगरी वाले ज़ाहिर हुए, वह भी मनुष्य-स्वरूप में प्रकट हुए, और उसी स्वरूप से सब चालें चलाई और लोगों को विद्या और बुद्धि और हुनर और कारीगरी की बातें सिखलाई।

१७–इसी तरह संत सतगुरु ने अपने साथ, और मालिक के चरनों में प्यार और भाव करने की विधि समझाई, और मालिक का पता और भेद भी उन्होंने, यानी संत सतगुरू ने, मनुष्य स्वरूप धर कर प्रकट किया। और यह संत सतगुरु स्वतः संत थे, यानी आप ही आप उस ऊँचे स्थान से आये और बिना किसी से सीखे हुए या सुने हुए असली भेद सच्चे मालिक का उन्होंने प्रकट किया। इसी तरह स्वतः जोगेश्वरों ने ब्रह्म-पारब्रह्म पद का भेद और जुगत उसके प्राप्ति की, प्रकट करी और उनके बचन और बानी को सब कोई बड़ा और ईश्वर का हुक्म मानते हैं।

१८–बल्कि इसी तरह नई २ बात विद्या और बुद्धि

की भी आदि में, और वक़्त २ पर, किसी न किसी मनुष्य ने, बिना किसी से सीखे हुए ज़ाहिर करी। और सब लोग इस बात के क़ायल हैं कि वे मनुष्य उन नई बातों और चालों के पैदा करने वाले हुए। और उनको आज तक सब कोई बड़ा मान कर उनकी ताज़ीम और अदब करते हैं, और उनकी बानी और बचन को सनद मानते हैं, और उसके मुवाफ़िक़ औरों के बचन और बानी की तौल और जाँच करते हैं।

१६–जिस क़दर कि आसमानी किताबें हैं जैसे कि चारों वेद और सरावग़ियों का आदि पुरान और मुसलमानों का क़ुरान और ईसाइयों की अंजील, सब मनुष्य स्वरूप ऋषीश्वरों या मुनीश्वरों या आचार्यों या पैग़म्बरों से प्रकट हुए हैं और जो कि वह परमेश्वर के कलाम यानी वाक्य मान जाते हैं, तो ज़ाहिर है कि परमेश्वर ने अपने बचन मनुष्य द्वारे कहे और प्रकट किये और उन ऋषीश्वरों और पैग़म्बरों को, जो कि मनुष्य स्वरूप थे, परमेश्वर के ख़ास मेली या मुसाहब या उसके भेद की ख़बर देने वाले मानते हैं, और उनकी बानी और बचन को ख़ास मालिक का कलाम समझते हैं और उन्हीं के वसीले से अपना उद्धार और मालिक के दरबार में पहुँचने का यक़ीन करते हैं, और उनका दरजा मालिक के दरजे से दूसरा मान कर उनकी ताज़ीम और अदब और उनके चरनों में भाव और

प्यार थोड़ा बहुत मालिक ही के मुवाफ़िक़ करते हैं।

२०–यह दस्तूर जो ऊपर लिखा गया, कुल्ल मज़हबों में जारी है, यानी जो लोग कि मालिक का औतार स्वरूप मानते हैं, या उसके भेद का हासिल होना ऋषीश्वर या आचार्य या पैग़म्बरों की मार्फ़त मानते हैं, यह दोनों फ़िरक़े मनुष्य स्वरूप की पूजा या उसी स्वरूप में भाव और प्यार कर रहे हैं। इन दोनों गिरोह से खारिज कोई नहीं है। सब लोग चाहे किसी मत में होवें, इन्हीं दोनों फ़िरक़ों में से हैं, सिवाय नास्तिकों के, कि वे मालिक के क़ायल नहीं हैं। पर वे भी किसी न किसी मनुष्य-स्वरूप आचार्य के, जिसने उनकी किताबें बनाईं और नास्तिक मत जारी किया, क़ायल हैं, और उसको अपने से बड़ा और अपना पेशवा मान कर उसके बचन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करते हैं।

२१–जो लोग कि औतार स्वरूप या देवताओं की मूरतें या तसवीरें बना कर पूजते हैं या उनकी ताज़ीम करते हैं, वह सब सूरतें मनुष्य स्वरूप की हैं।

२२–इसी तरह से जो कोई किसी महात्मा या बुज़ुर्ग के निशान, या उनकी कोई बरती हुई चीज़, या उनके कलाम और बचन, या उनकी समाध या तुरबत या मज़ार की पूजा, भेंट या ताज़ीम करते हैं, या उनकी कोई चीज़

वास्ते अपनी रक्षा के, इस्तेमाल में लाते हैं, वह भी किसी मनुष्य स्वरूप की परशादी या निशान या बचन है, जैसे गुरु और महात्माओं की खड़ाऊँ या जूता या पलंग या कोई कपड़ा या बर्तन या त्रिशूल या सूली का निशान या छोटी तसवीर, या मुसलमानों में कलमा या कोई आयत क़ुरान की, हिन्दुओं में कोई मंत्र या जंत्र सोने, चाँदी या ताँबे या भोजपत्र या काग़ज़ वग़ैरा पर लिख गले में डालते हैं, या बाजुओं पर बधाँते हैं या अँगूठी में रखते हैं।

२३–ऊपर के लिखे हुए हाल से साफ़ ज़ाहिर है कि क्या परमार्थ में और क्या स्वार्थ में, जितनी बातें या चीज़ें हैं, सब मनुष्य स्वरूप से प्रकट हुईं, और सब जगह मनुष्य स्वरूप का ही भाव और प्यार और पूजा और अदब और ताज़ीम जारी है, और मनुष्य स्वरूप ही के बानी और बचन और क़ायदे बाँधे हुये पर अमल-दरामद और कार्रवाई हर मुआमले में हो रही है।

२४–और जिस वक़्त में कि वे महात्मा और बुज़ुर्ग, जिनकी ऐसी महिमा है, मौजूद होंगे, उस वक़्त में उनके संगी और मानने वाले उनके साथ ऐसा ही, बल्कि इससे ज़्यादा, बरताव करते रहे होंगे, जैसा कि अब उनकी नक़ल यानी मूर्ति और निशानों से कर रहे हैं।

२५–फिर जो राधास्वामी मत में परम पुरुष पूरन धनी राधास्वामी दयाल की (जो संत रूप धर कर प्रगट हुए और जिन्होंने दया करके निज भेद सच्चे मालिक यानी अपने निज रूप का और सहज जुगत उसकी प्राप्ति की समझाई) जिस क़दर भक्ति और भाव और प्यार और अदब और ताज़ीम की गई या की जाती है या करी जावे, वह उनके दरजे और दया के मुक़ाबिले में थोड़ी से थोड़ी और कम से कम है।

२६–जो लोग कि ऐसी भक्ति और भाव और प्यार को देख कर ख़्याल करते हैं या तान मारते हैं कि इस मत में मनुष्य-गुरु की पूजा है, वे किस क़दर ग़ल्ती और ग़फ़लत और नादानी के घेर में पड़े हुए हैं ? और कैसे बे सोचे और बे समझे और बे विचारे बातें बना कर हँसी उड़ाते हैं ?

२७–इस समय में कितनी ही संगत और सभायें इस क़िस्म की जारी हैं, जो गुरु स्वरूप और मालिक के मनुष्य स्वरूप को अपनी ओछी बुद्धि और समझ के मुवाफ़िक़ नहीं मानते हैं और न उससे मदद लेने की कुछ ज़रूरत समझते हैं। फिर ऐसे लोगों को सच्चा परमार्थ, जिसकी प्राप्ति निज घट के मानसी और रूहानी अभ्यास के पूरे होने पर मुनहसर है, कैसे हासिल हो सकता है ? विद्या पढ़ कर बुद्धि की मदद से पोथियों का पाठ कर लें

और स्तुति और भजन वग़ैरा गा लेवें, मगर भेद के ग्रन्थों से भेद और जुगती का दरियाफ़्त करना और उसके मुवाफ़िक़ अपने अंतर में अभ्यास और कार्रवाई करके रस और आनन्द लेना, बग़ैर मदद भेदी और अभ्यासी गुरु के, हरगिज़२ मुमकिन नहीं है। यही सबब है कि विद्यावान और अनपढ़ और कर्मी-जीवों की हालत कभी नहीं बदलती, चाहे वे सालहा-साल और जुगान-जुग पोथी पढ़ने और पढ़ाने और भजन और स्तुति गाने और सुनने और मूर्ति पूजा और तीर्थ-व्रत का अभ्यास करते रहें, क्योंकि उनकी सुरत यानी जीवात्मा का घाट उन कामों से नहीं बदलता है। बल्कि दिन २ संसार में लिपट कर धन और मान और बड़ाई की आसा और तृष्णा बढ़ती जाती है, और सच्चे मालिक के चरनों का प्रेम या उसके मिलने की चाह एक ज़र्रा भी उनके मन में पैदा नहीं होती।

२८–विद्या पढ़ कर जो कोई चाहे कि इल्म हिसाब और नजूम, यानी ज्योतिष और इल्म-ए-कीमिया और इल्म-ए-पैमाइश और बहुत से इल्मों की किताबें पढ़ कर सीख लेवे, तो बग़ैर मदद उस्ताद के वह किताबें हरगिज़ समझ में नहीं आवेंगी। इसी तरह कोई विद्यावान परमार्थी भेद और अभ्यास की किताबें पढ़ कर जो समझना चाहे और उनके मुवाफ़िक़ घट में अभ्यास करने का इरादा करे, वह बग़ैर भेदी और अभ्यासी गुरु के हरगिज़ २ नहीं कर सकता है।

२६–इससे साफ़ ज़ाहिर है कि जो लोग भेदी और अभ्यासी गुरु का खोज नहीं करते, और जो वे मिलें तो अपनी विद्या और बुद्धि के अहंकार में उनसे कुछ मदद लेना या दरियाफ़्त करना नहीं चाहते, और न उनको अपने से बड़ा मान कर उनके सामने दीन-अधीन होना चाहते हैं, और जिनका परमार्थ सिर्फ़ इख़लाक़ी और मालिक की सिफ़त यानी कर्म और धर्म और स्तुति की पोथियों के पढ़ने और पढ़ाने पर मुनहसर है, या बाहरमुखी कर्म के शास्त्र या किताबें पढ़ कर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करते या कराते हैं, और जो पिछली टेक में बंधे हुए हैं, यानी पुराने, गुज़रे हुए महात्माओं को या औतारों या बुज़ुर्गों या देवताओं को मानते हैं, और अपने वक़्त के भेदी और अभ्यासी गुरू और महात्मा का खोज नहीं करते, और न उन से किसी क़िस्म की मदद लेने की ज़रूरत समझते हैं--इस क़िस्म के सब जीव कर्मी और शरई हैं, और सच्चे परमार्थ से, जिससे जीव का सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ति हासिल होना मुमकिन है, बिलकुल खाली हैं। और जब तक ऐसी हालत उन की रहेगी, यानी अपने वक़्त के भेदी और अभ्यासी गुरु से मिल कर और जुगत दरियाफ़्त करके अभ्यास नहीं करेंगे, तब तक वे सच्चे परमार्थ से ख़ाली रहेंगे, और उनका जनम-मरन और देह सम्बन्धी दुख-सुख भोगने का चक्कर कभी नहीं छूटेगा।

यानी शुभ-अशुभ कर्मों के अनुसार ऊँच-नीच देश और योनि में दुख-सुख भोगते रहेंगे।

अर्थ शब्द नम्बर २३, बचन ४१, पोथी सार बचन छंदबंद

१-गूंगे ने गुड़ खाइया। वह कैसे कहे बनाय।

अर्थ

जिसने कि अपने घट में शब्द का गहरा रस पाया, वह उसको क्योंकर बयान कर सकता है? उसका हाल वही होगा, जैसे कि गूंगे का, जो गुड़ खा कर उसके स्वाद के बयान करने से लाचार है। और यह कि जिस किसी को गहिरा रस अंतर में आया, वही उसके प्रकट करने में आम लोगों के सामने गूंगा हो गया।

२-बहरे ने धुन पाइया। वह क्योंकर कहे सुनाय।

अर्थ

जिसने कि दुनिया की तरफ़ से अपने कान बन्द किये, उसी को अंतर में शब्द खुला। फिर वह उस शब्द और आनन्द के भेद को आम लोगों को कैसे जतावे या सुनावे?

३—अंधे मोती पो लिया। वह किसे दिखावन जाय।

अर्थ

जिसने कि अपनी नज़र दुनिया की तरफ़ से खींच ली यानो आँखें बन्द् कर लीं, उसी ने अपनी सुरत की धार को दसवें द्वार में पहुंचाया, यानी मोती पो लिया। फिर वह इस कैफ़ियत को अवाम को कैसे दिखा सकता है ?

४—लूले ने नभ थामिया। यह अचरज कहा न जाय।

अर्थ

जो मन कि दुनिया में दौड़ने से रह गया यानी जिसने चंचलता छोड़ दी, उसी ने चढ़ कर नभ यानी आकाश को थाम लिया और यही अचरज की बात है।

५—पिंगला परवत चढ़ गया। कोइ साधू जाने ताहि।

अर्थ

जो मन कि निश्चल हो गया, वही पिंगला है, और वही सतगुरु की दया से सुमेर पर्वत, यानी त्रिकुटी, पर चढ़ गया। इस हाल को कोई अभ्यासी यानी साधू समझता है।

६—रोगी सद जीवित रहे। बिन रोगहि मर मर जाय।

अर्थ

जो कोई मालिक के चरनों के इश्क़ यानी प्रेम का बीमार हुआ। और जिस किसी ने अपने मन को बीमार जान कर सतगुरु से उसका इलाज कराना शुरू किया, वही एक दिन अमर पद में पहुँच कर, अमर हो जावेगा। और जिस किसी को प्रेम की बीमारी नहीं लगी या जिसने अपने मन की बीमारी की ख़बर न ली यानी अपने को निर्मल और चंगा समझा, वह बारम्बार जनमेगा और मरेगा।

७—सोगी नित हर्षित रहे। बिन सोग चौरासी जाय।

अर्थ

जो अपने प्रीतम, सच्चे मालिक, के वियोग की विरह में उदास और ग़मगीन रहता है, वह दिन २ अंतर में चरन-रस पाकर मगन होता जावेगा। और जिस किसी के हिरदे में मालिक के चरनों की विरह और प्रेम नहीं है, वही मनुष्य चौरासी यौनि में भरमता रहेगा।

८—चिंता में जो नित रहे। सो मिले अचिंते आय।

अर्थ

जो कोई अपने मालिक के मिलने और अपने जीव का सच्चा उद्धार और कल्याण करने की चिंता में रहता है, वही एक दिन अचिंत पुरुष यानी सच्चे मालिक से मिल कर निचिंत हो जावेगा।

९—बैरागी भरमत फिरे। रागी मुक्ति समाय।

अर्थ

जिस किसी ने संसार से बैराग किया यानी घर-बार छोड़ कर भेष ले लिया, और मालिक के चरनों का प्रेम और प्यार उसके मन में नहीं आया, तो वह हमेशा चारों खानों में भरमता रहेगा। और जिस किसी के मन में मालिक के चरनों का राग और प्रेम समाया, वही एक दिन मुक्ति पद में पहुँच जावेगा।

१०—सतगुरु यह परचा दिया। कोई बिरले खोज कराय।

अर्थ

सतगुरु ने इस तरह से सच्चे प्रेमियों को, उनके घट में, परचे दिये। सो इस बात को सुन कर कोई बिरले जीव उसके खोज और तलाश में लगेंगे।

१२—अंतरमुख जो शब्द में । लेंगे बूझ बुझाय ।

अर्थ

और जो अपने अंतर में शब्द का अभ्यास करेंगे, वही इस कैफ़ियत को समझेंगे और अपने घट में निरख और परख कर बूझेंगे ।

१२—राधास्वामी कह दिया । तुम लेना शब्द कमाय ।

अर्थ

इस वास्ते सतगुरु राधास्वामी दयाल, सब जीवों को पुकार कर, कहते हैं कि हे भाइयों ! शब्द की कमाई करो और अपने घट में रस और आनन्द लो, और दया और मेहर के परचे देखो ।

बचन ६

राधास्वामी मत करनी का है, सिर्फ़ विद्या और बुद्धि के समझ और विचार का नहीं है

१—राधास्वामी मत करनी का है, निरी समझ-बूझ और बातों का मत नहीं है । जिस किसी को कि सच्चा

फ़िक्र अपने जीव के कल्याण का है और जनम-मरन का दुख और देह धर कर जो दुख-सुख सहना पड़ता है, उसका खोफ़ दिल में आया है, और अपने सच्चे मालिक माता-पिता की माहिमा को सुन कर, दर्शनों का सच्चा दर्द मन में पैदा हुआ है, उसी से थोड़ा बहुत अभ्यास, उस जुक्ति यानी सुरत-शब्द मार्ग का, जो वास्ते प्राप्ति सच्चे उद्धार के, राधास्वामी दयाल ने उपदेश की है, बन पड़ेगा। और उसका फ़ायदा अंतर में थोड़ा बहुत मोलूम होता जावेगा, जिससे शोक़ कमाई करने का और प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ती जावेगी।

२–जो ऐसे जीव राधास्वामी मत में शामिल होवें, उनको पहिले इन पाँच बातों का दुरुस्ती से समझ कर यक़ीन करना चाहिये।

३–पहली यह बात कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ और ऐन आनन्द और प्रेम स्वरूप हैं, और उनका धाम ऊँचे से ऊँचा है, जहाँ से कि उनकी अंस यानी धार अथवा किरनियों के वसीले से कार्रवाई कुल्ल रचना की हो रही है।

४–इसका सरासरी या ज़ाहिरा सबूत यह है कि इस देश की कुल्ल रचना और उसका पालन और ज़िन्दगी यानी ठहराव, सूरज की रोशनी और गरमी के आसरे है,

जो कि ब-निस्बत इस लोक के चैतन्य के, विशेष चैतन्य है। इसी तरह यह सूरज और उसकी रचना और उसका ठहराव दूसरे सूरज के आसरे है, जो इससे निहायत बड़ा और विशेष चैतन्य है, और जिसके गिर्द यह सूरज, मय सब अपने तारों यानी कुटुम्ब और परिवार के, घूम रहा है।

५–इस सूरज का नाम परमात्मा है। ऐसे ही परमात्मा-रूपी सूरज मय अपने सूरजों के (जो उसका कुटुम्ब और परिवार है) ब्रह्म-रूपी सूरज के गिर्द, जो त्रिलोकी नाथ है, घूम रहा है। और यह ब्रह्म-रूपी सूरज सत्तपुरुष स्वरूप निज सूरज की अंस है और उसी के आसरे उसकी कार्रवाई जारी है। और सत्तपुरुष कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के, जो सब के निज भंडार और सोत-पोत हैं, आधीन है।

६–यह हमारा सूरज और उसकी कार्रवाई इस आँख से नजर आती है। और परमात्मा-रूपी सूरज की मौजूदगी आकाशी रचना के इल्म वालों के बचन से, जिन्होंने बड़ी से बड़ी और उम्दा दूरबीन लगा कर जाँच करी है, साबित है। वह सूरज उन को दूरबीन से भी दिखलाई नहीं दिया, पर इस सूरज का उसकी तरफ़ चलना यानी उसके गिर्द घूमना अच्छी तरह से मालूम हुआ और उसके ऊपर ब्रह्म-रूपी सूरज का इशारा जोगीश्वरों ने किया है। और उसके परे के, दो स्थान सत्तपुरुष और राधास्वामी का भेद

संत और परम संतों ने खोल कर अपनी बानी और बचन में लिखा है। और वह दोनों धाम निर्मल-चैतन्य देश की हद में हैं। और ब्रह्म-रूपी सूरज ब्रह्माण्ड में है, जहाँ शुद्ध माया है। और आत्मा रूपी सूरज जो हमारा सूरज है और यह हमारा लोक, मलीन-माया के देश में है। जब कि तीन सूरज यानी आत्मा और परमात्मा और ब्रह्म स्वरूप का मौजूद होना किसी क़दर इस आँख से दीखता है, और कुछ नजूमियों और जोगीश्वरों के बचन से मालूम हुआ तो बाक़ी दो स्थानों का भेद और उनका मौजूद होना संतों के बचन के मुवाफ़िक़ मानना चाहिये। खुलासा यह कि यह रचना बराबर एक से एक बड़े की ताक़त और सम्हाल से हो रही है और ठहरी हुई है। तो जो इन सब में ऊँचे से ऊँचा और सब का आख़ीर है, वह सब का निज भंडार और कुल्ल मालिक और सर्व-समर्थ है और उसी का नाम राधास्वामी दयाल है।

७—इस वास्ते कुल्ल जीवों को, जो राधास्वामी मत में, वास्ते अपने जीव के उद्धार के, शामिल होवें, इस धुर पद राधास्वामी दयाल का निश्चय करके, और उसी धाम में पहुँचने का इरादा सच्चा और मज़बूत करके, जो जुगत सुरत-शब्द मार्ग की बताई जाती है, उसका अभ्यास प्रेम और अनुराग के साथ शुरू करना चाहिये। और जो कि और मत वाले इस धुर धाम तक नहीं पहुँचे और उन में

से कोई परमात्मा और कोई ब्रह्म तक पहुँच कर रास्ते में ठहर गये, इस वास्ते राधास्वामी मत के अभ्यासियों को, इन मतवालों की बातें सुन कर भूलना और भरमना या अपने अभ्यास में ढीले और सुस्त नहीं हो जाना चाहिये।

८–जो कि सर्व-ज्ञान और समझ-बूझ और सब तरह का रस और आनंद और सरूर, सुरत की धार के आसरे है, जो इन्द्रियों के वसीले से कुल्ल कार्रवाई पिंड में और उसके बाहर करती है, इस वास्ते जो सुरत का निज भंडार है, वह कुल्ल ज्ञान और आनन्द और प्रेम का भंडार है। और मालूम होवे कि कुल्ल रचना प्रेम के आसरे ठहरी हुई है। और प्रेम के ही वसीले से कार्रवाई कुल्ल रचना में हो रही है। यानी जहाँ और जिस काम में जिसकी थोड़ी बहुत मोहब्बत है, वह उसी जगह और उसी काम में तवज्जह और कोशिश करता है। और प्रेम से मतलब खैंच और मिलाव शक्ति से है, जिसको फ़ारसी में क़ुव्वते जाज़बा कहते हैं।

९–दूसरी यह बात कि सुरत या रूह या जीव-आत्मा राधास्वामी दयाल की अंस यानी धार है और उसका निज घर उनके चरनों में है।

१०–इस बात का सबूत ज़ाहिर है कि इस लोक में बल्कि कुल्ल रचना में दो वस्तुएँ–यानी चैतन्य और जड़–मौजूद हैं और चैतन्य ही की मदद से रचना होती है, और

उसी के संग उसका ठहराव है, और जब वह किसी पिंड को छोड़ देता है, तब उस पिंड के नाम और रूप का अभाव हो जाता है, तो कुल्ल रचना में सत्त और समर्थ वही चैतन्य यानी सुरत की धार है। जिस जगह यानी जिस पिंड में कि यह दाख़िल होती है या धार रूप होकर बीज से प्रकट होती है, वहीं कार्रवाई देह के बनाव और बढ़ाव और सम्हाल की जारी हो जाती है। और पाँचों तत्त्व और तीनों गुन जो कि कुल्ल रचना के मसाले के असली जुज़ यानी बड़े पदार्थ हैं, वहाँ हाज़िर और मौजूद हो कर और आपस में रल-मिल कर सुरत की धार की ताबेदारी में दुरुस्ती से उस कार्रवाई में मदद देते हैं। और जब सुरत की धार पिंड से खिंच कर अलेहदा हो जाती है, तब छिन-पल में देह की सूरत बदलती जाती है और थोड़े अरसे में उसका अभाव हो जाता है।

११–इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह सब रचना सुरत की धार के आसरे ठहरी हुई है, और इसी की शक्ति से प्रकट हुई, और इसके वियोग से उसका अभाव हो जाता है, तो इस अंस की ताक़त थोड़ी-बहुत वैसी ही हुई जैसी कि कुल्ल मालिक की ताक़त है। यानी जो चैतन्य कि इस लोक में और तमाम रचना में मौजूद है और सुरत यानी धार रूप होकर जुदा २ पिंड की सम्हाल कर रहा है और जिस के सबब से यहाँ और सब जगह रचना सत्त मालूम

होती है, वह उस महा चैतन्य कुल्ल मालिक की अंस है और जो जड़ पदार्थ नज़र आता है, वह माया की अंस है।

१२–तीसरी बात यह कि इस सुरत यानी जीव को अपने सच्चे माता-पिता और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सच्ची सरन लेकर कुल्ल कार्रवाई करना चाहिये, क्योंकि कुल्ल जीव यानी सुरतें राधास्वामी दयाल की अंस हैं, और अब उन्हीं के चरनों की धार से ताक़त लेकर हर एक पिंड में कार्रवाई कर रही हैं, फिर सब तरह से वह राधास्वामी दयाल की दया यानी चरनों की धार के आधीन हैं। इस वास्ते मुनासिब और लाज़िम है कि परमार्थी जीव अपनी करनी का अहंकार छोड़ कर, उनकी मौज और दया के आसरे काम करें, तो उसमें उनकी दया की भी परख आवेगी और इसका बंधन उन कामों में नहीं होगा या बहुत कम होगा और परमार्थी कार्रवाई में बहुत मदद मिलेगी और तरक्की भी जल्द होगी।

१३–इसका सबूत भी थोड़ा-बहुत इस बयान से ज़ाहिर होगा कि हर एक आदमी की देह और इंद्रियों और मन की कार्रवाई सुरत की धार के ऊपर मुनहसर यानी उसके आधीन है। यानी जब तक कि धार पिंड में न आवेगी और अंग २ में न फैलेगी, तब तक पूरी २ कार्रवाई देह की जारी न होगी। और यह धार ऊपर की धोर से जो दसवें द्वार से

आती है, मदद लेती है और दसवें द्वार को दयाल देश से मदद मिलती है। इस तरह पर कुल्ल रचना सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की दया के आसरे ठहरी हुई है और कार्रवाई कर रही है। उनके चरनों की सरन लेना कोई नई बात नहीं है, क्योंकि असल में कुल्ल रचना उनकी सरन में है।

१४—और मालूम होवे कि कार्रवाई से यहाँ मतलब रचना की सम्हाल से है, और बाक़ी जीवों की कार्रवाई अपने २ अगले-पिछले और हाल के कर्म और बासना के अनुसार होती है और जैसा २ उसका फल है, वह भोगते हैं। पर जो जीव कि सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की सरन में आये और मौज और दया के आसरे और भरोसे अभ्यास करने लगे, उनके पिछले कर्म आहिस्ता २ कटते जावेंगे, और प्रारब्ध कर्म का भोग दया से बहुत हलका हो जावेगा, और आइंदा को, जो कर्म ज़रूरी और वाजिबी राधास्वामी दयाल की मौज के आसरे करेंगे, उस में उनका बंधन नहीं होगा। इसी तरह से वे दिन २ निःकर्म होकर एक दिन धुर पद में पहुँच जावेंगे और उनका पूरा २ उद्धार हो जावेगा।

१५—चौथी बात यह कि राधास्वामी मत में जो अभ्यास, ध्वन्यात्मक नाम के सुमिरन और स्वरूप के ध्यान और शब्द के श्रवन का जारी है, उस से बेहतर

और सहज, और धुर पद में पहुँचाने वाली जुगत, और कोई, कतई नहीं है । जो कोई अपना सच्चा उद्धार चाहे, तो इसी अभ्यास को विरह और प्रेम अंग लेकर शुरू करे, तो एक दिन उसका काम बन जावेगा ।

१६–मालूम होवे कि जो सुरत यानी रूह और जान की धार है, वही शब्द और नाम की धार है । जो कोई शब्द या नाम की धुन को सुनता हुआ चलेगा, वही सुरत या शब्द की धार को पकड़ के ऊपर चढ़ सकता है । और जो कि आदि में कुल्ल मालिक के चरनों से शब्द की धार प्रकट हुई, इस वास्ते, जो कोई शब्द की डोरी पकड़ कर चलेगा, वही कुल्ल रचना के पार होकर निज धाम में प्राप्त होगा और कुल्ल मालिक का दर्शन पावेगा । सिवाय शब्द की धार के और कोई रास्ता या जुगत या कोई धार ऐसी नहीं है कि जिसको पकड़ कर जीव धुर पद में पहुँच सके, क्योंकि और जो रास्ते और धारें हैं, वह माया के मंडल से निकसी हैं और उसी में लै हो जाती हैं ।

१७–इस वास्ते हर एक सच्चे परमार्थी को चाहिये कि भेद शब्द का, और हाल स्थानों का, जो कि दरमियान धुर पद और जीव की बैठक के मुक़ाम के मुक़र्रर हुए हैं, दरियाफ़्त करके, एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्वरूप का ध्यान करता हुआ और शब्द सुनता हुआ चले । और इसी तरह सब मंज़िलें तै करता हुआ कुल्ल मालिक राधास्वामी

के चरनों में प्राप्त होवे। इस रीत से सच्चा उद्धार हासिल हो सकता है। और जितनी जुगतियाँ या तरीक़े और रास्ते हैं, वे सब माया की हद में ख़तम हो जाते हैं। इस वास्ते उनकी कमाई से पूरा उद्धार यानी सच्चा छुटकारा जनम-मरन से नहीं हो सकता है।

१८–पाँचवी बात यह है कि यह लोक और संसार हमारी सुरत का देश नहीं है, बल्कि मन और माया का देश है। इस सबब से सुरत यहाँ पर कई ख़ोल या देहियों में बैठ कर कार्रवाई करती है और कुछ अर्सा मुअइयना से, जिसको उम्र कहते हैं, ज़्यादा, नहीं ठहर सकती, और इसको पिंड में आना और उसको छोड़ कर चले जाना साफ़ नज़र आता है।

१९–निज देश सुरत का वही स्थान है जो कुल्ल मालिक का धाम है। इस वास्ते सच्चे परमार्थियों को मुनासिब है कि इस देश और इस देह में, मुवाफ़िक परदेसियों के बर्ताव रक्खें। यानी जैसे कि कोई आदमी परदेस में रह कर वहाँ के लोगों से मोहब्बत और व्यवहार पैदा करता है, और अपने आराम के लिये सब तरह का सामान भी जमा करता है, पर अपने वतन की याद और सुध नहीं भूलता है और जो असल पदार्थ हैं, उनको अपने देश में भेजता रहता है, और जब मौक़ा देश में जाने का मिलता है, तब बहुत ख़ुशी के साथ अपने वतन के

जाने को तैयार होता है और उन परदेसियों की मुहब्बत और वहाँ के सामान के छोड़ने का ज़रा भी दुख या अफ़-सोस मन में नहीं लाता है।

२०–इसी तरह से प्रेमी और भक्त जन इस दुनिया के मोह और सामान में नहीं अटकते, और ज़रूरत मात्र मोहब्बत और व्यवहार दुनियादारों के संग में रखते हैं। और मुख्य प्रीत अपनी, अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में, और जिस क़दर बन सके कमाई वहाँ जल्द पहुँचने के लिये, करते रहते हैं, और अख़ीर वक़्त पर राधास्वामी दयाल की दया से सुखाले अपने घर को रवाना होते हैं।

२१–अब जानना चाहिये कि सच्ची सरन राधास्वामी दयाल के चरनों की, किसी को, बग़ैर प्राप्ति प्रीत और प्रतीत के, हासिल नहीं हो सकती और यह प्रीत और प्रतीत कोई दिन के अभ्यास से हासिल होगी। यानी जब कि परमार्थी जीव अभ्यास करके अपने घट में संत सतगुरु के बचन की निरख और परख कर लेगा, तब उसको सच्चा विश्वास और यक़ीन, राधास्वामी दयाल के घट २ में मौजूद होने, और उनकी सरन में आये हुए जीवों पर मेहर और रक्षा करने का, आवेगा और तब ही से कारवाई उद्धार की प्रकट जारी होना, समझना चाहिये।

२२–कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी बड़े दयाल

हैं। जो जीव कि सच्चे मन से सरन में आया, उसकी सम्हाल हर तरह से, अपनी मेहर से, आप फ़रमाते हैं और जब तक कि उसको दयाल देश में नहीं पहुँचावेंगे, तब तक उसको नहीं छोड़ेंगे। इस वास्ते, जो उनकी चरन-सरन और सतसंग में आये हैं उनको अपने मन में यक़ीन रखना चाहिये कि राधास्वामी दयाल उनके जीव का कारज एक दिन ज़रूर बनावेंगे और जब तक वह निज देश में न पहुँचें, तब तक उन के अंग-संग रह कर, उनकी हर तरह से सम्हाल और रक्षा और परमार्थ की तरक़्क़ी फ़रमाते रहेंगे।

बचन ७
संग का बयान

१—आदमी के मन की चाल-ढाल, स्वभाव, समझ और ख़्याल की गढ़त और बनाव, संग के ऊपर मुनहसर है। यानी जिस को जैसा संग शुरू में ज़बर मिला, उसी मुवाफ़िक़ उसकी रहनी और समझ, स्वभाव और ख़्याल और खान-पान और पहरने और ओढ़ने की आदत और उदारता और नम्रता या सूमता और अहंकारी अंग होगा।

२—कुल्ल जीवों के मन और इंद्रियों का मुख और इनका झुकाव संसार के पदार्थ और भोग और मान-बड़ाई

की तरफ़ हो रहा है और उन्हीं में वे रस पाते हैं और उन्हीं की प्राप्ति के निमित्त उम्र भर जतन और मेहनत करते हैं। और जब किसी की ऐसी ख़्वाहिश या जतन और तदबीर के पूरे होने में, या पदार्थों के भोगने में, कोई ख़लल डाले तो आपस में फ़ौरन बिगड़ जाते हैं। और इस क़दर अदावत पैदा हो जाती है कि फिर उसका दूर होना या मन से भूलना, बग़ैर किसी न किसी क़िस्म के एवज़ या बदला लेने के, मुश्किल बल्कि ना-मुमकिन हो जाता है।

३–जो कि सुरत यानी रूह का स्थान इस देह में मन और इंद्रियों के परे है और जिस क़दर उस की ताक़त है, वह मन और इंद्रियों के वसीले से यहाँ ज़ाहिर होती है, इस वास्ते उसका भी झुकाव यानी मुख उलटा हो गया है, यानी मन और इन्द्रियों के संग बाहर के भोग और पदार्थों में उसकी आसा और मन्सा लगी रहती है और हमेशा बाहरमुख करनी में मशग़ूल रहती है।

४–सुरत की धार का मस्तक में ऊँचे देश से पिंड में उतरना, और अंग २ में ब-वसीले रगों के फैलना, और अख़ीर वक़्त पर उसी तरफ़ यानी मस्तक में ऊँचे देश को खिंच कर उलटना, हर एक को अपनी आँख से नज़र आता है। तो जिस क़दर जिस सुरत का झुकाव नीचे की तरफ़ पिंड में और बाहरमुख ज़बर है या जिस क़दर उसके मन का बंधन अनेक पदार्थों और जीवों में हो गया है,

उसी क़दर उसको आख़ीर वक़्त पर ऊपर की तरफ़ खिंचने और उलटने में दिक़्क़त और तकलीफ़ और मुश्किल होगी और इसी का नाम कष्ट और कलेश है, जो अकसर जीव मौत के वक़्त सहते हैं।

५–विशेष करके, सुरत का बंधन अपने तन में और फिर मन के संग, और फिर इंद्रियों के वसीले से पदार्थों में हो गया है। और पदार्थ के कहने में कुल्ल सामान खाने, पीने, पहिरने, ओढ़ने रहने और सहने और बर्तने का आ गया। और जो कि जुगान-जुग से यह सुरत मन और तन का संग करके भोगों में बर्तती चली आई है, इस सबब से तन, मन, और पदार्थों में ऐसी रच-पच गई है कि सिवाय इनके दूसरा ख़्याल नहीं उठता और इनका संग छोड़ने में निहायत डरती है और बड़ी भारी तकलीफ़ मानती है।

६–अब जब तक कि सुरत को संत सतगुरु या साध गुरु का संग (जो कि उस निज घर से जहाँ से कि सब सुरतें आई हैं, वाक़िफ़ है) न मिलेगा और वह इसको अच्छी तरह से इसके निज घर का भेद और रास्ता और चलने की जुगत न समझावेंगे, और अपनी दया से इसके हिरदे में कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत और दर्शनों की चाह पैदा करके चलने का अभ्यास न करावेंगे, तब तक इसकी हालत और समझ-बूझ और ख़्याल और रहनी नहीं बदलेगी।

७–सिवाय संत सतगुरु या साध गुरु के, प्रेमी और भक्त जन का संग (जिनको सतसंगी और अभ्यासी भी कहते हैं) बहुत ज़रूर है कि उनके संग में बैठ कर जीव को, हाल, हर एक की प्रीत और शौक़ घर के चलने के अभ्यास का, मालूम होगा और यह कैफ़ियत देख कर और संत सतगुरु या साध गुरु के बचन-बानी सुन कर, इसके दिल में उनकी मेहर और दया से आप ही आप शौक़ करने कमाई का, और सहज में फिरने मन का, संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से, और जोड़ने मन और सुरत का, शब्द और स्वरूप में, ऊँचे की तरफ़, अपने निज घट में, पैदा होकर, दिन २ (जिस क़दर अन्तर में रस और आनन्द मिलता जावेगा) बढ़ता जावेगा और बाहरमुख कामों में दिन २ तवज्जह हलकी और कम होती जावेगी।

८–यह तदबीर संग के बदलने की है। और जो कोई सच्चा होकर संतों के संग में लगेगा, उसको हालत ज़रूर आहिस्ता २ बदलती जावेगी यानी उसके मन और इंद्रियों का रुख़ इधर, यानी संसार की तरफ़ से हट कर घट में चरनों की तरफ़ फिरता जावेगा, और जिस क़दर मेहनत और तवज्जह के साथ यह काम किया जावेगा, उसी क़दर उसका फ़ायदा दिन २ अंतर में मालूम होता जावेगा।

९–यही सबब है कि संतों और महात्माओं ने जीवों को समझाया है कि पहिले तन-मन और धन मालिक के

चरनों में भेंट करो। हरचन्द कि यह तीनों चीजें दात और बख़्शिश उसी कुल्ल मालिक की हैं, पर जीवों ने उनमें ऐसा अपनपौ यानी अपना क़ब्ज़ा और दख़ल पैदा किया है कि उनके छोड़ने में निहायत ही तकलीफ़ और दुख मानते हैं। पर परमार्थी जीव को सतसंग करके, इस क़दर विचार करना ज़रूर और मुनासिब है कि जब तक उसकी प्रीत और लाग तन, मन और धन में ज़बर रही आवेगी, तब तक मालिक के चरनों की प्रीत का घट में प्रकट होना मुश्किल है। इस वास्ते जिस क़दर परमार्थी की लाग, इन तीनों में से, उनको नाशमान और दुखदाई समझ कर, आहिस्ता २ कम होती जावेगी, उसी क़दर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत जागती जावेगी और उसी मुआफ़िक़ अंतर में सहारा यानी रस और आनन्द भी मिलता जावेगा।

१०—जब कि सुरत का भंडार यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का देश अंतर में है और उसका रास्ता भी नेत्रों के स्थान से अंतर में चलता है, तो फिर जिस क़दर बाहरमुख करतूत है, वह सिवाय ज़रूरी और वाजिबी के, जीव को भटकाने और भरमाने वाली है। अलबत्ता संत और साध का संग, या उनकी बानी और बचन, और अभ्यासी प्रेमी और भक्तों का संग, जिनका ताल्लुक़ अंतर के भेद और रास्ते की चाल से लगा हुआ है, अंतर की

कमाई और करनी का मददगार है। हरचन्द यह बाहरमुख काम है, पर अंतर की कारबाई से बिलकुल मिला हुआ और उसका बढ़ाने वाला है। इस वास्ते यह संग जब कभी भाग से मिल जावे, तो उसको निहायत ग़नीमत समझना चाहिये, और जब २ मौक़ा मिले, उसमें शौक़ के साथ चल कर शामिल होना चाहिये।

११–सच्चे परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है कि अपने मन और सुरत को परमार्थी काम में अपने घट में लगाने के वास्ते, जहाँ तक मुमकिन होवे, संसारी और बाहरमुख जीवों का संग कम करें, और बाहरमुख करतूत जो फ़िज़ूल और ना-बाजिब है, कम करते जावें, और चित्त से भी ऐसे ख़्यालों को हटाते जावें, तो उनका रास्ता परमार्थ की कमाई का, अपने अंतर में सुखाला और निर्विघ्न चलेगा।

१२–सिवाय संतों और उनकी बानी और बचन के संग के, और जिस क़दर करतूत परमार्थी शकल में लोग बाहरमुख करते हैं, उसमें, जीव के उद्धार का कुछ फ़ायदा नहीं है। अलबत्ता शुभ कर्म का फ़ायदा यानी थोड़े दिनों का सुख इस लोक में या मरने के बाद किसी ऊँचे लोक में मिल जावेगा। और जिस किसी ने प्रेम-पूर्वक और सच्चे मन से मालिक के प्रसन्न करने के निमित्त कोई काम किया होगा, तो उसको, उसके एवज़ में, संत सतगुरु का दर्शन

मिलेगा और उनसे, सच्चे मालिक से मिलने की, अंतरमुख अभ्यास की जुगत मिलेगी और रफ़्ता २ एक दिन उसका काम बन जावेगा।

सार बचन छंदबंद, बचन ४१, शब्द नम्बर १२ के अर्थ लिखे जाते हैं

१—सोधत सुरत शब्द धुन अंतर, घटत तिमिर नभ बासी।

अर्थ

अभ्यासी सुरत शब्द धुन, छाँट कर, पकड़ती हुई नभ में पहुँची और नीचे के अंधकार से न्यारी हो गई।

२—चमकत चाप धनुष गत न्यारी, कंज जोत छिटकत उजियासी।

अर्थ

इस तौर से तीर की भाल के मुवाफ़िक़ चमकती हुई, तीसरे तिल से, जो कि धनुष स्थान है, पार होकर, जोत का प्रकाश देखने लगी। (धनुष स्थान इस सबब से कहा कि दोनों आँखों से धारें, कमान के मुवाफ़िक़, मिलती हैं)।

३—गगन गंग धारा उठ धावत, होत जहाँ निरमल गत स्वाँसी।

अर्थ

अब वहाँ से (अर्थात सहसदलकँवल से) सुरत की धार, जो कि गंगा की धार है, गगन की तरफ़ को दौड़ी जहाँ पहुँच कर प्राण निर्मल होते हैं।

४—जमुना तीर श्याम खुल खेलत, गोप गूजरी करत बिलासी।

अर्थ

और रास्ते में, यमुना के किनारे (अर्थात बाईं तरफ़), मन, खुल कर, सैर करता जाता है और सुरत भी उसके बिलास को देखती जाती है। (गोपी रूप गूजरी अर्थात सुरत जो इंद्रियों से न्यारी हो गई है)।

५—जसुधानंद कंस रिपु सुन्दर, धमक सुनत तज आसी।

६— धूमत अधिक धधक धुन धावत, पावत काल तरासी।

अर्थ

और वही मन जो कि कृष्ण है ऊपर की आवाज़ सुन कर जगत की आस छोड़ कर निहायत धूम-धाम के साथ धुन की धधकार पकड़ कर ऊपर को दौड़ता है और काल मुरझाता जाता है।

७—बिमल नगर जहाँ घोर अखाड़ा, खोजत रही नाम गति पासी।

अर्थ

चढ़ते २ सुरत, बिमल नगर (अर्थात सुन्न) में जहाँ हंसों के अखाड़े जमा हैं, पहुँची और नाम की गति वहाँ खोज कर अच्छी तरह से पहिचानी।

८—मीन मानसर भँवर कंज पर, भृङ्गी होत समझ गुण तासी।

अर्थ

फिर सुरत मछली की तरह मान-सरोवर में और भँवर की तरह गुफा में सैर करती हुई सत्तलोक में पहुँच कर भृंगी अर्थात सतगुरु स्वरूप की गति को प्राप्त हुई।

९—राधास्वामी उठत धाम धुन, बैठ मगन अविनासी।

अर्थ

और वहाँ से राधास्वामी धाम में, राधास्वामी धुन सुनती हुई, पहुँच कर सुरत मगन हो गई और अविनाशी रूप होकर वहाँ विश्राम किया।

———

बचन ८

सब जीवों को जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे हैं, अपने निज घर और सच्चे माता-पिता की सुध लेकर चलने और उनके चरनों में पहुँचने का जतन करना चाहिये।

१–इस दुनिया में हर एक शख़्स के मन में, अपने घराने और बाप-दादे की बड़ाई का बड़ा ख़्याल और मान रहता है। फिर जब कि यह बात मालूम हुई (कि हम सब पुरुष और स्त्री) कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे यानी पुत्र और पुत्री हैं, तब किस क़दर ख़ुशी और शान्ति हमारे मन में, अपने ऊँचे कुल और सच्चे माता, पिता राधास्वामी दयाल की बड़ाई की, पैदा होनी चाहिये कि जिसके सामने, और ख़ुशी और मान सब ओछे नज़र आवेंगे।

२–जब इस बात का कि हम सब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे हैं, थोड़ा बहुत यक़ीन दिल में आवेगा, तब ज़रूर हमारे मन में कुल्ल जीवों की तरफ़ थोड़ा बहुत प्यार बहिन-भाई के मुवाफ़िक़ पैदा होगा। और चाहे ज़ाहिर में उसका बर्ताव हर एक से हर वक़्त और हर जगह इस समझ के मुवाफ़िक़ न हो सके, पर मन में

ख़्याल, इसी क़िस्म के प्यार का, थोड़ा-बहुत ज़रूर रहेगा। और दिल से वह शख़्स हर एक का हितकारी बना रहेगा, और अपने मतलब के वास्ते या बग़ैर ज़रूरत ख़ास के (जिस में बहुत से जीवों का आराम और फ़ायदा नज़र आवे) किसी को मन और बचन और कर्म करके नुक़सान या तक़लीफ़ पहुँचाने का इरादा न करेगा।

३—सिवाय इसके जब ऐसा शख़्स (कि जिसने अपने तईं और सबको राधास्वामी दयाल का बाल-बच्चा समझा है) संत और महात्माओं की बानी और बचन पढ़ेगा या सुनेगा या संत सतगुरु या साध गुरु के सन्मुख पहुँच कर उनके दर्शन करेगा, तो ज़रूर उसके दिल में यह इरादा पैदा होगा कि जहाँ तक बने, और जिस तरह हो सके, अपनी चाल-ढाल और रहनी और समझ-बूझ ऐसी दुरुस्त करे कि जिस में सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु प्रसन्न होकर इस पर दया करें, और अपने चरनों में लगावें, और इसको ऐसी ताक़त बख़्शें कि दिन २ इसके संसारी अंग और हालत बदल कर परमार्थी रंग गहरा और पक्का चढ़ता जावे।

४—ऐसे शख़्स पर कुल्ल मालिक और संत सतगुरु ज़रूर दया फ़रमावेंगे यानी उसके मन में परमार्थ और उसकी कमाई करने का शौक़ पैदा करके उसका मेल सतसंग से लगा देंगे, जहाँ कि वह सच्चे परमार्थ यानी

प्रेमा-भक्ति की रीत और बर्ताव समझ कर और सच्चे और कुल्ल मालिक का महिमा और भेद सुन कर, सुरत-शब्द मार्ग की कमाई में (जो कि संतों की निज जुगत, वास्ते पहुँचाने जीवों के निज घर में है) लग जावेगा। और दिन २ बिकारी अंग और स्वभावों को छोड़ता हुआ, निर्मल होकर, एक दिन अपने सच्चे माता-पिता के चरनों में पहुँच जावेगा।

५—जैसे यह शख़्स संत सतगुरु की दया लेकर अभ्यास करता जावेगा, उसी क़दर उसको अन्तर में मेहर और दया के परचे मिलते जावेंगे, जिससे इसके मन में यक़ीन कुल्ल मालिक की बड़ाई और समर्थता और उसके घट में और हर एक जगह मौजूद होने का, बढ़ता जावेगा। और उसके साथ प्रीत भी चरनों में दिन २ बढ़ती जावेगी। और नित्त नई उमंग और प्रेम घट में जागता जावेगा कि जिसके सबब से कुल्ल मालिक और संत सतगुरु के चरनों में प्यार और भाव और कुल्ल जीवों की तरफ़ दया-भाव बढ़ता जावेगा और शुभ अंग और स्वभाव आप ही आप उसके मन में पैदा होते जावेंगे। और प्रेमी और भक्त जन और साध जन महा प्यारे लगेंगे। और उनकी और सतगुरु की सेवा और ख़िदमत करने को मन में नई नई उमंग पैदा होगी।

६—मालूम होवे कि दुनिया में भी जब किसी की

शादी होती है, तब पुरुष और स्त्री को आपस में किस क़दर प्यार और अपनी ससुराल वालों में कैसी मुहब्बत और उनको राज़ी रखने की किस क़दर चाह मन में फ़ौरन पैदा हो जाती है ? फिर जो परमार्थ में किसी को इस बात का यक़ीन हुआ कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ और सब जीवों के सच्चे माता-पिता हैं और सब जीव उनके निज बच्चे हैं, तो जो उसके मन में राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में (जो उनके निज भेदी और उनसे मिलाने वाले हैं) प्रीति और भाव जागा और कुल्ल जीवों की तरफ़ दया भाव पैदा हुआ, तो यह कुछ अचरज की बात नहीं है। बल्कि ऐसी हालत का पैदा होना, फ़ौरन वक़्त आने यक़ीन के, ज़रूर चाहिये, क्योंकि यह निशान और सबूत यक़ीन का है। और जो ऐसी हालत न होवे तो जानना चाहिये कि उसके यक़ीन में किसी क़दर कसर है।

७—जब कोई लड़का वर्ष-दो वर्ष का है और उस वक़्त उसका बाप वास्ते नौकरी या सौदागरी के विदेश में चला गया और बहुत अर्से तक घर पर न आया, तो जब वह लड़का होशियार हुआ और अपनी माँ से हाल अपने बाप का सुना, तो उसी वक़्त उसको मोहब्बत बाप की तरफ़ पैदा हुई, और उससे मिलने का शौक उसके दिल में जागा। इसी तरह जो जीव कि, काल और माया के पैदा

किये हुये पदार्थों में इस दुनिया में लिपट रहे हैं और अपने निज माता पिता और निज घर से बिलकुल बे ख़बर हैं, फिर जब संत सतगुरु (कि जो भेदी उस घर के हैं और, सच्चे माता-पिता के मुवाफ़िक़ जीवों का हित दिल में रखकर उनके उद्धार के निमित्त इस दुनिया में आते हैं) भाग से मिले, और उन्होंने भेद और महिमा कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सुनाई, उसी वक़्त उन जीवों के मन में प्यार और भाव और शौक़ दर्शन राधास्वामी दयाल का जाग उठता है। और उसी दिन से वह उस जतन में लग जाते हैं कि जिसकी कमाई करके एक दिन अपने निज घर यानी राधास्वामी धाम में पहुँच जावें।

८—ऐसी प्रीत और प्रतीत का जागना कोई अचरज की बात नहीं हैं। पर संत सतगुरु के बचन में प्रतीत होनी चाहिये और नहीं तो हालत मन की फ़ौरन नहीं बदलेगी। अलबत्ता कोई दिन सतसंग करके और बचन बारम्बार सुन कर और अभ्यास करके और कुछ परचे अंतर में पाकर प्रेम जागता जावेगा और आहिस्ते २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

६—अब समझना चाहिये कि जिन जीवों के मन में इस दुनिया का हाल देख कर ऐसा ख़्याल पैदा हुआ कि यह देश ठहराऊ और हमारा नहीं है, और यहाँ के सुख, तुच्छ और नाशमान हैं, और जो कोई कुल्ल रचना का

करता है, वह कहाँ है और कैसे मिल सकता है, और कोई देश ऐसा भी ज़रूर होना चाहिये कि जो अमर हो, और जहाँ का सुख और आनन्द भी सब सुखों का भंडार और अमर हो, और इन सब बातों के दरियाफ़्त करने का शौक़ और खोज हर वक़्त दिल में लगा रहता है, सो जब इन जीवों को दर्शन संत सतगुरु या साध गुरु का मिलेगा, और वे भेद कुल्ल मालिक और निज घर का और जुगत चलने की समझावेंगे, तब वे फ़ौरन प्रतीत उनके बचन की करके, अभ्यास में लग जावेंगे और उनके मन में प्रीत सच्चे मालिक और निज धाम की जाग उठेगी, और वे संत सतगुरु (जो कि भेद देने वाले और पहुँचाने वाले उस घर के हैं) और प्रेमी जन के साथ निहायत दीनता और मोहब्बत करेंगे, और इस दुनिया से किसी क़दर बरदाश्ता ख़ातिर, यानी उदास होकर, अपने निज घर की तरफ़ चलने की जिस क़दर बन सकेगा, कोशिश करेंगे। ऐसे ही जीवों का नाम सच्चा परमार्थी है और उन पर दिन २ कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया बढ़ती जावेगी।

१०–इस वास्ते कुल्ल जीवों को जो फ़िक्र और विचार और ग़ौर के साथ काम करते हैं, और आँख खोल कर दुनिया के करोबार की जांच करते हैं, मुनासिब है कि इसी मुवाफ़िक़ कार्रवाई करें। यानी सन्त सतगुरु या साध

गुरु का खोज करके उनसे सब भेद दरियाफ़्त करें, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की प्रीत और प्रतीत हिरदे में बसा कर, घर चलने का जतन और अभ्यास शुरू करें, तो एक दिन राधास्वामी दयाल की दया से घर में पहुँच कर अमर और पूर्ण आनंद को प्राप्त होंगे।

११–बड़े अफ़सोस की बात होगी जो कोई संत सतगुरु के बचन की प्रतीत न लाकर, संसार में ही, माया के पदार्थों में लिपट कर, भरमता रहेगा और अपने सब से बड़े घराने और सच्चे माता-पिता, कुल्ल मालिक का ख़्याल न करके, मन और इंद्रियों के हुक्म में बर्त कर, जनम-मरन और देहियों के दुख-सुख भोगता रहेगा। सिर्फ़ नर देही में, जतन घर की तरफ़ चलने का, बन सकता है और इस वास्ते ऐसे मौक़े को मुफ़्त खो देना और अपने जीव के कल्याण के निमित्त कोई जतन न करना, निशान अभागता का है। क्योंकि समझने और निर्णय करने वाली बुद्धि और अभ्यास करने की ताक़त पाकर जिस किसी ने कि उससे फ़ायदा न उठाया, तो वह आत्मघाती हुआ, यानी उसने अपने जीव का आप ही नुक़सान किया।

१२–बचन नम्बर ६ में थोड़ा बहुत सबूत इन पाँच बातों का दिया गया है कि (१) राधास्वामी दयाल सर्व-समर्थ और कुल्ल मालिक हैं और (२) सुरत या जीव उनकी अंस यानी बालक हैं और (३) सिवाय सुरत-शब्द

मार्ग के और कोई रास्ता सहज और धुर पहुँचाने वाला नहीं है और (४) जो जीव उनकी सरन लेकर अभ्यास में लगेंगे, वही आहिस्ता २ एक दिन उनके चरनों में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होंगे और (५) यह दुनिया बेगाना, यानी माया का, देश है, और जो जीव यहाँ रहेंगे, वह जनम-मरन और देही के दुक्खों से बच नहीं सकते। अब जीवों को चाहिए कि इस बचन की थोड़ी बहुत प्रतीत करके अभ्यास में लगें, तो वे एक दिन निज घर में पहुँच कर हमेशा को सुखी हो जावेंगे, नहीं तो वे माया देश के में अपने कर्मों के मुवाफ़िक़ नीच-ऊँच योनि और स्थानों में भरमते रहेंगे।

१३—हर एक को अपने असली नफ़े और नुकसान का विचार करके इस ज़िंदगी में काम करना चाहिए, नहीं तो बहुत पछताना और अफ़सोस करना पड़ेगा और जब वक़्त हाथ से जाता रहा, फिर वह पछताना फ़ायदेमंद न होगा।

बचन ९

परमार्थी को सतसंग में और सतगुरु के सन्मुख परमार्थ की रीत और कायदों के मुवाफ़िक़ बर्ताव करना चाहिए।

१—हर एक आदमी जब जो काम करता है या जैसी सोहबत में जाता है, तो उसी काम और सोहबत का रूप धारन करके, जो क़ायदे उस काम या सोहबत के मुक़र्रर हैं, उन्हीं के मुवाफ़िक़ बर्ताव करता है। जैसे विद्यार्थी जब स्कूल या पाठशाला में जाता है, तब वहाँ लिखने पढ़ने ही का काम करता है और दूसरा काम वहाँ पर नहीं करता। और इसी तरह से कचहरी वाले जब कचहरी में जाते हैं, तब वहाँ की पोशाक पहन कर जो कार्रवाई कचहरी की है, सिर्फ़ वही काम करते हैं।

२—इसी तरह पर जो कोई परमार्थ का चाहने वाला है, उसको मुनासिब है कि जब गुरु या साध के सन्मुख या उनके सतसंग में जावे, तो वाद विवाद छोड़ कर, चित्त से होशियारी के साथ बचन सुने और उनका मनन करे, और भाव के साथ दर्शन करे, और अंतर और बाहर, परमार्थ के क़ायदे यानी भक्ति की रीत के मुवाफ़िक़ बर्ताव करे। यानी बाहर से इन्द्रियों को किसी क़दर रोके और एहतियात रक्खे कि अंतर में सिवाय परमार्थी ख़्यालों के संसारी तरंगें न उठावे और गुरु और साध का थोड़ा बहुत उसी क़दर भय और भाव करे जैसे कि अपने बाप-दादे और बुज़ुर्गों का या जैसे अपने हाकिम का, क्योंकि वे परमार्थ के सच्चे बुज़ुर्ग और सच्चे हाकिम हैं।

३—जो जीव इस क़ायदे के साथ सच्चे गुरु के

सन्मुख जावेगा, वह ज़रूर थोड़ा-बहुत परमार्थ का लाभ यानी फ़ायदा लेकर उठेगा। और जो इसी तौर पर सतसंग में उसकी हाज़िरी कुछ अर्से तक बराबर जारी रही, तो उसके मन की हालत ज़रूर थोड़ी-बहुत बदलेगी और सच्चे मालिक के चरनों का प्रेम उसके हिरदे में पैदा होकर दिन २ बढ़ता जावेगा।

४—सच्चे परमार्थी को कभी अगली-पिछली टेक और अटक में भरमना नहीं चाहिए, और सतगुरु के सन्मुख अपनी समझ-बूझ या अपने ख़्याल, परमार्थ की निस्बत, ज़ोर देकर पेश करने नहीं चाहिए, बल्कि अपने तईं अनजान समझ कर जो बचन कि सतगुरु निर्णय करके समझावें, उनको हित-चित से धारन करना चाहिए।

५—जो कोई हाकिम-ए-वक़्त या डाक्टर या हकीम के पास जाता है, तो वह अपनी नौकरी या मुक़द्दमे की बाबत या अपनी बीमारी का हाल कहता है, और जो हुक्म कि हाकिम देवे और जो दवा और परहेज़ कि डाक्टर तजवीज़ करे, उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करता है। वहाँ हाकिम या डाक्टर की ज़ात-पांत या उनकी बाहर या अंतर की रहनी पर नज़र नहीं करता। इसी तरह जो कोई सच्चा परमार्थी है, उसको लाज़िम है कि साध-गुरु के बचन और उनके अभ्यास की परख करे, और ज़ात-पांत और लक्षण वग़ैरा के ख़्याल में न पड़े। क्योंकि इसकी क्या ताक़त है कि यह

जो आप माया में ग़ोते खा रहा है, ऐसे लोगों की, जो कि मन और माया से किसी क़दर या बिलकुल न्यारे हैं, परख या जाँच कर सके। पर जो कोई दिन उनका संग करेगा तो अलबत्ता थोड़ी-बहुत निरख और परख आवेगी, यानी उनकी पहिचान इस बात की थोड़ी कर सकेगा कि वे किस क़द्र संसार से जुदे हैं।

६–सच्चे परमार्थी को लाज़िम है कि सतसंग में जाकर अपना काम करे और उसी का फ़िक्र रक्खे और दूसरे परमार्थियों की तरफ़ न देखे, और न उन के मुआमले में दख़ल देवे। लेकिन जो अपने से भक्ति में विशेष यानी परमार्थ की कार्रवाई में बेहतर नज़र आवे, तो उसकी चाल आप भी इख़्तियार करे, और जो मौक़ा होवे और बन सके तो उससे मदद लेवे।

७–और यह भी मुनासिब है कि जिस क़द्र अपना शौक़ और उमंग होवे, उसको कम करके दिखलावे और ज़्यादा दिखावा उसका न करे और अपनी ताक़त से ज़्यादा काम, बग़ैर अच्छी तरह सोचे और समझे हुए, न करे, नहीं तो थोड़ा-बहुत रास्ते में झटका लगेगा। उसको चाहिये कि जो काम करे समझ और सोच कर, धीरज के साथ, करे और जितनी अपनी ताक़त होवे, उससे कुछ कम, काम में लावे और घबराहट के साथ जल्दी न करे, तो उसका रास्ता सुखाला चलेगा। ख़ुलासा

यह है कि हिरसा-हिरसी और देखा-देखी भारी काम परमार्थ के, एकाएक न कर उठावे क्योंकि आहिस्ता २ चाल चलने से उन्हीं कामों को यह दुरुस्ती के साथ कर सकेगा। अपनी भक्ति और प्रेम को नित्त बढ़ाता जावे। उसके साथ इसकी ताक़त भी बढ़ती जावेगी।

८—सच्चे परमार्थी को यह भी मुनासिब है कि किसी दूसरे सतसंगी से, जो सतसंग में शामिल होवे, किसी बात पर तकरार और हुज्जत या लड़ाई या झगड़ा या बैर और विरोध और ईर्षा न करे, नहीं तो उसके प्रेम और भक्ति में मुफ़्त ख़लल पड़ेगा और तरक़्क़ी में हर्ज होगा। जो किसी का चाल-चलन इसको पसन्द न होवे, या उसकी रहनी में नुक़्स और कसर नज़र आवे, तो मुनासिब है कि उसको प्रीत-भाव के साथ एकान्त में समझौती देवे, और जो वह न माने, तो सतगुरु या साध से, जो सतसंग के अधिष्ठाता हैं, इत्तला कर देवे। उनको इख़्तियार है, चाहे जैसे उस शख़्स के साथ बर्तावा करें। इस शख़्स को चाहिये कि फिर उस सतसंगी के मुआमले में दख़ल न देवे और जो इसका मन उससे मिलने और बात करने को न चाहे तो उससे मिलना और बोलना छोड़ देवे। फिर विरोध न करे और न इस बात की हठ करे कि वह सतसंग से ख़ारिज कर दिया जावे। क्योंकि जो वह सतसंग में पड़ा रहा, तो शायद आहिस्ता २ गढ़ जावेगा और विकारी अंग

उसके साफ़ हो जावेंगे और जो सतसंग से ख़ारिज हुआ तो और कहीं उसकी गढ़त होनी मुमकिन नहीं है।

९–सच्चे परमार्थी को लाज़िम है कि जो कोई चाल सतगुरु या सतसंग की उसकी समझ में न आवे, और ज़ाहिरा उसको ना-पसंद या ना-मुनासिब मालूम होवे, तो उसकी निंदा यानी बुराई किसी सतसंगी या संसारी जीवों के सामने न करे, और न अपने मन में उसको बुरा समझे और ऐसा यक़ीन करे कि उस कार्रवाई में ज़रूर कुछ न कुछ मसलहत होगी कि जिससे फ़ायदा ख़ास या आम, या दोनों ख़ास और आम परमार्थी लोगों का मंज़ूर है।

१०–जो उसका मन इस बात को न माने और भरम उठावे, तो बेहतर होगा कि किसी गहरे प्रेमी सतसंगी से उस का हाल एकान्त में दरियाफ़्त करे, या जो मौक़ा मिले तो ख़ुद सतगुरु से बिन्ती करके पूछ लेवे तब उसका संदेह रफ़ा हो जावेगा।

११–मालूम होवे कि जहाँ कहीं संतों का सतसंग जारी होता है, वहाँ सच्चे परमार्थ का निर्णय करके उसके प्राप्ति की जुगत समझाई जाती है और वह जुगत ठीक २ उन्हीं लोगों से कमाई जावेगी कि जिनके हिरदे में अपने जीव के सच्चे उद्धार और सच्चे मालिक के दर्शनों की ज़बर चाह है, और जिन के मन में संसार की चाहें ज़बर हैं और परमार्थ का ख़्याल थोड़ा है, उनसे वह जुगती शुरू

में दुरुस्ती के साथ नहीं कमाई जावेगी। लेकिन जो सतसंग और अभ्यास बराबर करते रहेंगे, तो कोई दिन में संसार की चाहें हलकी हो कर, परमार्थ की चाह उनके मन में भी ज़बर हो जावेगी, और फिर अभ्यास में उनको भी रस और आनंद मिलना शुरू हो जावेगा।

१२–लेकिन निपट संसारी जीवों से संतों के सतसंग में ठहरा नहीं जावेगा, और न वहाँ के बचनों के सुनने और समझने की ताक़त और बरदाश्त होगी। इस वास्ते कोई २ चालें सतसंग में ऐसी जारी की जाती हैं कि जिनको देख कर और सुन कर संसारी जीव सतसंग में आकर खलल न डालें और सच्चे परमार्थियों पर अपने संग और संसारी बातों की छाया डाल कर, उनके अभ्यास में विघ्न-कारक न होवें।

१३–ऐसी चाल के जारी होने में परमार्थियों के प्रेम की तरक़्क़ी होती है और निपट संसारी लोग नज़दीक नहीं आ सकते। दूर ही दूर से अपनी अन-समझता से निंदा करते हैं और झूठों को सतसंग से हटाते हैं।

१४–सच्चे सतसंगियों में आपस में प्यार और मोहब्बत ज़रूर होवेगी। क्योंकि जब उन सब का एक ही मतलूब और माशूक़ है, और सिर्फ़ उसके मिलने की चाह हर एक के मन में ज़बर है, और हर एक अपने २ मुवाफ़िक़ उस एक ही काम के पूरा करने के लिये, जिस क़दर बन सके,

मेहनत और कोशिश कर रहा है, तो इन सब का आपस में मेल और इत्तफ़ाक़ ज़रूर होगा और एक-दूसरे को मदद देने के वास्ते हमेशा तैयार रहेगा। और जिस २ में ऐसा मेल नहीं है, तो समझना चाहिये कि उन लोगों की कार्रवाई और मतलब में कुछ न कुछ कसर है। पर जो वह सतसंग में पड़े रहेंगे और थोड़ा बहुत अभ्यास करे जावेंगे, तो आहिस्ता २ एक दिन उनकी भी सफ़ाई हो जावेगी।

चन १०

संतों के बचन हरचंद अधिकारी-प्रति हैं, पर कुल्ल जीवों को अपनी २ ताक़त के मुवाफ़िक़ उनका मानना और उनके मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और बरतावा दुरुस्त करना ज़रूर चाहिये॥

१–संतों ने जिस क़दर बानी और बचन कहे हैं, वह सब उत्तम अधिकारी यानी लायक़ परमार्थी जीवों के वास्ते कहे हैं, और उन्हीं की समझ में वे ज्यों के त्यों आवेंगे, और उन्हीं जीवों से उनकी कार्रवाई यानी अभ्यास दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगा।

२–और जो जीव कि मध्यम दरजे के अधिकारी हैं, वह

भी उन बचनों को समझेंगे और मानेंगे, पर उनसे कार्रवाई आहिस्ता २ बनती जावेगी और सतसंग और अभ्यास करते २ कोई दिन में वे भी उत्तम अधिकारी हो जावेंगे।

३–और निकृष्ट अधिकारी, यानी जो तीसरे दरजे के जीव हैं, वे कोई दिन सतसंग करके बचन के समझने के लायक़ होवेंगे और फिर आहिस्ता २ अभ्यास शुरू करेंगे। पर कुछ अर्सा चाहिये कि उनसे अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़े।

४–और जो चौथे दरजे के जीव हैं, जिनको पामर और नीच कहते हैं वे निपट संसारी और कर्मी और अहंकारी हैं। वे संतों के सतसंग में नहीं आवेंगे, और जो किसी सबब से आ गये तो ठहर नहीं सकेंगे और न अभ्यास में शरीक होंगे।

५–संतों की दया और समर्थता भारी और अपार है। वे जिस क़िस्म के जीवों को चाहें, चरनों में लगा कर, अपनी प्रति की बख़्शिश कर सकते हैं। पर आम दस्तूर और क़ायदा यही है जैसा कि ऊपर लिखा गया।

६–कोई जीव चाहे उत्तम अधिकारी होवें, चाहे मध्यम या निकृष्ट, बिना दया संतों के कुछ कार्रवाई परमार्थ की दुरुस्ती के साथ नहीं कर सकते। इस वास्ते सब जीवों को चाहिये कि जैसे बने, तैसे संत सतगुरु के सन्मुख आवें

और जैसी-तैसी सरन उनके चरनों की लेवें, तो अलबत्ता उनका परमार्थ का भाग जागना शुरू हो जावेगा, और रफ़्ता २ संतगुरु की दया के बल से कमाई करके, एक दिन पूरा काम बन जावेगा। हर तरह से महिमा संत सतगुरु की है और बिना उनकी दया के किसी जीव का सच्चा उद्धार नहीं हो सकता है।

७—बचन नम्बर ८ और ९ की क़द्र और समझ प्रेमी जीव जानेंगे, और वे ही उन बचनों के मुवाफ़िक़ थोड़ी-बहुत कार्रवाई करके, अपने घट में रस और आनन्द पावेंगे, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा और उनके चरन कँवल की प्रीत और प्रतीत उन जीवों के हिरदे में दिन २ बढ़ती जावेगी। और बाक़ी जीव उन बचनों को पढ़ कर थोड़ी-बहुत समझ-बूझ हासिल करेंगे। पर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई उनसे पूरे तौर पर बिल्फ़ेल नहीं बन सकेगी। कुल्ल जीवों का बर्ताव एक क़िस्म का नहीं हो सकता। हर एक क़िस्म के जीवों की समझ-बूझ और करनी में फ़र्क़ रहता है, और उसी मुवाफ़िक़ उनके दरजे जुदे २ समझे जाते हैं, जैसे—उत्तम, मध्यम और निकृष्ट और नीच वग़ैरा।

८—सब जगह इसी तौर पर जीवों की कार्रवाई में दरजे हैं और थोड़ा-बहुत फ़र्क़ रहता है, चाहे परमार्थ का काम होवे या दुनिया का।

९–पर जो सब जीवों का, जो एक संगत या फ़िरक़े या गिरोह में शामिल हैं, मतलब और चाह एक ही है, तो सब के सब रल-मिल कर उस काम को करेंगे। और उस कार्रवाई में एक दूसरे का मददगार रहेगा। और आपस में उनकी, इस सबब से, प्रीत और प्रतीत भी मज़बूत और क़ायम होवेगी, क्योंकि सब का मतलूब यानी प्रिय पदार्थ एक ही है।

१०–जब कि परमार्थ में, और ख़ास कर, संतों के सतसंग में, सब सतसंगियों का इष्ट एक ही है, यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल को सब मानते हैं और उन्हीं के धाम में पहुँचने का सब का इरादा है, और इसी मतलब से सब कोई सतसंग और अभ्यास करते हैं, तो आपस में इन सब जीवों की, उसी तरह पर और उसी दरजे की, प्रीत होनी चाहिये जैसे कि दुनिया में बहिन-भाई और ख़ास बिरादरी में होती है और एक को, दूसरे की हर वक्त, में जिस क़दर बन सके, मदद और पक्ष करना चाहिये।

११–जो २ सच्चे परमार्थी हैं, वे तो आपस में ज़रूर उसी मुवाफ़िक़ बर्तेंगे जैसा कि ऊपर लिखा गया है। पर जो संसारी हैं, और किसी सबब करके परमार्थ में शामिल हो गये हैं, या जो कि अहंकारी और अपस्वार्थी हैं और जिनके परमार्थ की चाह बहुत थोड़ी है, उनसे इस क़ायदे के मुवाफ़िक़ नहीं बर्ता जावेगा, यानी उनके मन में पूरा २

प्यार और भाव कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में नहीं आवेगा। और न सतसंगी भाइयों में जैसी चाहिये प्रीत करेंगे। उनका बर्तावा सर्व-अंग में बहुत करके ऊपरी होगा। किसी की भी प्रीत उनके अंतर में जैसी चाहिये, नहीं धसेगी।

१२–अब, आम तौर पर यह बचन समझौती का कहा जाता है कि हर एक स्त्री और पुरुष को जो राधास्वामी मत में शामिल हैं, और आइन्दा होवें, मुनासिब और लाज़िम है कि परम पुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्ची और गहरी प्रीत और प्रतीत करें, और सतसंग और अभ्यास करके उसको दिन २ बढ़ाते रहें। और सतसंगी भाइयों और सतसंगिनों में बहिन-भाई की सी प्रीत करें, और कुल्ल संगत को अपनी ख़ास और निज बिरादरी समझें और प्यार-भाव के साथ उनके साथ बर्तावा रक्खें। क्योंकि इनका संग बराबर दयाल देश तक रहेगा और संसारी भाई और बिरादरी का संग सिर्फ़ इसी ज़िन्दगी यानी जनम तक का है।

१३–सतसंगियों को चाहिये कि आपस में, एक दूसरे की कसरों पर नज़र न करें और जो किसी में कोई कुचाल मालूम पड़े, तो उसको प्यार के साथ एकान्त में समझा देवें। सतसंगियों या संसारियों में उसकी कसर या ऐब को प्रकट करके उसकी ग़ैबत में ज़ाहिर न करें, क्योंकि इसी

का नाम निंदा है और सतसंगी को इस ऐब से बचना चाहिये ।

१४–जो किसी सतसंगी या सतसंगिन की भक्ति और प्रेम और अभ्यास की तारीफ़ सुने, तो उसकी ईर्षा करके मन में कुढ़ना या जलना नहीं चाहिये, और उसका मन में नुक़सान या बुराई चेतना या ख़्याल करना नहीं । बल्कि इस बात की चौंप अपने मन में लावे कि जैसी भक्ति और प्रीत उस सतसंगी या सतसंगिन की है, वैसी ही आप भी पैदा करे, ताकि इसकी भी तारीफ़ होवे ।

१५–सतसंगी और सतसंगिन को जहाँ तक बन सके किसी में औगुन दृष्टि लाना नहीं चाहिये, क्योंकि उस शख़्स में चाहे वह औगुन होवे या नहीं, पर औगुन देखने वाले के मन में वह औगुन सही पैदा हो जावेगा, और उसको अभ्यास के समय गुनावन उठा कर सतावेगा । और जो ज़्यादा ख़्याल उसका जम गया, तो जगह २ उससे निंदा करावेगा । इसमें प्रकट नुक़सान औगुन देखने वाले का होवेगा । इस वास्ते यह आदत, जिस क़दर जल्दी बने, छोड़ना चाहिये । और जो कोई ऐसा औगुन किसी में मालूम पड़े कि जिसके सबब से कुल्ल संगत की बदनामी होती होवे, तो उसको एकान्त में, गुरु या साध या सतसंगी से, जो संगत का अफ़सर होवे, कह देना मुनासिब है, ताकि वह मुनासिब तौर पर बंदोबस्त उसका कर दे या इतनी एहतियात रखनी चाहिये

कि किसी का कोई ऐब जहाँ तक मुमकिन और मुनासिब होवे, आम में प्रकट न किया जावे।

१६–खुलासा यह है कि हर एक सतसंगी और सतसंगिन राधास्वामी मत को लाज़िम और मुनासिब है कि अपनी ताक़त के ब-मूजिब जो २ बचन कि उनके फ़ायदे के वास्ते कहे गये हैं उनको दिल और जान के साथ मानने और बर्तने में कोशिश करें। और जिस क़दर कि उनसे न माना जावे, उसी क़दर अपने में कसर समझें। और उसी कसर के दूर करने के वास्ते जतन और प्रार्थना करते रहें, और अपने अंतर में शरमाते और पछताते रहें, तो आहिस्ता २ एक दिन उनकी कसर दूर हो जावेगी और मेहर से उनकी रहनी और बर्तावा बचनों के मुवाफ़िक़ दुरुस्त हो जावेगा।

बचन ११

राधास्वामी मत केवल दया का मत है और इस मत में जीव का उद्धार सहज होता है

१–मालूम होवे कि जो राधास्वामी दयाल ने सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश फ़रमाया है, और उसके अभ्यास को ऐसा सहज कर दिया है कि औरत और मर्द, लड़का,

जवान और बूढ़ा, आसानी से कर सकता है। पर इस काम में हमेशा दया की ज़रूरत है, क्योंकि जीव निहायत निबल और अजान और भूलनहार है। इस वास्ते, जो अभ्यास और भक्ति के काम कि इससे बनवाने मंजूर हैं, वह सब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया से बनेंगे। बग़ैर दया के जीव की ताक़त नहीं है कि यह अभ्यास निर्विघ्न और बराबर कर सके। लेकिन जीव को चाहिये कि उनकी दया के भरोसे अपना इरादा मज़बूत करके या हिम्मत बाँध कर कोशिश करे जावे।

२—इसी तरह जो जीवों को समझाया जाता है कि मन और इन्द्रियों को अपने बस में लाओ और संसार और भोगों की तरफ़ से हटा कर अंतर में शब्द और स्वरूप के आसरे लगाओ और आहिस्ता-आहिस्ता ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ाओ, पर जो कि जीव जन्मान-जन्म और जुगान-जुग और अनेक वर्षों से माया के घेर में पड़ा हुआ है, और संसारियों के संग और भोगों के रसों में फँसा हुआ है, और अपने निज घर यानी सत्तपुरुष राधास्वामी देश की याद बिल्कुल भूल गया है, और उसके मन और इन्द्रियों का झुकाव बाहर की तरफ़ कुटुम्ब-परिवार और माया के पदार्थों में हो रहा है, और हर वक़्त उन पदार्थों की प्राप्ति के लिये जतन करता है, या उसी के ख़्याल में लिपटा रहता है, इस सबब से जो कभी सच्चे परमार्थ के

बचन सुनता है, वह भूल जाता है। और जो जुगत कि मन और इन्द्रियों के क़ाबू में लाने के वास्ते बताई जाती है, वह ब-सबब दुनिया के ख़्यालों के भरे होने के, इसके मन में कम ठहरती है और दुरुस्ती से नहीं बन पड़ती। इस वास्ते इस काम को भी थोड़ी बहुत दुरुस्ती से करने के लिये दया दरकार है। और वह दया कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल जब २ और जैसा २ मुनासिब समझते हैं, करते रहते हैं। लेकिन जीव को चाहिये कि दुनिया और उसके भोगों से किसी क़दर बैराग रक्खे और फ़िज़ूल ख़्वाहिशें न उठावे।

३-संतों ने कहा है कि जब तक जीव की भूल और भरम किसी क़दर दूर न होवे, तब तक मुनासिब है कि सतसंग हर रोज़ एक बार या दो बार करता रहे। जो भाग से संत सतगुरु या साध का सतसंग मिल जावे तो बड़ी बात है, नहीं तो उनकी बानी और बचन का थोड़ा पाठ, हर रोज़ एक या दो बार, होशियारी के साथ, समझ २ कर करना चाहिये। उससे भी बहुत फ़ायदा होगा और भूल और भरम आहिस्ता २ कम होते जावेंगे। और जब २ मौक़ा मिले तो साल भर में एक या दो बार या दो या तीन वर्ष में एक बार, वास्ते कम से कम एक या दो हफ़्ते या ज़्यादा के, ज़रूर सतसंग में शामिल होवे और उस वक़्त जो कुछ कि अपने मन में संदेह और भरम होवें, उनको साफ़ करावे, और जो कोई और विघ्न अभ्यास

में हर्ज करते होवें, उनको भी दूर करावे।

४—यह सतसंग भी बिना दया के नहीं मिल सकता है। और राधास्वामी दयाल सच्चे परमार्थियों पर आप दया करके जब २ मुनासिब होता है, उनकी चाह पूरी करते हैं। यानी जब-तब मौज से ऐसा ब्यौंत बनाते हैं कि जिसमें वे सतसंग में शामिल होकर उससे फ़ायदा उठावें। और जो ऐसा ब्यौंत न बने तो सच्चे सतसंगी से उनका मेल करा कर परमार्थ के गहरे और रसीले बचन उनको सुनवाते हैं, कि जिस में उनके कारज का बनाव जारी हो जावे। लेकिन जीव को चाहिये कि सतसंग में शामिल होने के लिये सच्चे मन से चाह उठाता रहे, और जो बंदोबस्त इसके इख़्तियार में होवे, करता रहे।

५—सब जीव जैसा कि चाहिये अभ्यास या करनी नहीं कर सकते। इस वास्ते राधास्वामी दयाल ने ऐसी मौज फ़रमाई है कि जो जीव सच्चे होकर उनके चरनों की सरन लेवेंगे और अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ शौक़ के साथ करनी भी करे जावेंगे, यानी अपने कुल्ल काम परमार्थी और स्वार्थी उनकी मौज के आसरे करेंगे, तो वे उनकी हर तरह से सम्हाल और रक्षा फ़रमा कर जिस क़दर अभ्यास और करनी, वास्ते उनके उद्धार के, ज़रूर होगी, उनसे आप करा लेंगे, और आख़िर वक़्त पर उनको आप अपने चरनों की अमृत-धार में लपेट कर जिस

स्थान पर कि मुनासिब समझेंगे, ऊँचे और सुखाले देश में बासा देवेंगे और जो कुछ करनी, वास्ते पहुँचने धुर स्थान के, बाक़ी होगी, उसको, जीव को दुबारा जनम देकर और फिर सतसंग में शामिल करके, पूरी करावेंगे और इस तरह उसका कारज पूरा करेंगे।

६–खुलासा यह कि हर तरह कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल जीवों पर अपनी दया फ़रमा कर हर हालत में उनका गुज़ारा करते हैं और परमार्थ में ख़ास कर जो कोई उनकी सरन दृढ़ करके सच्चे मन से लेवेगा, उसके जीव का काम बनावेंगे, यानी उस का पूरा उद्धार करेंगे।

७–सच्ची सरन के धारन करने के वास्ते ज़रूर है कि गहरी प्रीति और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में होवे। और जब सतसंग करके मन में विश्वास आया और थोड़ा बहुत प्रेम जागा, फिर जिस क़दर कि अभ्यास इस जीव से आसानी के साथ बन पड़े, वही उसके उद्धार के वास्ते काफ़ी होगा। यानी राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से जिस क़दर करनी ज़रूरी और मुनासिब है, आप करा लेवेंगे, और जीव को दयाल देश में बासा देवेंगे।

८–राधास्वामी दयाल का हुक्म है कि जो कोई अपनी करनी पूरे तौर पर करके निज देश में पहुँचना चाहे, उसको चाहिये कि गहरा अभ्यास करे और मन

और इंद्रियों का रोक कर क़ाबू में लावे और सुरत को चढ़ा कर मुक़ाम २ पर पहुँचावे। तब एक दिन धुर धाम में पहुँचेगा। और ऐसी करनी वाले के संग दया बराबर रहेगी और वे दयाल अपना ख़ास सहारा देकर कारज बनावेंगे।

९–और जिन जीवों से कि इस क़दर मेहनत अभ्यास की, और कार्रवाई मन और इंद्रियों को रोकने और क़ाबू में लाने की, नहीं बन पड़ती है, पर सरन सच्चे मन से राधास्वामी दयाल के चरनों की धारन कर रहे हैं, उनको चाहिये कि प्रीति और प्रतीत चरनों में बढ़ाते रहें, और जिस क़दर और जैसा बने अभ्यास भी करे जावें। तब राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से उनके जीव का कारज आप बनावेंगे, जैसा कि इन कड़ियों में दया से आप फ़रमाया है।

धीरज धरो करो सतसंगत, मेहर दया से लेउँ सुधारा।
वह तो रूप दिखा कर छोड़ूँ, तुम जल्दी क्यों करो पुकारा।
तुम्हरी चिंता मैं मन धारी, तुम अचिंत रह धरो पियारा।
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती, और परतीत सँवारा।
यह करनी मैं आप कराऊँ, और पहुँचाऊँ धुर दरबारा।

और कबीर साहब ने भी अपनी बानी में ऐसा ही कहा है–

मत तू हंसा डिगमिगे, गहो मेरी परतीत।
काल मार मर्दन करूँ, ले चलूं भौजल जीत॥

१०–इस वास्ते जो जीव कि राधास्वामी दयाल का सरन में आये हैं, उनको चाहिये कि उनकी दया की प्रतीत और भरोसा दृढ़ करके, जिस क़दर कि उनसे बने, करनी करे जावें। बाक़ी काम जो कुछ होगा, राधास्वामी दयाल आप सँवारेंगे।

११–और मालूम होवे कि सरन लेने से यह मतलब नहीं है कि कुछ भी करनी न करें यानी न सतसंग और अभ्यास करें और न प्रीत और प्रतीत की तरक़्क़ी में कोशिश करें।

१२–जो जीव ऐसी समझ धारन करेंगे, उनको समझना चाहिये कि वे आलसी और बे-परवाह हैं, और दया के लेने की क़ाबलियत नहीं रखते और इस वास्ते जब तक वे हिम्मत बाँध कर अपनी कोशिश न करेंगे, तब तक उनके कारज का बनना भी शुरू नहीं होगा।

१३–जो कोई दरियाफ़्त करे कि बिना पूरी करनी कराने, और कर्मों के काटने के, राधास्वामी दयाल दया और मेहर से कैसे जीव का उद्धार करते हैं, तो जवाब उसका यह है कि—

क—वे अपनी दया से संचित और प्रारब्ध कर्मों को, उनका भोग जल्द २ कराके और फल उनका मन भर की जगह सेर भर में भुगता कर, बहुत से इसी जनम में कटवा देते हैं। और उन कर्मों का असर मन का सेर भर और सूली का काँटा इस तौर पर हो जाता है कि जीवों को उनके नाम के आधार और चरन सरन के भरोसे से तकलीफ़ बहुत कम व्यापती है। यानी ऐसी हालत में उनके मन और सुरत मौज से इस क़दर अंतर में खिंचे और तने रहते हैं कि दुख-सुख का असर उन पर ब-निस्बत संसारी जीवों के कम व्यापता है।

ख—क्रियमान कर्म का बंधन, सरन वाले जीवों को, बहुत कम या बिल्कुल नहीं होता है, क्योंकि जो काम कोई आसा धरके वे करते हैं, उसमें मौज को निहारते रहते हैं। और चाहे उनका मन मौज के साथ मुवाफ़िक़त करे या न करे, वे अपनी मेहर से उन कर्मों के नतीजे यानी मतलब को इस तौर पर मोड़ देंगे कि जिसमें जीवों का परमार्थी फ़ायदा निकले, और दुनिया का भी काम जिस क़दर जरूरी और मुनासिब है, औसत दरजे पर बनता चला जावे और उनके मन का बंधन उसमें ज़्यादा न होने पावे, और सतसंग कराके जीवों के मन में से दुनिया की फ़िज़ूल चाहें और आसा और मन्सा घटाते चले जाते हैं। इस रीत से क्रियमान कर्म उनको बाँध नहीं सकते।

ग—जो मेहर से उन जीवों से भक्ति और प्रेम की करतूत जैसे सतसंग और सुमिरन और ध्यान और भजन और बानी का पाठ और संत और साध और प्रेमी जन की तन, मन, धन से सेवा कराते जाते हैं, इससे उनके मन और सुरत दिन २ माया और उसके पदार्थों से उपराम होते जाते हैं, यानी इन्द्रियों के घाट से हट कर दिन २ ऊँचे की तरफ़ चढ़ते हैं, और अंतर और बाहर दया और मेहर के परचे पाकर प्रीत और प्रतीत बढ़ती जाती है, और राधास्वामी दयाल के दर्शन और उनके धाम में पहुँचने की उमँग जागती जाती है।

घ—इस करनी के फल का कुछ हिसाब नहीं हो सकता यानी दिन २ उन जीवों का प्रेम बढ़ता जाता है और काल और कर्म और माया के घेर से उबार होता जाता है और संसारी चाह और करतूत दिन २ घटती जाती है और उसके भोग और पदार्थों से चित्त हटता जाता है।

१४—इस तौर से जीव के सच्चे उद्धार और उबार में किसी तरह का शक और संदेह बाक़ी नहीं रहता। और जो जीव कि सच्चे परमार्थी हैं और राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं, वह ऊपर की लिखी हुई बातों की जाँच कर सकते हैं, और अपनी हालत दिन २ बदलती हुई, कुछ अरसे के अभ्यास के बाद, देख कर और राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की परख करके, निश्चय इस

बात का कर सकते हैं कि ज़रूर सुरत-शब्द मार्ग का, जिस क़दर बन सके, अभ्यास करके और राधास्वामी दयाल के चरनों की सरन दृढ़ करके उनके जीव का सच्चा कल्यारा और उद्धार मुमकिन है।

१५—राधास्वामी मत में कोई काम जब्र और कठिनता के साथ नहीं कराया जाता। जिस क़दर कार्रवाई कि जारी है, सब सहज तौर पर कराई जाती है। किसी चीज़ का ज़बरदस्ती त्याग नहीं कराया जाता, और न किसी बात को ज़बरदस्ती मनवाया जाता है, और न कोई काम ताक़त से ज़्यादा कराया जाता है। जिस क़दर जिसकी उमंग है, उसी क़दर वह कार्रवाई करता है। ख़ुलासा यह कि कुल्ल कार्रवाई परमार्थ की इस मत में जीवों की सरधा और उमंग और शौक़ और प्रेम पर मुनहसर है।

१६—सच तो यह है कि ऐसा ऊँचा और सच्चा और पूरा मत और ऐसा गहरा और धुर पहुँचाने वाला अभ्यास, आज तक कहीं और किसी वक़्त में, ऐसी आसानी के साथ जैसी कि अब राधास्वामी दयाल ने कर दी है, प्रकट नहीं हुआ। इस मत में कुल्ल जीव, कुल्ल क़ौमों और मुल्कों के, शामिल हो सक्ते हैं और उसके अभ्यास की कमाई थोड़ी-बहुत करके राधास्वामी दयाल की दया लेकर, सहज में, बग़ैर ज़्यादा मेहनत और तकलीफ़ के, इसी जनम यानी

ज़िन्दगी में अपनी मुक्ति और उद्धार का सबूत पाकर, थोड़ी बहुत शान्ति और आनन्द और निचिंताई हासिल कर सकते हैं।

१७—यह मत और यह अभ्यास कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने आप संत रूप धारन करके इस दुनिया में प्रकट किया। और जो कि वे कुल्ल रचना के सच्चे माता-पिता हैं और सब जीवों का हित उनको बराबर मंजूर है, इस वास्ते यही मत और यही अभ्यास कुल्ल जीवों के वास्ते जारी फ़रमाया। यानी कुल्ल मुल्कों के जीव इस में शामिल होकर सहज में इसकी कार्रवाई और कमाई करके अपना उद्धार करा सकते हैं।

१८—जो कोई सच्चे खोजी और दर्दी परमार्थ के हैं, उनको यह बचन प्यारा लगेगा, और वे, सतसंग अंतर और बाहर करके जो २ बातें कि ऊपर लिखी गई हैं, उनकी जाँच और राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की परख करके, मगन होवेंगे। और जिनके मन में खोज और दर्द नहीं है, वे इस बचन की प्रतीत नहीं करेंगे। और वे न तो सतसंग में शामिल होकर और बचन सुन कर ख़ुश होंगे और न अंतर में अभ्यास कर सकेंगे। फिर उनको जाँच और परख कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की कि जो वे जीवों पर कर रहे हैं, कैसे हो

सकती है ? और फिर राधास्वामी मत और उसके अभ्यास की बड़ाई का यक़ीन कैसे हो सकता है ?

१६–जिस किसी ने, एक या दो या ज़्यादा बार सतसंग करके राधास्वामी मत को अच्छी तरह समझ लिया है, और संशय और भरम उसके दूर हो गये हैं, और निश्चय उसका और सरन राधास्वामी दयाल के चरनों में पक गई है और भक्ति मार्ग यानी परमार्थ के क़ायदे और रीत अच्छी तरह समझ लिये हैं और उसके मुआफ़िक़ जिस क़द्र बनता है, बरताव भी करता है और अपने मन और इन्द्रियों की चाल की निरख-परख करके बचनों के मुआफ़िक़ उनकी सम्हाल और सफ़ाई में कोशिश करता रहता है, और अभ्यास जहाँ तक मुमकिन है, राधास्वामी दयाल की दया लेकर दुरुस्ती से करता है, और जो विघ्न उसमें खलल डालते हैं उनको परख कर, उनके दूर करने का जतन जैसा कि मुनासिब है, करता है, और अंतर और बाहर थोड़ी-बहुत मेहर और दया राधास्वामी दयाल की अपने ऊपर परखता है, उसको ज़्यादा ज़रूरत सतसंग में आने की नहीं है । क्योंकि उसको बानी और बचन के पाठ और अंतर के अभ्यास और बचनों के मनन और विचार से वह फ़ायदा हासिल हो सकता है, जो सतसंग में प्राप्त होगा। लेकिन जब उसका दिल चाहे और मौक़ा मिले तब उसको इख़्तियार है कि सतसंग में शामिल होकर उसका

आनन्द और बिलास हासिल करे ।

२०–जो लोग कि बहुत दूर देश में रहते हैं, उनको चाहिये कि एक बार तो जब और जैसे मौक़ा मिले, ज़रूर सतसंग में शामिल होवें। और जो यह मुमकिन न होवे तो उन सतसंगियों का, जो एक या दो बार सतसंग में शामिल हो चुके हैं, सतसंग करके, अपने संशय और भरम दूर करावें और प्रीत और प्रतीत चरनों में राधास्वामी दयाल के बढ़ावें, और पोथी सार बचन वग़ैरा को समझ २ कर अकसर पढ़ते रहें ।

बचन १२

चेत कर सतसंग और अभ्यास करके परमार्थी चिन्ता और खटक हिरदे में पैदा करना कि जिससे पूरा काम बन जावे

१–जो कि राधास्वामी मत कुल्ल मालिक से मिलने और उसके धाम में बासा पाने का मत है, इस वास्ते इसके रक्षक, और जो जीव कि सच्चे मन से इस में शामिल होवें, उनके सम्हालने वाले, और धुर घर में पहुँचाने वाले, राधास्वामी दयाल आप हैं। बिना उनकी मेहर के कोई जीव इस मत में सच्चा होकर नहीं लग सकता और

न दुरुस्ती से कार्रवाई उसके अभ्यास की जारी रह सकती है।

२—जो जीव कि सतसंग में आवें और बचन चित्त देकर बिना पक्षपात सुनें और अपनी विद्या बुद्धि और चतुराई को पेश न करें, तो थोड़े दिन के सतसंग करने में, यह मत उनकी समझ में अच्छी तरह आ सकता है और संदेह और भरम दूर हो सकते हैं। तब, जो जीव कि सच्चे खोजी और दर्दी हैं और दुनिया का हाल देख कर उनके मन में किसी क़दर बैराग आया है, वे, राधास्वामी दयाल की बानी और बचन सुन कर ज़रूर मगन होंगे, और अंतर में सतसंग का रस लेकर तृप्त होते जायेंगे। ऐसे जीवों को राधास्वामी दयाल अपने सतसंग में लगावेंगे और रास्ते का भेद और जुगत चलने की दरियाफ़्त करके वे जीव अभ्यास शुरू कर देंगे।

३—लेकिन, जो जीव कि अधिकारी यानी सच्चे दर्दी नहीं हैं, वे जो इत्तिफ़ाक़ से सतसंग में आ भी जावेंगे, तो पक्षपात अपने ख़ानदानी मत को नहीं छोड़ेंगे, और बचन उलटे-सुलटे कह कर संतों के बानी और बचन को अच्छी तरह नहीं समझेंगे, और एक, दो या तीन बार सतसंग में आकर बैठ रहेंगे, और बाहर निकल कर अपनी ओछी बुद्धि और मत के मुवाफ़िक़ संत मत की निंदा करेंगे। ऐसे जीव सतसंग में लगाने के लायक़ नहीं हैं।

पर उनके मन में भी बीजा पड़ जावेगा और किसी न किसी वक़्त जब उनके कर्मों का भार किसी क़दर हलका हो जावेगा, तब वह बीजा अंकुर पैदा करेगा। यानी वे जीव फिर सतसंग में आवेंगे और होशियारी के साथ बचन सुन कर मानेंगे, और थोड़ा बहुत अभ्यास भी उनसे बन पड़ेगा।

४–सच्चे परमार्थी जीव जो सतसंग और अभ्यास में लगाये गये हैं, उनकी प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में और सुरत शब्द-मार्ग की कमाई में दिन २ बढ़ती जावेगी। यहाँ तक कि मन और इन्द्रियों के भोग उनको कम प्यारे लगेंगे, और आलस और नींद और भूख आहिस्ता आहिस्ता कम होती जावेंगी और गुरु-दर्शन और सतसंग और प्रेमी जन में प्यार बढ़ता जावेगा, और राधास्वामी नाम और राधास्वामी दयाल के चरन उनके हिरदे में किसी क़दर बस जावेंगे। ऐसे जीवों को राधास्वामी दयाल अपनाते हैं, यानी उनकी रक्षा और सम्हाल हर दम मंज़ूर है, और अंतर और बाहर उनको परचे मेहर और दया के मिलते जावेंगे।

५–फिर उन्हीं जीवों की सरन राधास्वामी दयाल के चरनों में दृढ़ और मज़बूत होती जावेगी। और वे ही जीव अपने मन और इन्द्रियों के हाल और चाल की निरख और परख दुरुस्ती से कर सकेंगे, और ना-मुनासिब और

ग़ैर वाजिब ख़्वाहिशें संसार की, उनके मन में, कम उठेंगी और जब २ उठेंगी तो फ़ौरन उनको वे रोकेंगे और हटावेंगे। और जब कभी भूल-चूक कर, या पुरानी आदत और स्वभाव के मुवाफ़िक़, ऐसी चाहों में कभी २ बह जावेंगे, तो जल्द होशियार होकर अपनी हालत पर झुरेंगे, पछतावेंगे और शरमावेंगे, और प्रार्थना करेंगे। और उस दिन कुछ भजन और ध्यान ज़्यादा करेंगे ताकि जो नुक़सान और हर्ज, मन और इन्द्रियों की कुचाल से, हुआ है, उसकी सम्हाल हो जावे।

६-फिर आहिस्ता २ उन जीवों की ऐसी हालत होती जावेगी कि उनको झीना यानी बारीक ख़्याल, परमार्थ यानी राधास्वामी दयाल के चरन कँवल का, थोड़ा-बहुत हर वक़्त रहेगा और अपनी हालत की परख और जाँच हर रोज़ करते रहेंगे और दिन २ बचनों के मुवाफ़िक़ अपने मन और इन्द्रियों की दुरुस्ती और सफ़ाई और सम्हाल करते जावेंगे, और मन और सुरत को समेट कर ध्यान और भजन के वसीले से आहिस्ता २ निज घर की तरफ़ चढ़ाते जावेंगे।

७-अब समझना चाहिये कि जब तक कोई सतसंगी इस तौर पर कि जैसा ऊपर लिखा है, चेत कर सतसंग करके, अभ्यास में थोड़ी-बहुत मेहनत दुरुस्ती के साथ नहीं करेगा, और सतसंग में अच्छी तरह निर्णय करके राधास्वामी

दयाल के सर्व समर्थ और कुल्ल मालिक होने का, और यह कि सुरत शब्द-मार्ग के सिवाय और कोई अभ्यास ऐसा आसान और धुर पहुँचाने वाला नहीं है, पूरा निश्चय धारण नहीं करेगा, और अपने मन और इन्द्रियों की निरख-परख यानी चौकीदारी होशियारी के साथ नहीं करेगा, तब तक उसकी तरक़्क़ी, परमार्थ की, राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़, जैसा चाहिये, नहीं होवेगी। और न उन की दया और मेहर की परख और जाँच आवेगी कि जिससे उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावे और सरन दृढ़ होती जावे।

८—ऐसी हालत, जैसी कि दफ़ा ६ में लिखी है, जिस किसी को दया से हासिल होती जावे, तो जानना चाहिये कि वही जीव मेहरी और बड़ भागी है, और वही एक दिन गुरुमुख बन जावेगा। क्योंकि सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरन उसके हिरदे में बस गये, और वे दिन २ संशय और भरम और संसारी चाहों का कूड़ा-करकट उसके हिरदे से निकाल कर एक, दिन पूरी सफ़ाई कर देंगे। और राधास्वामी दयाल की प्रीत की खटक ऐसी उसके हिरदे में पैदा कर देंगे कि वह किसी वक़्त और किसी काम में नहीं बिसरेगी। फिर ऐसे जीव, अपने उद्धार की सूरत, अपनी ज़िंदगी में आप देख कर, मगन हो जावेंगे और जब तक उनका देह और संसार में बासा है, तब तक

होशियारी से कार्रवाई करते रहेंगे, कि जिस में माया और मन ताक़त पाकर, किसी तरह से उनके काम में विघ्न न डालें।

६–इस वास्ते सब सतसंगी और सतसंगिनों को मुनासिब है कि जिस क़दर जिससे बन सके, राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर इसी तौर से जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुआ है, होशियारी के साथ सतसंग और अभ्यास करें, और प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ाते और पकाते जावें कि जिसमें उनका काम जल्दी बन जावे और किसी तरह का संशय और भरम मन में बाक़ी न रहे, और किसी क़दर सच्ची खटक उनके हिरदे में बस जावे कि जिससे कुल कार्रवाई परमार्थ की दुरुस्ती से जारी रहे और दिन २ तरक़्क़ी होती जावे और संसारी स्वभाव और आदतें परमार्थी चाल के साथ बदलती जावें।

बचन १३

मज़बूत करना प्रतीत और प्रीत का, राधास्वामी दयाल के चरन कँवल में

१–कुल कामों में चाहे परमार्थी होवें, चाहे दुनिया के, पहिले प्रतीत और यक़ीन दरकार है। जब तक कि

जीव को पूरी प्रतीत और यक़ीन, किसी अच्छे काम का, नहीं होता, तब तक वह उस काम को प्रीत और दुरुस्ती से नहीं करता, और न नाक़िस काम के करने से ख़ौफ़ खाता है।

२–प्रतीत में बहुत दरजे हैं। लेकिन बिना गहरी और पूरी प्रतीत के (कि जो किसी वक़्त और किसी हालत में चाहे दुख होवे या सुख, डिग न जावे, और एक रस क़ायम रहे) पूरा काम नहीं बन सकता, और वैसे तो जिस क़दर जिसकी प्रतीत है, उसी क़दर उसको फ़ायदा और फल उसका ज़रूर मिलेगा।

३–पूरी प्रतीत का दृष्टान्त यह है कि (१) जैसे किसी को कहा गया कि तेरे फ़लां मकान में ज़मीन के अन्दर इतनी गहराई पर ख़ज़ाना है। जो उसको इस बात की प्रतीत आ गई तो वह ज़रूर उसका खोदना शुरू करेगा और जब तक कि ख़ज़ाना नहीं निकले, तब तक बराबर मेहनत के साथ खोदना जारी रक्खेगा, और (२) जैसे किसी को कहा गया कि तेरे फ़लां मकान में ज़हरीला सर्प है, तो वह जब तक कि उस सर्प को निकालने का बंदोबस्त न हो जावेगा, तब तक ख़ौफ़ के मारे उस मकान में नहीं जावेगा।

४–इसी तरह परमार्थ के मुआमले में, जब तक कि गहरा सतसंग करके यानी तवज्जह और दुरुस्ती के साथ

बचन सुन कर, और उनका मन में अच्छी तरह विचार करके, पूरी प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में, कि वे कुल मालिक और सर्व समर्थ हैं, न आवेगी, तब तक मन थोड़ा-बहुत डावाँडोल रहेगा। यानी जब तक इधर-उधर भरम उठाता रहेगा और जब तक ऐसी हालत रहेगी, तब तक, जो अभ्यास कि संत सतगुरु ने बताया है, दुरुस्ती से नहीं बनेगा, और उसका थोड़ा-बहुत रस भी जैसा कि चाहिये, नहीं आवेगा, और फिर राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रतीत भी नहीं बढ़ेगी।

५–ऐसी प्रतीत के आने में कितने ही विघ्न अपना जोर करते हैं और वह आगे लिखे जाते हैं, और उनके दूर करने का जतन भी लिखा जाता है। यह विघ्न या तो प्रतीत को डिगमिग कर देते हैं, या भुला देते हैं, या उस में संदेह पैदा कर देते हैं कि यह बात सच्ची है या नहीं, और इसमें वह फल जो कि संतों ने कहा है, मिलेगा या नहीं। और वे विघ्न यह हैं:—पहले, विशेष चाह मन और इन्द्रिय के भोग बिलास की, और लगे रहना उसी ख़्याल और जतन में। दूसरे, टेक और पकड़ अपने घराने के इष्ट और मत में। तीसरे, पकड़ और अटकाव उन बातों में, जो विद्यावान और चतुरे लोगों ने मालिक और उसके मतों की निस्बत अपनी किताबों में लिखी हैं। चौथे, पकड़ अपनी बुद्धि को समझौती में जो और मतों

का हाल पढ़ कर और सुन कर और थोड़ी-बहुत विद्या हासिल करके पैदा की है। पाँचवें, बे-ख़ौफ़ी मौत और नरकों के दुक्खों से और बे-परवाही निसबत अपने जीव के कल्यान के। छठे, अपनी अनजानता और ओछी समझ करके निंदकों के बचन सुन कर भरम जाना। सातवें, पुराने इष्ट और पिछले महात्मा और औतार और देवताओं में, जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के नीचे और उनके पैदा किये हुये हैं, भाव का होना, और मन में थोड़ा-बहुत संसारी नफ़े या नुक़सान का ख़ौफ़ करके उस भाव का क़ायम रहना। आठवें, अभ्यास यानी भजन और ध्यान के वक़्त, जैसा मन चाहता है, रस के न मिलने से, मन का रूखा और फीका या निरास हो जाना। नवें, अपनी या अपने कुटुम्बियों की तकलीफ़ के वक़्त राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रार्थना करने से, और उस तकलीफ़ के जल्द दूर न होने या घटने से, चित का दुखी और किसी क़दर सुस्त और निरास हो जाना।

६—पहिले विघ्न की निस्बत इस क़दर बयान करना काफ़ी है कि दुनिया के कारख़ाने को नज़र-ए-ग़ौर से देखना और उसके भोग और पदार्थों को तुच्छ और नाशमान समझ कर और अपनी मौत की याद चित्त में लाकर, उनकी चाह और क़दर, किसी क़दर मन से कम करना, और दुनियादारों के व्यवहार और बर्ताव को जाँच कर

उसका पूरा भरोसा न करके चित्त से उनकी क़दर को घटाना। यह बात कोई दिन में चेत कर सतसंग करके हासिल होगी। वाजबी और ज़रूरी चाह और क़दर दुनिया के सामान की (जिस क़दर कि अपने औसत दरजे पर गुज़ारे के लायक़ दरकार होवे) करने में हर्ज नहीं है। लेकिन तृष्णा और फ़िज़ूली परमार्थ में विघ्न कारक है।

७–दूसरा विघ्न, ख़ूब समझ २ कर सतसंग करने और राधास्वामी मत के उसूल और क़ायदे अच्छी तरह से समझने से, दूर हो सकता है।

८–खोजी और दर्दी जीवों को ऐसा ख़्याल नहीं रखना चाहिये कि जो ऊँचे से ऊँचा और सच्चे मत का हाल सुने तो उसको अपने घराने के पुराने मत से मिला कर जैसे बने, तैसे एक ही, और बराबर माने। क्योंकि दुनिया में हर एक चीज़ में दरजे हैं, और इसी तरह परमार्थ में भी बहुत दरजे हैं, और हर एक मत एक-एक दरजे से ताल्लुक़ रखता है? फिर सब मत बराबर कैसे हो सकते हैं। इस वास्ते जो मत कि सब से ऊँचा और गहरा है, और उसके पेट में सब दरजे आ गये हैं, तो वही मत सब से बड़ा है। और यह बात सिर्फ़ राधास्वामी मत में पाई जाती है। इस वास्ते अपने जीव के कल्याण के लिये उसको सब से बड़ा मानना

ज़रूर है, और अपने पुराने और ओछे मत की टेक को छोड़ना मुनासिब है।

६-तीसरे विघ्न की निस्बत इतना बयान करना काफ़ी होगा कि जितने विद्यावान और चतुरे पुराने वक़्तों में हो गये, या ज़माने हाल में मौजूद हैं, वे सब, नतीजे को देख कर, उसके सबब को बुद्धि से दरियाफ़्त करके, जहाँ तक कि उनकी नज़र और समझ की पहुँच हुई, बयान करते हैं, और असल हाल और आदि सबब की उनको ख़बर नहीं है। क्योंकि वह उनकी बुद्धि और नज़र की हद से बहुत दूर है, और बग़ैर अपने अंतर में अभ्यास करने के, और अपने मन और सुरत की चढ़ाई करने के, मालूम नहीं हो सकता, और इन लोगों में अन्तर का अभ्यासी, और घंट के भेद से ख़बरदार कोई नहीं हुआ और न है। और यह बात उनकी बानी और बचन से साफ़ ज़ाहिर है। यानी उस में, घट के हाल और अभ्यास का कहीं भी ज़िक्र नहीं आया है। फिर उनके बचनों को संतों के बचन के मुक़ाबले में, जिन्होंने कि सब हाल और भेद असली और आदि स्थान और कुल्ल रचना को देख कर कहा है, कैसे सही और दुरुस्त मान सकते हैं? उनको, न तो मालिक कुल्ल का दर्शन मिला और न उसकी क़ुदरत की, जो कि ऊँचे देशों की रचना में प्रकट है, ख़बर पड़ी। फिर जो कोई उनके बचन को मानेगा, वह सच्चे मालिक से विमुख होकर, हमेशा

किसी न किसी क़िस्म की देही धारन करके, दुख-सुख भोगता रहेगा और जनम-मरन के चक्कर से कभी छुटकारा उसका नहीं होगा।

१०—इस बात का सिर्फ़ इसी क़दर सबूत काफ़ी है कि कुल्ल जीव, क्या विद्यावान और क्या मूरख, इस दुनिया में, माया और उसके पदार्थ, और माया-धारियों के, आशिक़ हो गये, यानी उन्हीं में उनका भाव और प्यार और उन्हीं की चाह उनके दिल में रही, और सच्चे मालिक का भय और भाव उनके मन में नहीं आया। बल्कि उसकी मौजूदगी में भी शक और संदेह उनके मनों में रहा, और संत और साध जन उस सच्चे मालिक के, निहायत दरजे के प्रेमी और आशिक़ हुये, और अपनी बानी और बचन में उसी की महिमा और प्रीत का वर्णन किया। अब ख़्याल करो कि जो विद्यावानों को उस सच्चे मालिक की कुछ भी खबर पड़ी होती, या कुछ भी जलवा उसके अपार और अथाह नूर का नज़र आया होता, तो वे, दलीलें और हुज्जतें विद्या और बुद्धि से बना कर, जीवों को क्यों भरमाते? और उनके दिल में उस सच्चे मालिक का इश्क़ और प्रेम क्यों नहीं आया? और उसी को सब जीवों को क्यों नहीं दृढ़ाया और उस मालिक की महिमा क्यों नहीं गाई? इसी से साफ़ ज़ाहिर है कि न तो उन्होंने उस मालिक का दर्शन पाया, और न उसकी अथाह क़ुदरत

की ख़बर पाई और न पूरा यक़ीन उसकी मौजूदगी का उनके दिल में आया, फिर यह लोग सब के सब, उस सच्चे मालिक से विमुख रहे, और इस वास्ते जो कोई उन की किताब और बचनों को पढ़ेगा या सुनेगा और मानेगा वह भी उनके मुवाफ़िक़ बिमुख रहेगा। और हाल यह है कि सच्चा कुल्ल मालिक ज़रूर मौजूद है।

११–देखो, यह लोक और कुल्ल उसकी रचना, वास्ते अपनी पैदाइश और परवरिश के, इस सूरज की जो विशेष चैतन्य है, आधीन है। और यह सूरज, मय अपने तारा मंडल के, दूसरे सूरज का, जो इसका भी विशेष चैतन्य है, आधीन है। यहाँ तक तो इल्म नजूम और दूरबीन की मदद से मालूम हुआ है। और संत फ़रमाते हैं कि उस सूरज के ऊपर तीन बड़े से बड़े सूरज मंडल और हैं। जो अख़ीर मंडल है वही अपार और अनंत है और वही कुल्ल मालिक का धाम है। इस हिसाब से सच्चे और कुल्ल मालिक का मौजूद होना साबित हुआ, और जो कि कुल्ल रचना में कारीगरी और समर्थता उसकी क़ुदरत की, और इरादा और मतलब हर एक चीज़ के पैदा करने का, ज़ाहिर है, इस वास्ते वह कुल्ल मालिक, कुल्ल इल्म और ज्ञान और सर्व समर्थता और समझ-बूझ और ताक़त का भंडार है। अब ख़्याल करो कि जो कोई उसकी मौजूदगी में शक लावे या उसको अचेत और अज्ञानी और बे-ताक़त और बे-समझ ठहरावे

तो किस क़दर वह भारी पापी और गुनहगार होगा और उसकी दया और मेहर से किस क़दर दूर पड़ेगा और अभागी रहेगा ?

१२–चौथा विघ्न, मिस्ल विघ्न नम्बर दो के, चेत कर सतसंग करने और संतों की बानी और बचनों को, पक्षपात छोड़ कर, निर्मल बुद्धि से विचारने से, दूर होवेगा। संतों के सतसंग में हर एक बात का अच्छी तरह से निर्णय होता है, और वे नहीं चाहते कि कोई शख़्स उनके बचन को बे समझे हुए और बिना निर्णय करने के, अंधों और मूरखों की तरह मान लेवे। इस वास्ते खोजी, और दरदी को मुनासिब है कि जो बात कि उसने और मतों का हाल सुन कर या पढ़ कर या उनमें से किसी में शामिल होकर, अपने निश्चय में क़ायम की है, उसका निर्णय अच्छे तौर पर संतों के सतसंग में करावे, तब उसको ख़बर पड़ेगी कि आया उसकी समझ दुरुस्त है या नहीं। और जब ना-दुरुस्त या ओछी मालूम पड़े, तब फ़ौरन उसको छोड़ देवे। और इस बात की पक्ष न करे कि अपनी समझी हुई बात को एकाएक क्यों और कैसे छोड़ देवे। बल्कि संत मत का उसके साथ कोशिश करके मिलान न करना चाहिये। यह निहायत नादानी की बात है और इसमें बड़ा नुक़सान खोजी का होता है। क्योंकि जब संत देखेंगे कि यह शख़्स बे-फ़ायदा हुज्जत करता है और मतलब उसका अपनी

समझ के क़ायम रखने का है, न कि सच्ची बात को तहक़ीक़ और दरियाफ़्त करके पकड़ने और ग्रहण करने का, तब वे तवज्जह नहीं करेंगे। और यह शख़्स असल और सच बात के समझने और पकड़ने से महरूम रह जावेगा। और अपने जीव के कल्याण करने में आप अपनी ओछी समझ और उसकी पकड़ में मूर्खों के मुवाफ़िक़ हठ करने से विघ्नकारक होगा। क्योंकि जितने मत दुनिया में जारी हैं, वे सब संत मत के मुक़ाबले में ओछे हैं। और विद्यावान और बुद्धिमानों के मत तो बिलकुल अक़्ली हैं और असल और सच्ची बात से बे-ख़बर। फिर जिस किसी मत की, यह शख़्स, पकड़ धारन करेगा, वह ज़रूर ओछा होवेगा। और उस पकड़ में हठ करने से इसके पूरे और सच्चे उद्धार में ख़लल आवेगा, यानी सच्चे मालिक के धाम में नहीं पहुँचेगा, रास्ते में कहीं न कहीं माया के घेर में ठहर जावेगा। और चाहे देर के साथ फिर पैदा होवे, पर जनम-मरन और उसके साथ दुख-सुख के भोग की उपाधि दूर नहीं होवेगी।

१३—पाँचवाँ विघ्न विषई यानी ऐयाश और संसारी लोगों के संग से पैदा होता है। वे लोग इन्द्रियों के भोग नहीं छोड़ना चाहते, और इस सबब से कोई बात जो उनके इन्द्रियों के विषयों के रस लेने में ख़लल डाले, उसको मानना नहीं चाहते, और अपनी काम, क्रोध और लोभ, मोह की सनी हुई बुद्धि से, संतों और महात्माओं के बचनों को,

झूठ मूठ का ख़ौफ़ दिखाने वाले समझ कर, उनका निरादर करके यक़ीन नहीं लाते हैं, और कहते हैं कि आक़बत की खबर खुदा जाने, अब तो आरम से गुज़रती है। यानी आख़िरत के हाल को सिवाय मालिक के और कोई नहीं जानता, अब जो ऐश और आराम मिल रहा है, इसको क्यों छोड़ें ? ऐसे जीव इसी जनम में दुख-सुख के धक्के खाते हैं और रोग-सोग भोगते हैं और फिर भी नहीं चेतते। आख़िरत में उनको बहुत भारी तकलीफ़ और कष्ट भोगने पड़ेंगे और तब अपनी ग़लफ़त और बे-परवाही पर हाथ मल कर अफ़सोस करेंगे। लेकिन उनका उस वक़्त का पछतावा कुछ फ़ायदा नहीं देगा।

१४—ज़ाहिर है कि जितने दुनिया के भोग हैं, वे सब नाशमान हैं और जो ज़्यादा उनका भोग किया जावे तो फ़ौरन दुख पैदा करते हैं। और जो मन में चाह उन्हीं की ज़बर रही और उन्हीं की प्राप्ति के लिये उमर भर जतन करते रहे, तो इसी ज़िन्दगी में जब बुढ़ापा आता है, वे लोग ब-सबब बे-ऐतदाली के, किसी न किसी रोग में मुब्तिला होकर, बहुत दुख भोगते हैं। और जब स्वभाव के मुवाफ़िक़ उन भोगों की चाह उठाते हैं तब या तो वे भोग, निर्धनता के सबब से, मुयस्सर नहीं आते, या बीमारी के सबब से उनको भोग नहीं सकते, और तड़प २ कर जान देते हैं। फिर थोड़े दिन का ऐश और आराम भोग करके

किस क़दर दुख और निरादर और मन और इन्द्रियों को ज़बरदस्ती रोकने की तकलीफ़ उठाते हैं। इस वास्ते अक़्लमन्द आदमी को, पहिले ही से, समझ कर और दुनिया का हाल, और विषई लोगों की हालत देख कर नसीहत लेना और आप होशियारी से बर्तना चाहिये।

१५—छठा विघ्न बहुत भारी नुक़सान करता है, यानी जीव निन्दकों के बचन सुन कर बे विचारे या तहक़ीक़ किये हुए, या बग़ैर अपनी आँख से हाल और चाल देखने के, सतसंग से हट जाते हैं और अपने कच्चे शौक़ को दबा लेते हैं। इस वास्ते खोजी और दर्दी को मुनासिब है कि जो बात सुने, उसको पहिले महात्माओं या परमार्थी लोगों के बचन और चाल से मिलावे, या जो उसको यह ताक़त नहीं है तो आप, सतसंग में जाकर, वहाँ की चाल-ढाल अपनी आँख से देखे, और जिस बात में शक होवे उसको बे तकल्लुफ़ खोल कर बयान करके उसकी असलियत को दरियाफ़्त करे। और जो चाल उसके ना पसंद होवे तो उसके जारी करने का सबब और उसका फ़ायदा, निर्णय करके समझे। तब उसको ख़बर पड़ेगी कि निंदक लोग भारी नादान हैं। कभी आप जाकर उन्होंने कोई चाल नहीं देखी और न कोई बात सुनी। ग़रज़मन्दों के कलाम को मूर्खों के तौर पर मान लिया और सतसंग को बुरा-भला कहने लगे। और गरज़मन्द वे लोग हैं कि जो संतमत यानी अंतर के

अभ्यास के जारी होने में, चाहे वह वेद और शास्त्र और पुरान और क़ुरान के मुवाफ़िक़ है, अपना नुक़सान समझते हैं, क्योंकि वे परमार्थ के रास्ते से बिल्कुल बे-ख़बर हैं। सिर्फ़ रोज़गार के ख़ातिर दो-चार क़िस्से कहानी की किताबें और इसी क़िस्म की बातें बाहरमुख पूजा और इष्ट की, दुनियादारों के बहलाने और फुसलाने और अपना मतलब निकालने के लिये, याद करते हैं। और घरों में जाकर औरतों को ख़ौफ़ दिलाते है कि जो तुम्हारे मर्द उस सतसंग में जावेंगे तो तुमको और दुनिया को छोड़ देंगे। और मर्दों को समझाते हैं कि जो औरतें सतसंग में जावेंगी तो ख़राब होवेंगी और इसमें बड़ी बदनामी होवेगी। और जब किसी को सुनते हैं कि वह ख़िलाफ़ उनकी समझौती के सतसंग में जाने लगा तो वे उसकी बिरादरी के लोगों से मिल कर, उस की हँसी उड़ाते हैं, और तान और ठठोली की बातें कह कर दस-बीस आदमियों के जलसे में उसको शर्म दिलाते हैं, ताकि वह ख़ौफ़ और शरम खाकर जल्द सतसंग में जाना छोड़ देवे। जो कोई ऐसे ख़ुद-मतलबी लोगों या मूरख संसारियों के बचन, निंदा के, सुन कर सतसंग में शामिल नहीं होवेगा, या थोड़े दिन शामिल होकर उनके डर से हट जावेगा, वह अपने जीव के सच्चे कल्याण में आप विघ्नकारक और हारिज होवेगा।

१६—सातवें विघ्न का सबब यह है कि इस जीव के

दिल में दुनिया और उसके सामान और संसारी लोगों का भाव और क़दर ज़्यादा है, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में अच्छी तरह सतसंग करके, जैसी चाहिये, वैसी प्रीत और प्रतीत नहीं आई। मूरख और खुद मतलबी लोगों के डराने से यह जीव जल्द अपने ऐतक़ाद से फिसल जाता है, और समझता है कि जो पुराने इष्टों को छोड़ दिया जावेगा तो वह कुछ न कुछ इसका संसारी नुक़सान कर देंगे, और ज़रा नहीं सोचता कि जो कुछ आराम या तकलीफ़ होती है, वह अपने पिछले कर्मों का फल है, और जब कि कोई राधास्वामी दयाल की सरन में आया तो वह तकलीफ़ भी उनकी दया से बहुत कम हो जाती है।

१७–किसी देवता या औतार की ताक़त नहीं है कि बेवास्ता किसी जीव को तकलीफ़ दे सके। जो कुछ कि होता है वह जीव के पिछले कर्मों का भोग है, और वह कर्म राधास्वामी मत के अभ्यास करने से दिन २ हलके होते और घटते जाते हैं।

१८–आदमी को चाहिये कि नज़र-ए-ग़ौर से देखे कि दुनिया में जीवों को कैसी २ सख़्त तकलीफ़ें हो रही हैं, और हर एक अपने ख़ानदानी मत और इष्ट को मान रहा है, फिर जो उन इष्टों में ताक़त तकलीफ़ देने की है तो तकलीफ़ दूर करने की भी होगी। फिर वे क्यों नहीं उन जीवों की सहायता करते ?

१६—इस वास्ते मूरखों और ग़रज़मंद लोगों के धमकाने से कि फ़लाँ तकलीफ़ राधास्वामी मत में शामिल होने से हुई, कभी किसी को अपनी प्रतीत और प्रीत में डर कर खलल नहीं डालना चाहिये। यह कहन ऐसे लोगों की बिलकुल ग़लत और बनावट की है और जो अ-विचारी हैं और सतसंग चेत कर नहीं करते, वे ऐसी धमकियों में आकर सतसंग से हट जाते हैं और अपना नुक़सान आप करते हैं। और अक़्लमंद और समझवार लोग जो सतसंग समझ-समझ कर करते हैं, वे सैकड़ों नमूने इस दुनिया में दे सकते हैं कि, बग़ैर छोड़ने अपने इष्ट और मत के, बहुत से आदमी दुख भोगते हैं, बल्कि तान मारने वाले और धमकाने वाले आप ही ऐसी तकलीफ़ों में मुब्तिला होते हैं। फिर जो सबब उनके दुक्खों और तकलीफ़ का है, वही उन जीवों की तकलीफ़ का जो राधास्वामी मत में शामिल हुए हैं समझ लेना चाहिये। बल्कि इन जीवों की किसी क़दर सहायता राधास्वामी दयाल अपनी दया से तकलीफ़ की हालत में भी फ़रमाते हैं। और वे जीव जो और मतों में हैं और ज़ाहिरा अपने इष्ट को मानते नज़राई देते हैं, और अंतर में पूरा यक़ीन नहीं रखते; उनकी सहायता कुछ भी नहीं होती, और अपने इष्ट को छोड़ कर इधर-उधर सहायता के वास्ते भटकते हैं और भरमते फिरते हैं।

२०—आठवाँ विघ्न अक्सर उन लोगों को सताता है

कि जो अभ्यास में रस कम पाते हैं या अपने मन की चाह के मुवाफ़िक़ नहीं पाते हैं या जिनको शब्द साफ़ नहीं मालूम हुआ है।

२१–यह लोग जल्दी करते हैं और यह नहीं ख़्याल करते हैं कि हर एक जीव का अधिकार मुवाफ़िक़ उसके शौक़ और मन की निर्मलता और चित्त की निश्चलता के जुदा २ है। और जिस क़दर निर्मलता और निश्चलता की कसर है, उसी क़दर रस के मिलने में भी देर है। सो इसका यही इलाज है कि नेम से अभ्यास करे जाय और मन और इन्द्रिय और चित्त को अभ्यास के वक़्त जिस क़दर मुमकिन होवे, रोक कर, स्वरूप या शब्द में लगावे, और जब-तब प्रार्थना भी करता रहे तो आहिस्ता २ सफ़ाई होती जावेगी और रस मिलता जावेगा।

२२–बाज़े सतसंगी अपनी चाह के मुवाफ़िक़ कुछ क़ुदरत का खेल और तमाशा अंतर में देखना चाहते हैं। और जो वह नज़र न आवे तो ख़्याल करते हैं कि हमको कुछ हासिल नहीं हुआ। और हाल यह है कि जो कुछ सैर नज़र आवेगी, वह मायक होगी और क़ायम नहीं रहेगी। सतसंगी को चाहिये कि अपनी तरक़्क़ी के वास्ते अपने मन और सुरत को एकाग्र करके स्वरूप के या शब्द के आसरे, पहिले या दूसरे स्थान पर जमावे। वहाँ जिस क़दर ठहराव होगा, उसी क़दर रस ज़रूर आवेगा। इसी को

अभ्यास का फल समझे और दिन २ इसी में तरक़्क़ी करता जावे।

२३—जो किसी पिछले या हाल के कर्मों के चक्कर से मन और सुरत एकाग्र और स्थिर न होवें तो घबरावे नहीं, और न निरास न होवे, और न यह समझे कि राधास्वामी दयाल उस पर दया नहीं करते हैं। बल्कि ऐसे वक़्त में ज़्यादातर कोशिश और होशियारी से अभ्यास करे, और जो भजन में मन न लगे, तो ध्यान ही करे, और जो उसमें भी मन न लगे तो धुन के साथ नाम का सुमिरन और पोथी का पाठ करे। आहिस्ता २ चक्कर बदलेगा, और अभ्यास में ब-दस्तूर रस आने लगेगा। ऐसे वक़्त में बानी और बचन को पढ़ कर, प्रीत और प्रतीत की ज़्यादा सम्हाल करे कि डिगमिग न होवे। नहीं तो धुन के साथ सुमिरन और पोथी का पाठ भी अच्छी तरह नहीं बन सकेगा।

२४—और मालूम होवे कि पोथी का पाठ अर्थ समझ कर और जो उसमें स्थानों का ज़िक्र है उन पर मन और सुरत को फेर कर, यानी स्वरूप के आसरे जमा कर करे, तो वह भी थोड़ा-बहुत भजन और ध्यान की बराबर रस दे सकता है। इस वास्ते मुनासिब है कि पहिले दो शब्द चितावनी के पढ़ कर, फिर प्रेम और भेद के शब्दों का पाठ

करे तो मन किसी क़दर सिमट कर लगेगा और तब रस भी आवेगा।

२५—नवें विघ्न के दूर करने या उसके असर को कम करने का जतन यह है कि सतसंगी अपने मन में विचार करे कि जो तकलीफ़ उसको या उसके कुटुम्बियों को होती है, वह पिछले कर्मों का भोग है, और उस में भी किसी क़दर सहायता राधास्वामी दयाल की संग है। यह बात नहीं है कि वे उस तकलीफ़ को नहीं देखते हैं और दया नहीं करते हैं। सतसंगी को चाहिए कि धीरज के साथ बरदाश्त करे, और जो बीमारी है तो दवा भी करे, और जो मन न माने तो चरनों में प्रार्थना करे कि या तो थोड़ी-बहुत बरदाश्त की ताक़त दी जावे या वह तकलीफ़ कम या दूर कर दी जावे। पर ऐसी आस धर कर प्रार्थना न करे कि फ़ौरन उसका असर पैदा होवे। किसी क़दर मौज का भी आसरा रक्खे और जिस मसलहत से कि तकलीफ़ भेजी गई है उसका भी विचार करे। और जो मसलहत समझ में न आवे तो बहुत घबराहट या निरासता मन में न लावे। आहिस्ता २ दया का ज़हूर होवेगा, और जैसी मौज होगी उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई होवेगी। यानी जो कभी मौज इसके मन की चाह के बर-खिलाफ़ है तो वैसा नतीजा ज़ाहिर होगा और जो मुवाफ़िक़ है तो जल्दी या आहिस्ता २ दुख दूर होता जावेगा। सतसंगी को दोनों

सूरत में धीरज और बरदाश्त के साथ राधास्वामी दयाल की मौज के साथ मुवाफ़िक़त करनी चाहिये और जहाँ तक मुमकिन होवे, रूखा-फीका होकर अपनी प्रीत और प्रतीत में खलल या कसर पैदा न होने न होने देना चाहिये। नहीं तो दुख आर तकलीफ़ दुचंद व्यापेगी। और जो धीरज के साथ वह सतसंगी अपने चित्त को जब-तब चरनों में जोड़ता रहेगा, तो किसी क़दर दया का असर यानी शांति अंतर में मालूम होगी, और तब उस तकलीफ़ या दुख का असर कम व्यापेगा।

२६–जो सतसंगी कि होशियारी के साथ सतसंग और अभ्यास करता है, और जिसने ऊपर के लिखे हुए विघ्नों को अच्छी तरह निर्णय करके समझ लिया है, और उनके दूर करने का जतन भी करता रहता है, तो उसको वे विघ्न कम सतावेंगे, और जो कभी पेश भी आवेंगे तो बहुत कम ठहरेंगे, और उसकी प्रीत और प्रतीत में बहुत कम खलल डालेंगे। और फिर वह सतसंगी आहिस्ता २ अपनी प्रतीत और प्रीत को पूरे दरजे पर पहुँचा कर राधास्वामी दयाल की पूरी दया और मेहर पाकर गुरुमुखता का दरजा हासिल करेगा, यानी सब तरह इसी ज़िंदगी में अपना काम राधास्वामी दयाल की दया से पूरा बनवा लेगा।

बचन १४

वर्णन प्रीत और प्रतीत का गुरु चरनन में

भाग पहिला

१—बचन नम्बर १३ में हाल प्रीत और प्रतीत का कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में, लिखा गया है, और जो विघ्न कि मज़बूत करने प्रीत और प्रतीत में वहाँ हारिज होते हैं, वही थोड़े-बहुत गुरु सतगुरु की प्रीत और प्रतीत मज़बूत करने में पेश आते हैं। इस वास्ते जो जतन कि उनके दूर करने या घटाने के लिये वहाँ बताये गये हैं, वही थोड़े-बहुत यहाँ भी काम देवेंगे।

२—जैसे वहाँ अनेक मत और अनेक इष्ट यानी मालिक क़रार दिये गये हैं, ऐसे ही अनेक तरह के गुरु भी पैदा हुए हैं। यानी हर एक ने अपना इष्ट और अभ्यास जुदा २ मुक़र्रर किया और जुदी जुदी शिक्षा जारी करी। और जो थोड़े से अपनी २ हद्द में सच्चे भी हुए, उनकी नक़ल करने वाले झूठे गुरु बहुत से बन बैठे, और जीवों को तरह २ के धोखे देकर उनसे सेवा कराने लगे, और उनका धन हरने लगे, और कहीं २ जबरदस्ती और ज़ोर के साथ अपनी पूजा कराने लगे।

३—इस सबब से बारम्बार और जगह २ धोखे खाकर जीवों के दिल में अनेक तरह के शक और संदेह पैदा हो गये। यहाँ तक कि चाहे कोई सच्चा होवे या झूठा और पूरा होवे या अधूरा, एकाएक उसकी प्रतीत कोई नहीं कर सकता, और दिल में ख़ौफ़ रहा आता है कि शायद पाखंडी और दग़ाबाज़ न होवे।

४—सिवाय इसके अनेक मत और इष्टों के जारी होने से, जो कोई सच्चे मत और पूरे और सच्चे इष्ट का भेद बतावे, उसकी लोग प्रतीत नहीं लाते। बल्कि शुरू में ऐसा ख़्याल करते कि अपनी नई दुकान चलाने के वास्ते नई बातें अपने मन से पैदा करके जारी करना चाहते हैं। और ज़ाहिरी रस्म और बर्ताव को देख कर और उसकी असलियत को ज्यों का त्यों न समझ कर निंदा करने लगते हैं।

५—सबब इन बखेड़ों का जो कि सच्चे और पूरे गुरु की प्रतीत और प्रीत हिरदे में बसाने के पैदा हुए, यह है कि लोग अपने ख़ानदानी मत से ना-वाक़िफ़ हैं यानी वेद और शास्त्र और क़ुरान वग़ैरा के असली मतलब से बे-ख़बर हैं। और जो राह और रस्म और क़ायदा और व्यवहार सच्चे परमार्थ का है, उससे भी ना-वाक़िफ़ हैं। सिर्फ़ रस्मी और बाहरमुखी परमार्थ निहायत नीचे दरजे का, जो कि हर एक मत में रोज़गारी या विद्यावान लोगों ने जारी

किया है उसीसे बिधी मिलाया चाहते हैं, और अपनी अनजानता से शक और शुबहा पैदा करके बे-फ़ायदा निंदा स्तुति करने लगते हैं।

६—सिवाय इसके संसारी लोगों को, जब तक कि उन्होंने कहीं सतसंग नहीं किया है और न अपने मन और बुद्धि से परमार्थ की तरफ़ कुछ ख़याल और तवज्जह और विचार किया है, पूरे और सच्चे गुरु की परख आनी बहुत मुश्किल है। वे दूसरों की कहन यानी राय पर चलना चाहते हैं। और वे दूसरे भी थोड़े बहुत उसी क़िस्म के लोग हैं, चाहे वह परमार्थी लिबास पहनते हैं या परमार्थी काम करते नज़र आते हैं, जैसे भेषधारी और पंडित और मौलवी वग़ैरा।

७—यह लोग आप या तो संसारी हैं या संसारियों का संग देने वाले हैं। इनको पूरे गुरु से आप भेंटा यानी मुलाक़ात नहीं हुई, और न उन से मिल कर कुछ भेद मालिक का सुना और समझा। फिर वे किसी को क्या समझा सकते हैं या पूरे गुरु के बचन सुन कर उनकी गति को क्या परख सकते हैं? और जो कि वे आप रस्मी या बाहरमुख परमार्थ के काम कर रहे हैं, या विद्या पढ़ कर बातें बनाते हैं, और असल हाल अंतरी से ना-वाकिफ़ हैं, इस वास्ते उनकी समझ और कहन सच्चे मत और सच्चे गुरु की निस्बत ऐसी ही होगी, जैसी कि संसारियों और

विद्या और बुद्धिमानों की होती है। और जगत के जीव इन्हीं की समझ और कहन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करते हैं। यानी ऐसे लोगों की बातें सुन कर और सच्चे गुरु की परख और पहिचान न करके उनकी और उनके मत की निंदा करने लगते हैं और उस में शामिल होने से डरते हैं।

८—जो कोई सच्चा परमार्थी है और उसके मन में दर्द और खोज सच्चे मालिक से मिलने और उसके रास्ते और भेद को जानने का है, वह जल्द सच्चे गुरु के सन्मुख आकर और बचन सुन कर थोड़ी सी पहिचान कर सकता है। पर शर्त यह है कि किसी दूसरे के मत की चाल-ढाल में या अपनी विद्या और बुद्धि की समझौती में अटक कर उसकी पक्ष धारन न करे, और निर्मल बुद्धि और समझ से सच्चे खोजियों के मुवाफ़िक़ बचन सुन कर अपने में आप उनको परखता जावे, और कुल्ल रचना की हालत से जो कि इन आँखों से प्रकट दिखाई देती है, मिला कर उन बचनों की प्रतीत करे।

९—ग़ौर करने की बात है कि जो कोई दुनिया के हाल को कि नाशमान और सब पदार्थ उसके नाशमान, और तुच्छ रस और सुख देने वाले हैं, और अपनी देह और इन्द्रियों को जड़ समझ कर इस तरफ़ से चित्त को हटा कर ख़्याल करे कि जैसे कुल्ल रचना में उत्तम से निकृष्ट तक बहुत से दरजे हैं, इसी तरह इस लोक और

उसकी रचना से बढ़ कर भी ज़रूर और रचना ऊँचे दरजे में होना चाहिये। और जो कि इस रचना से बेहतर और बड़े दरजे की रचना होगी, वह विशेष सुखदाई और ज़्यादा देर तक ठहरने वाली भी ज़रूर होगी। इसी तरह ऊँचे से ऊँचे दरजे का रचना सब से बढ़ कर और हमेशा क़ायम रहने वाली और महा सुख की देने वाली होगी। क्योंकि जिस क़दर सुख और आनन्द हैं, वह सब रूह यानी सुरत की धार के वसीले से मिलते हैं। और इसी तरह जिस क़दर कि ज्ञान और इल्म और समझ-बूझ और ताक़त और क़ुव्वतें हैं, वह भी सब सुरत की धार के सबब से ज़ाहिर होती हैं। और देह का मसाला जो है, वह जड़ है, और सुरत की धार के सबब से चैतन्य नज़र आता है। और ऊंचे दरजों में यह मसाला निहायत लतीफ़ दर लतीफ़ होता गया है। और जिस क़दर लतीफ़ याना सूक्ष्म मसाला है, उसी क़दर उससे जो रूप यानी सूरत या देह बनी हैं, वह भी लतीफ़ और ज़्यादा देर ठहरने वाली हैं। फिर जिस दरजे में कि यह मसाला बहुत से बहुत सूक्ष्म और लतीफ़ है या बिल्कुल मौजूद नहीं है, सिर्फ़ सुरत यानी चैतन्य ही का मंडल यानी भंडार वहाँ है, तो वह भंडार ज़रूर महा रस और महा आनन्द और महा ज्ञान का महा मंडल और ख़ज़ाना होगा। और वहाँ की रचना भा ज़रूर अविनाशी होगी, क्योंकि चैतन्य का नाश

नहीं है। और मसाले का भी असल में नाश नहीं है, सिर्फ़ सूरत बदल जाती है। फिर वह मसाला अपनी हद्द में क़ायम रहेगा और चैतन्य अपनी निर्मल हद्द में हमेशा कायम रहेगा, यानी जहाँ कि मसाला बिल्कुल नहीं है, सिर्फ़ चैतन्य ही चैतन्य है, और जहाँ कि मसाले की हद्द है, वहाँ भी चैतन्य मौजूद रहेगा, मगर उसके साथ मिला हुआ, क्योंकि बिदून चैतन्य के किसी जगह रचना नहीं हो सकती, और न ठहर सकती है। और चैतन्य से कोई जगह ख़ाली नहीं है। जब यह बात समझ में आ गई तो सिर्फ़ इस हाल का दरियाफ़्त करना भेदी गुरु से अब बाक़ी रह गया कि किस तरह उस ऊँचे देश में अपनी सुरत पहुँच सकती है यानी कौन तरकीब के साथ और किस रास्ते से गुज़र कर सकती है।

१०—अब समझना चाहिए कि राधास्वामी अथवा संत मत में सिर्फ़ यही हाल बयान किया है। यानी संत मत चैतन्य के निज भंडार का, जो कि कुल्ल का मालिक है, पता देता है। और उस रास्ते का कि जहाँ होकर सुरत (जो कि उस कुल्ल मालिक सूरज रूप की किरन है या सिंध रूप की बूँद है) नीचे की तरफ़ इस पिंड में उतरी है और जिस तरकीब से कि यह अब फिर उसी रास्ते से उलट कर चढ़ जावे, भेद बताता है। और सच्चे खोजी और ग़ौर और विचार करने वाले को यही बात दरियाफ़्त करनी

बाक़ी रहती है। फिर जब ऐसा खोजी सच्चे गुरु के सन्मुख आकर यह हाल उनके मुख से सुनेगा तो फ़ौरन उसको इस क़दर समझ और पहिचान हो जावेगी कि मेरा कारज इन्हीं के हाथ से बन सकता है।

११—अब फिर ग़ौर करना चाहिए कि जो कोई ऐसा खोजी है, वह अपने हाल को देख कर यह भी परख करेगा कि देह रूप मेरा नहीं है। क्योंकि जब नींद आ जाती है, तब देह और दुनिया की ख़बर नहीं रहती और मन और इन्द्रियाँ बाहरमुख कार्रवाई नहीं कर सकती हैं, और देह और दुनिया के दुख सुख की भी ख़बर नहीं पड़ती है, और न किसी में मन का बन्धन उस वक़्त रहता है। तो इससे साफ़ ज़ाहिर हुआ कि असली मुक्ति (जो कि देह के बन्धनों और दुख-सुख और जनम-मरन से छूटने का नाम है) इसी रास्ते यानी आँखों के अन्दर होकर ऊँचे की तरफ़ चढ़ने और चलने से यानी पुतली को उलटाने और अंतर में ऊपर की तरफ चलाने से हासिल होगी। और साफ आँख से दिखलाई देता है कि जब आदमी को ग़श आता है या किसी क़िस्म की बीमारी में बेहोशी होती है या जब मौत का वक़्त क़रीब आता है, तो उस वक़्त आँख की पुतली का अन्दर और ऊपर की तरफ किसी क़दर खिंचना शुरू होता है, तो मरने के वक़्त शरीर छोड़ कर जाने का रास्ता इसी तरफ़ से हुआ।

१२—अब मालूम होवे कि राधास्वामी मत में यही अभ्यास जारी है कि आहिस्ता २ ध्यान और भजन यानी अंतर अभ्यास करके पुतली को उलटाना और घट में सुरत और दृष्टि को मुक़ाम वार चढ़ाना, और सब स्थानों को तै करके, ऊँचे से ऊँचे और सबके अख़ीर के स्थान में, जो कुल्ल मालिक का धाम और निर्मल चैतन्य का भंडार है, और जहाँ माया के मसाले का नाम और निशान भी नहीं है, पहुँचा कर विश्राम देना। वही स्थान परम और अमर आनंद का है और वहीं पहुँच कर सुरत पहुँचने वाली अमर और अजर हो जाती है और परम सुख को प्राप्त होती है।

१३—फिर ऐसे खोजी को जब यह बात मालूम हुई, तब वह निहायत मगन होगा कि जो बात उसने अपने ग़ौर और विचार और समझ से निकाली, वही सच्ची और क़ुद्रती बात साबित हुई। यानी संतों ने, जो निज घर के भेदी हैं, वही रास्ता जो क़ुद्रत ने वास्ते उतार और चढ़ाव सुरत के बनाया है, तजवीज़ किया और उसका भेद तफ़सील के साथ बतलाते हैं।

१४—अब ऐसे खोजी को किसी की गवाही और तसदीक़ की बिलकुल ज़रूरत नहीं रही, क्योंकि जो हाल और कैफ़ियत है, वह उस पर रोजमर्रा, जाग्रत और नींद की

हालत में गुज़र रही है। और इस वास्ते सिवाय इसके दूसरा रास्ता घर जाने का निश्चय करके नहीं हो सकता है।

१५—अब जो तरकीब कि संतों ने घर की तरफ़ चलने की बताई है, वह यह है कि जिस धार पर कि सुरत उतरी है उसी धार पर सवार होकर उलट जावे। और वही धार जान की धार और नूर की धार और शब्द की धार है। और शब्द के बराबर कोई रास्ता दिखाने वाला और जहाँ से कि आवाज़ आती है, वहाँ पहुँचाने वाला नहीं है। इस वास्ते शब्द को पकड़ के घर की तरफ़ चलना चाहिए और शब्द से मतलब निरी आवाज़ से नहीं है, बल्कि चैतन्य की धार से है। और वही चैतन्य की आदि धार कुल्ल रचना की कर्त्ता है। और इसी सबब से सब मतों में शब्द की महिमा और शब्द को कर्त्ता कहा है, और यह बात सब मतों से मुताबिक़ भी हो गई। पर उस शब्द का भेद किसी मत में नहीं पाया जाता है। सो उसको तफ़सील के साथ संत बताते हैं, और राधास्वामी दयाल ने निहायत खोल कर उसका बयान किया है और सहज तरकीब चलने की जारी फ़रमाई है। अब सच्चे खोजी को ऐसे गुरु पर, जो यह सब भेद बतावें, ज़रूर पूरा एतक़ाद इस क़दर आना चाहिए कि इनकी मदद से और जो जुक्ति कि वे बतावें, उसके अभ्यास से, ज़रूर उसका काम पूरा बन जावेगा यानी सच्चे मालिक के दरबार में पहुँचकर

सच्ची मुक्ति प्राप्त होगी और सच्चा और पूरा उद्धार उसका हो जावेगा यानी परम आनन्द को प्राप्त होगा।

१६–और जो उस खोजी को ऐसा यक़ीन नहीं आया तो जानो कि वह दरदी-खोजी नहीं है, सिर्फ़ बाचक-खोजी है कि बातें सुनने और समझने का शौक़ रखता है, पर मन और इन्द्रियों को रोक कर अभ्यास करने की ताक़त नहीं रखता। ऐसे खोजी को हिरसी कहते हैं, और हिरसी का उद्धार नहीं हो सकता, क्योंकि सच्चा मालिक सच्चे को पसन्द करता है, हिरसी और कपटी को उसके दरबार में दख़ल नहीं मिल सकता है। सबब यह है कि हिरसी और कपटी का झुकाव हमेशा मन और इन्द्रियों और उनके भोगों की तरफ़ रहता है, और इस वास्ते उन के मन और सुरत की धार बाहरमुख जारी होकर बिखरी रहती है, और दुरुस्ती से अभ्यास करने के वास्ते उस धार का रुख़ ऊपर की तरफ़ अंतर में फिरना चाहिये। यह दोनों बात आपस में उल्टी यानी बर-ख़िलाफ़ हैं। इस वास्ते हिरसी-कपटी जो बाहरमुख पदार्थों और भोगों में लिपट रहा है, अपने मन और सुरत को घट में अंतर और ऊपर की तरफ़ नहीं उलटा सकता है और इस सबब से वह कभी सच्चा परमार्थी और अभ्यासी भी नहीं हो सकता है, और न मुक्ति और उद्धार के लायक़ समझा जा सकता है, और न उसको सच्चे गुरु की पहिचान आवेगी

और न उनके साथ वह प्रीत करेगा। बल्कि ऐसा ख़ौफ़ खा कर कि उनके संग से उसके दुनिया के मज़ों का भोग जाता न रहे, उनके सतसंग से हट जावेगा, और कोई न कोई टेक या अपनी ओछी बुद्धि की बात बना कर संत मत के सत्य मत होने में शक पैदा करके संत सतगुरु की दया से महरूम और अभागी रह जावेगा।

१७—अब मालूम होना चाहिये कि दुनिया में दुनियादार बहुत हैं और परमार्थ के खोजी बहुत कम। और जो खोजी भी हैं, उन में दर्दी-प्रेमी बहुत कम से कम हैं और संत मत के लायक सिर्फ़ वही जीव हैं जो सच्चे खोजी दर्दी हैं। और बाक़ी जितने हैं, वे सब व्यवहारी और संसारी हैं, और संसार के भोग और पदार्थों को छोड़ना नहीं चाहते। लेकिन इसका फल और नतीजा उनको सख़्त तकलीफ़ या मौत के वक़्त मालूम होवेगा, अभी तो ग़फ़लत और भूल में पड़े हुए सच्चे परमार्थ से बे-परवाही करते हैं।

१८—जो सच्चे खोजी-दर्दी हैं, वे थोड़ी-बहुत सच्चे गुरु की पहिचान करके जैसा कि ऊपर लिखा गया, अभ्यास में लग जावेंगे। फिर जिस क़दर कि उनका अभ्यास घट में बढ़ता जावेगा, उसी क़दर उनको कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और सतगुरु की गति की ख़बर पड़ती जावेगी, यानी उनको ऊँचे से ऊँचे दरजे का हाल मालूम होता जावेगा, तब उसी क़दर वह उनके

चरनों में दीन और अधीन होता जावेगा, और उमंग कर तन, मन, और धन से सेवा करेगा, और प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ती जावेगी, और उस के साथ अंतर अभ्यास में भी तरक़्क़ी होती जावेगी ।

१६—खुलासा यह है कि जब तक किसी के मन में सच्चा खोज और दर्द परमार्थ का नहीं होवेगा और संसार से, उसका हाल देख कर, किसी क़दर बैराग चित्त में नहीं आवेगा, तब तक वह संत सतगुरु के सतसंग के लायक़ नहीं हो सकता । और न उस को सच्चे गुरु में भाव और प्यार आवेगा और न राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत आवेगी, और न राधास्वामी मत की महिमा और बड़ाई उसकी समझ में आवेगी । और चाहे कोई दूसरे प्रेमी लोगों को देख कर सतसंग में शामिल भी हो जावे, पर उससे संगत में ठहरा नहीं जावेगा । यानी मत में शामिल नाम के वास्ते रहेगा, पर अभ्यास (चाहे उपदेश भी ले लेवे) उससे दुरुस्ती से नहीं बनेगा । और इस सबब से प्रतीत भी उसको नहीं आवेगी, और न सच्ची प्रीत उसके हिरदे में जागेगी ।

भाग दूसरा

२०—संत मत में सतगुरु उनको कहते हैं जो कि धुर स्थान तक पहुँचे । और साधगुरु वह हैं जो पारब्रह्म पद तक पहुँचे । और इस वास्ते सतगुरु को सत्तपुरुष

समान, और साधगुरु को पारब्रह्म समान मानते हैं। पर इस तरह की समझ हर कोई धारन नहीं कर सकता है, जब तक कि वह कोई दिन सतसंग और अभ्यास सुरत-शब्द मारग का न करे और अपने अंतर में परचा न पावे।

२१—इस वास्ते शुरू में जिस किसी की समझ में संत मत अच्छी तरह से आ जावे, उसको इस क़दर समझ धारना कि गुरु बड़े और बुज़ुर्ग और सब तरह से सच्चे परमार्थ की कार्रवाई में मदद देने वाले हैं, काफ़ी होगा। पर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रतीत और प्रीत, अपनी समझ-बूझ के लायक़, ज़रूर लाना चाहिए कि जिससे अभ्यास और सतसंग सच्ची लगन के के साथ बनते जावें।

२२—जब इस रीत से जो कोई सचौटी और शौक़ के साथ सतसंग और अभ्यास शुरू करेगा, तो उस को आहिस्ता २ ज़रूर अपने अंतर में अभ्यास का रस थोड़ा-बहुत आता जावेगा। और गुरु का कोई दिन संग करके उनकी रहनी भी समझ में आवेगी, और उनके बचनों की भी परख और पहिचान होती जावेगी, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया के भी परचे अंतर में मिलते जावेंगे।

२३—इसी हालत के साथ ऐसे परमार्थी की प्रतीत और प्रीत, चरनों में, राधास्वामी दयाल और भी गुरु के,

दिन २ बढ़ती जावेगी, और गुप्त भेद संत मत और उसके अभ्यास का आहिस्ता २ खुलता जावेगा, और अंतर में आनंद और शान्ति आती जावेगी।

२४—संत मत में मुख्यता प्रेम की है। जो हिरदे में सच्चा प्रेम और शौक़ होगा तो परमार्थी कार्रवाई यानी अभ्यास और सतसंग आसानी से बनता जावेगा। और जिस क़दर राधास्वामी दयाल और गुरु के चरनों में प्यार आता जावेगा, उसी क़दर अभ्यास में तरक़्क़ी होती जावेगी।

२५—जितने काम स्वार्थ या परमार्थ के हैं, वे सब बिना सच्ची चाह या शौक़ के, नहीं बन सकते। और न बिना प्यार और प्रीत के कोई किसी से मिल सकता है, और न आपस में मुहब्बत के साथ संग कर सकता है। खुलासा यह कि प्रीत यानी कशिश यानी खिंचाव-शक्ति, कुल्ल रचना की कार्रवाई की जान है। बग़ैर प्रीत या कशिश परमाणु के, किसी चीज़ का रूप नहीं बन सकता, और न ठहर सकता है, और न किसी क़िस्म की कार्रवाई रचना की जारी हो सकती है, और न क़ायम रह सकती है।

२६—गहरी प्रीत राधास्वामी दयाल के चरनों में आना चाहिए, तब मेला होवे। लेकिन जो कि उन के स्वरूप का, जैसा कुछ कि है, दर्शन नहीं हुआ, इस सबब से गहरी प्रीत उनके चरनों में नहीं आ सकती। पर गुरु

के चरनों में किसी क़द्र मोहब्बत पैदा हो सकती है। यानी जिस क़द्र कि अभ्यासी ने सतसंग और अभ्यास करके उनकी और उनके शब्द की महिमा समझी और अंतर में परखी है, उसी क़द्र उसको, उनमें और राधास्वामी दयाल और उनके शब्द में प्रीत और प्रतीत पकती और बढ़ती जावेगी। और यही प्रीत अंतर अभ्यास में मदद देती जावेगी। और आहिस्ता २ एक दिन अभ्यासी का भाव और प्यार और विश्वास राधास्वामी दयाल और गुरु स्वरूप के चरनों में पूरा २ जैसा कि चाहिए, आ जावेगा, और तब काम भी पूरा हो जावेगा।

२७—गुरु में सत्तपुरुष सम भाव लाने में बड़े विघ्न मन में पैदा होते हैं। पहिले तो यह उनको मनुष्य स्वरूप देखता है। दूसरे, उनकी देह हद्द-दार दिखलाई देती है। फिर सत्तपुरुष समान उनको सर्वत्र और सर्वज्ञ कैसे माने ? तीसरे, जब यह चाहे और जिस तरह इसकी ख़्वाहिश होवे, उसके मुवाफ़िक़ कोई कार्रवाई क़ुदरती क़ायदे के मुवाफ़िक़ या बर-ख़िलाफ़ उनसे नहीं करा सकता है। अपनी मौज और दया से वे चाहे जो कुछ करें और चाहे जैसे परचे इसको अंतर और बाहर इसकी माँग और चाह से ज़्यादा-तर दिखलावें, पर जो परीक्षा के तौर पर कोई उनकी गति और ताक़त को परखा चाहे, तो वे चाहे पूरे गुरु होवें, कभी अपने आप को ऐसे जीवों पर ज़ाहिर नहीं करते

हैं। क्योंकि करामात दिखा कर जीवों को परमार्थ में लगाना मंजूर नहीं है और न उसमें जीवों का फ़ायदा है। बल्कि करामात देखने वालों की प्रीत और प्रतीत का बिल्कुल ऐतबार नहीं हो सकता है। और ऐसे लोग संसारी होते हैं, और अपनी संसार की टेक कभी नहीं छोड़ेंगे। चौथे, जो कोई पूरे गुरु की परख और पहिचान उन लक्षणों के मुवाफ़िक़ करना चाहे, जो पुरानी किताबों में लिखे हैं, तो वह धोखा खावेगा, क्योंकि उनकी क्या ताक़त कि अपनी काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की सनी हुई बुद्धि से उनकी रहनी की परख करे? सिवाय इसके, वास्ते सम्हाल और गढ़त जीवों के, वे जब २ मुनासिब समझते हैं, क्रोध और लोभ और अहंकार के स्वरूप में भी ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बर्ताव करेंगे। लेकिन उनका ऐसा बर्ताव सब देखने मात्र होगा, अंतर में नहीं बिधेगा। पर संसारी जीवों की क्या ताक़त है कि वे ऊपरी और अंतरी बर्ताव में फ़र्क़ कर सकें? इस वास्ते ऐसे जीव हमेशा डिगमिग रहेंगे और कभी उनकी प्रतीत गुरु चरनों में नहीं पकेगी। पाँचवें, ऐसे जीव गुरु के बचनों को अपनी विद्या और बुद्धि की समझ के साथ मिलावेंगे या विद्यावानों के क़ौलों से उनकी जाँच करेंगे। सो यह बात भी ना-मुमकिन होगी, क्योंकि विद्या और बुद्धि वाले अटकल से बातें बनाते हैं, और इस लोक की ज़ाहिरी क़ुदरत की कार्रवाई के

मुवाफ़िक़ आसमानी बातों की तौल और जाँच करते हैं। गुप्त क़ुदरत और उसके भेद को न तो हिरदे की आँखों से देखा और न किसी ऐसे देखे हुए से सुना न समझा। फिर उनके बचनों से संतों के बचनों को मिलाना, या मुक़ाबला करना, किस क़द्र नादानी और कम फ़हमी की बात है ? और ऐसा मेल कभी नहीं होगा और इस वास्ते इस क़िस्म के जीवों के मन में कभी पूरे गुरु की प्रतीत नहीं आवेगी, बल्कि अपनी विद्या और बुद्धि के अहंकार में ऐसा ख़्याल करेंगे कि इनका मत मूर्खों के वास्ते है। और जो विद्यावानों को उसमें शामिल होते देखेंगे तो उनको भी नादान समझेंगे, या यह कि उनकी अक़्ल में ख़लल आ गया है या उन पर जादू और मंतर का असर पैदा किया गया है। छठे, यह कि जिन जीवों के मन में मान और अहंकार भरा हुआ है और सच्ची चाह परमार्थ की नहीं है, वह पूरे गुरु की निस्बत इस क़िस्म के ख़्याल करेंगे कि अपनी मान और बड़ाई और पुजाने और आमदनी पैदा करने के लिये नया मत जारी किया है और उनकी गति की परख ज़रा नहीं आवेगी। इतना भी ग़ौर नहीं करेंगे कि जो उनके मान और बड़ाई की चाह होती और अपने मत को कसरत से फैलाने का इरादा होता तो वे कोई २ चाल इस क़िस्म की क्यों जारी करते कि जिससे संसारी जीव उन के सतसंग से डर कर दूर

भागें और उनके नज़दीक और सन्मुख भी न आवें ? जो ऐसी चाह होती तो वह पाखंडियों के मुवाफ़िक़ ऐसी चाल चलते कि दुनियादार खुश होकर उनके मत और पूजा में शामिल होते। पर वे सच्चे हैं। और सच्चे मालिक के सच्चे मत का उपदेश करते हैं। चाहे दुनियादार राज़ी होवें या नाराज़, वे हमेशा सच्ची बात कहेंगे और सच्चे मत की सच्ची चाल चलावेंगे और वे जीवों से उनके हित और कल्यान के वास्ते प्रीत करने में अपना ज़ाती मतलब कोई नहीं रखते। सातवें, संसारी जीव हमेशा अपनी ख़ातिरदारी और मान और आदर चाहते हैं और अहंकार करके सतसंग और सेवा में वहाँ के क़ायदों के मुवाफ़िक़ शामिल होना नहीं चाहते, और जो ऐसा करते हैं उन पर तान मारते हैं और पूरे गुरु की निस्बत इल्ज़ाम लगाते हैं कि वे अपने सेवकों को ऐसी कार्रवाई से क्यों नहीं रोकते ? लेकिन वे किस तरह असल परमार्थ के क़ायदे और कार्रवाई को बदल सकते हैं और सेवकों का अकाज किस तरह रवा रख सकते हैं ? इस सबब से संसारी जीव, जो सतसंग में शामिल भी हो गये हैं, अपने मन में पूरे गुरु और उनके प्रेमी सतसंगियों के निंदक बने रहते हैं, और संसारियों में जाकर तरह २ की निंदा अपनी नादानी और अहंकारी अंग के मुवाफ़िक़ करते हैं। इन जीवों को भी प्रीत और प्रतीत गुरु चरन

में नहीं आवेगी और इस वास्ते राधास्वामी दयाल और उनके शब्द में भी इनका भाव और प्यार डावाँडोल रहेगा।

२८––जो कोई सच्चा खोजी और दर्दी है, वह कभी ऐसे ख़याल और बर्ताव जिनका ज़िकर ऊपर की दफ़ा में लिखा गया, निस्बत सतगुरु और उनके सतसंग के, कभी नहीं करेगा, और अपना मतलब सच्चे परमार्थ के हासिल करने का पेश-ए-नज़र (सनमुख) रख कर जो २ कार्रवाई कि संतों ने अंतरी और बाहरी, वास्ते गढ़त मन और इन्द्रिय और स्वभाव के, जारी फ़रमाई हैं, उनको बहुत ख़ुशी के साथ मानेगा और उमंग के साथ उनके मुवाफ़िक़ काम करेगा, और संसारियों का, जो असली परमार्थ से बे-ख़बर हैं, भय और शरम अपने मन में नहीं लावेगा, और अपने मन और इन्द्रियों को थोड़ा बहुत ज़ोर देकर रोकेगा, और सच्चे तौर पर परमार्थ की कार्रवाई में लगावेगा। और फिर वही सतगुरु और राधास्वामी दयाल की दया का भागी होकर अपने अंतर और बाहर उनकी मेहर और रक्षा के परचे हर रोज़ देख कर उनके, चरनों में गहरी से गहरी प्रीत और प्रतीत करके, अपना जनम सुफल करेगा, यानी जीते जी अपने उद्धार की कैफ़ियत देख कर शान्ति और आनन्द को प्राप्त होगा।

———

बचन १५

राधास्वामी मत संदेश

जो लोग कि सच्चे खोजी सत्त पद के हैं, और अपने जीव के पूरे और सच्चे उद्धार के वास्ते दर्द के साथ सच्ची ख़्वाहिश रखते हैं, यानी सच्चे परमार्थी हैं, और दुनिया की तरफ़ से उनके दिल में किसी क़द्र उदासीनता है, उनके वास्ते सत्त मत का भेद इस बचन में कहा जाता है

१–राधास्वामी मत क्या है ?

१—राधास्वामी मत को संत मत कहते हैं और यही मत सत्त मत है, यानी सत्त पद को लखाता है और उसका भेद समझाता है।

२–राधास्वामी नाम की सिफ़त

२—राधास्वामी नाम कुल्ल और सच्चे मालिक का नाम है जो ईश्वर परमेश्वर और ब्रह्म, पारब्रह्म और आत्मा, परमात्मा और ख़ुदा और निर्वाण पद सब का निज कर्त्ता है।

३–यह नाम किसी का धरा हुआ नहीं है। इसको कुल्ल मालिक ने मेहर और दया से आप प्रकट किया। यानी यह नाम ऊँचे देश में बग़ैर मदद ज़बान या बाजे के बोल रहा है। और उस धुन को बड़-भागी अभ्यासी अपने घट में सुनते हैं।

४–जो कोई इस नाम को उसके नामी और धाम और वहाँ पहुँचने के रास्ते का भेद लेकर, प्रेम के साथ गावेगा, या उसका सुमिरन या ध्यान करेगा, या चित्त लगा कर उसकी धुन को अंतर में सुनेगा, वही कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और सतगुरु की कृपा से भव-सागर के पार जावेगा, और परम आनंद को प्राप्त हो कर, काल के क्लेश और जनम-मरन के दुक्खों से बच जावेगा ।

३–अर्थ राधास्वामी नाम के

५–"राधा" नाम "आदि सुरत" यानी "आदि धुन" का है, जो "आदि शब्द" से प्रकट हुई, और "स्वामी" नाम कुल्ल मालिक यानी "आदि शब्द" का है ।

६–शब्द यानी आवाज़ प्रथम ज़हूर यानी प्रकाश कुल्ल का है और यही सब रचना का करता है ।

७–या इस तरह समझो कि "राधा" यानी धुन उस चैतन्य धार का नाम है जो अनामी पुरुष "स्वामी" से आदि में प्रकट हुई, और उसी को आदि सुरत कहते हैं । और "स्वामी" नाम उस पुरुष यानी कुल्ल मालिक का है जो अकह

और अपार और अनंत और अगाध और अनाम है, और जिसके चरनों से धारा यानी धुन आदि में प्रकट हुई ।

८—आदि धारा यानी धुन अथवा "आदि सुरत" कुल्ल रचना की कर्त्ता है । और इस वास्ते वही कुल्ल रचना की माता है । और स्वामी यानी "आदि शब्द" कुल्ल रचना का पिता है ।

९—जब यह धुन या धारा उलट कर स्वामी या शब्द की तरफ़ मुतवज्जह होवे, तब इस धारा का नाम राधा और आशिक़ यानी प्रेमी और भक्त है, और शब्द यानी स्वामी प्रीतम और माशूक़ है ।

१०—जब तक कि यह धारा या धुन जारी है, तब तक वह और शब्द दो समझे जाते हैं । और जब कि वह धारा उलट कर शब्द यानी स्वामी में समा जावे, तब एक हो गये यानी दो का फ़र्क़ जाता रहा ।

४—ख़ुलासा हाल रचना का

११—जो धारा कि आदि में प्रकट हुई, वह उतर कर किसी क़दर फ़ासले पर ठहरी और वहाँ उसने मंडल बाँध कर रचना करी । इस स्थान का नाम अगम लोक है । और जो धारा कि वहाँ आकर ठहरी, उसका नाम अगम पुरुष है, यानी राधास्वामी दयाल के तख़्त का स्थान है ।

१२—जब अगम लोक की रचना हो गई, तब वहाँ से भी धारा प्रकट होकर नीचे उतरी, और किसी क़दर फ़ासले पर ठहर कर, और वहाँ मंडल बाँध कर, उसने रचना करी। इसका नाम अलख लोक है, और उस धारा का नाम अलख पुरुष है।

१३—अलख पुरुष से भी धारा प्रकट होकर और पहिले दस्तूर के मुवाफ़िक़ नीचे उतर कर जहाँ ठहरी, और उसने मंडल बाँध कर रचना करी, उसका नाम सत्त पुरुष और सत्तलोक है।

१४—यहाँ तक निर्मल चैतन्य यानी रूहानी रचना हुई, और राधास्वामी दयाल आप इन स्थानों में व्यापक और मौजूद हैं। यहाँ काल, क्लेश और दुक्ख और दर्द और जनम-मरन नहीं है। यह सब स्थान दयाल देश या संत देश या निर्मल चैतन्य के देश कहलाते हैं। यहाँ का प्रकाश सेत रंग का है।

१५—बहुत अरसे तक इसी क़दर रचना होकर रह गई और यहाँ की बासी सुरतें हंस कहलाती हैं। और अनंत दीप रूहानी इन लोगों के गिर्द में पैदा किये गये। उनमें हंस रहते हैं और अमी का अहार और पुरुष के दर्शन का बिलास करते हैं।

१६—ऊपर जो धारा का जिक्र लिखा गया है, वह धारा निहायत सूक्ष्म है कि किसी तरह नज़र नहीं आ

सकती और न कुछ उसका आकार मालूम हो सकता है, जैसे चुम्बक पत्थर को जब लोहे के छोटे २ टुकड़ों के सामने लाओ तो वह लोहे के टुकड़ों को अपनी धार के वसीले से खींचता है, पर वह धारा उससे निकलती हुई बिलकुल मालूम नहीं होती है। यह दृष्टान्त भी सर्व-अंग करके दुरुस्त नहीं है, लेकिन सिर्फ़ धारा की सूक्ष्मता समझाने के लिये दिया गया है।

१७–सत्त लोक के मंडल के नीचे जो चैतन्य था, वह श्याम रंग के ग़ुबार के ढका हुआ था, और जिस क़दर कि सत्तलोक से दूरी होती गई, वह ग़ुबार भी बढ़ता गया, जैसे किसी चीज़ पर तह पै तह चढ़ी हुई होती है।

१८–सत्तलोक के नीचे से श्याम धारा भूरे रंग की प्रकट हुई और यह धारा भी चैतन्य थी जैसे कि ऊपर के लोकों की धारा चैतन्य है। इस धारा ने सत्त पुरुष से बिनती करके आज्ञा माँगी कि सत्तलोक के मुवाफ़िक़ रचना करे। तब उसको हुक्म हुआ कि नीचे के देश में जाकर रचना करे। इस धारा का नाम निरंजन यानी काल-पुरुष है, और नीचे उतर कर यानी ब्रह्माण्ड में, इसी का नाम पारब्रह्म और ब्रह्म हुआ।

१९–यह श्याम धारा नीचे उतरी, पर वह मंडल बाँध कर जैसे ऊपर की धाराओं ने रचना करी, ऐसी रचना न कर सकी। तब उसने सत्तपुरुष से फिर बिनती

करके मदद माँगी। तब सत्तलोक से दूसरी धारा ज़र्द रंग की प्रकट करके नीचे उतारी गई। यह धारा सुरतों का भंडार लिये हुए आई, और फिर इसने और पहली श्याम धारा ने मिल कर नीचे के देश में रचना करी। इस धारा का नाम जोत और आद्या है, और नीचे के देश यानी ब्रह्माण्ड में इसी का नाम माया हुआ।

२०—पहिले इन दोनों धारों ने ब्रह्माण्ड की रचना करी यानी ब्रह्म सृष्टि करी। इस देश में गुबार किसी क़दर साफ़ और सूक्ष्म था, इस सबब से यहाँ की रचना भी सूक्ष्म हुई।

२१—सत्तलोक के नीचे एक स्थान यानी लोक रचा गया कि जिसको दयाल देश का द्वारा समझना चाहिये। और उसके नीचे एक भारी मैदान है, जिसको महासुन्न कहते हैं, और वह दयाल देश और ब्रह्माण्ड यानी ब्रह्म और माया देश के बीच में हद्द के तौर पर है।

२२—फिर इसके नीचे तीन स्थान निरंजन और जोत ने रचे, जो ब्रह्माण्ड की हद्द में शामिल हैं। नीचे के स्थान को सहसदलकँवल कहते हैं और जहाँ निरंजन और जोति का स्वरूप प्रकट है। और यही स्थान सब मतों का, जो दुनिया में जारी हैं, सिद्धान्त पद है। यानी इसके ऊपर का हाल किसी मत की किताबों में नहीं लिखा है। सिर्फ़ जोगीश्वर ज्ञानी ब्रह्माण्ड की चोटी तक यानी सहसदलकँवल

के ऊपर दो मुक़ाम तक गये, पर वहाँ का भेद उन्होंने गुप्त रक्खा, कहीं २ इशारे में वर्णन किया। लेकिन ब्रह्माण्ड के परे कोई नहीं गया, सिवाय संत सतगुरु के, जो कि सत्तलोक से आये और कुल्ल रचना के भेद से आपही वाक़िफ़ थे।

२३–सहसदलकँवल से तीन धारें–सत, रज, तम जिनको गुन और भी ब्रह्मा, विष्णु और महादेव कहते हैं, पैदा हुईं। और इन धारों ने नीचे के देश की रचना करी जिसको पिंड कहते हैं, और जिसमें छः चक्र शामिल हैं।

२४–इस रचना में देवता और मनुष्य और पशु औरबाक़ी कुल्ल रचना चारों खान की शामिल है। यहाँ ग़ुबार भारी था यानी स्थूल माया थी। इस सबब से यहाँ की रचना भी स्थूल हुई।

२५–चार खानों के नाम यह हैं। (१) जेरज जो झिल्ली में लिपटे हुए पैदा होवें। (२) अंडज जो अंडे से पैदा होवें। (३) स्वेदज जो पानी और पसीने से पैदा होवें। (४) उद्भिज जो ज़मीन से पैदा होवें, जैसे दरख़्त, वनस्पति वग़ैरा, और भी जो खान से पैदा होवें।

२६–इस दरजे में सूक्ष्म और स्थूल शरीर के साथ पाँच दूत (१) काम (२) क्रोध (३) लोभ (४) मोह और (५) अहंकार, और चार अंतःकरण (१) मन (२) चित्त (३) बुद्धि (४) अहंकार, और दस इंद्रिय यानी

पाँच ज्ञान इन्द्रिय (१) आँख (२) कान (३) नाक (४) ज़बान रस लेने वाली और (५) त्वचा यानी खाल, और पाँच करम इन्द्रिय (१) हाथ (२) पाँव (३) ज़बान बोलने वाली (४) पेशाब की और (५) पाख़ाने की इन्द्रिय, बतौर औज़ारों के, वास्ते कार्रवाई उन शरीरों के, सूक्ष्म और स्थूल रचना के लोकों में शामिल हुए।

२७–और इन लोकों में यानी सूक्ष्म और स्थूल लोक में, माया ने अनेक तरह के भोग इन सब इन्द्रियों के पैदा किये, और उन भोगों से मन और इन्द्रिय अपना भोग-बिलास कर रहे हैं।

२८–सुरत की धार जो ऊँचे देश से आई, वह पहिले मन को चैतन्य करती है, और मन के स्थान से जो धार सुरत और मन की मिलौनी से उठती है, वह इन्द्रियों को चैतन्य करती है। और इन इन्द्रियों के द्वारे वही धार भोगों और पदार्थों में शामिल हो कर उनका रस उन्हीं इन्द्रियों के वसीले से मन को देती है। यह कार्रवाई स्थूल देह में बैठ कर, सुरत और मन, इन्द्रियों के वसीले से इस देश में कर रहे हैं।

५–वर्णन जौहर सुरत और मन, और उनके स्थान का, पिंड में

२९–अब समझना चाहिये कि सुरत की धार दयाल

देश से आई और वह सत्तपुरुष राधास्वामी की अंस है। अंस के अर्थ टुकड़े के नहीं है। अंस कहने से सिर्फ़ यह मतलब है कि सुरत वही जौहर है जो कुल्ल मालिक का जौहर है। और वह कुल्ल मालिक सब जगह मौजूद है, पर एक देश में प्रकट और बे-परदे, और बाक़ी देश में गुप्त यानी परदे या तय से ढका हुआ। और यह परदे या तह, जिस क़दर कि प्रकट देश से दूरी होती गई, बढ़ते गये, जैसे कि प्याज़ के ऊपर या केले के दरख़्त पर तह पै तह चढ़ी होती हैं। और हर एक अंदरी तह या परदा बाहर की तह या परदे से मुलायम और साफ़ और सूक्ष्म होता है। इसी तरह यह तह या परदे, ग़ुबार यानी माया के, उस चैतन्य पर चढ़े हुए हैं। और पहिला परदा या तह निहायत लतीफ़ और सूक्ष्म, और दूसरा उससे कम लतीफ़, और तीसरा उससे कम लतीफ़ है। ऐसे ही स्थूल माया के देश में स्थूल यानी मोटी तह या परदे हैं, और सुरत उनके अंदर गुप्त है।

३०—और प्रकट और गुप्त का हाल थोड़ा-बहुत इस दृष्टान्त से समझ में आवेगा—जैसे कि इस लोक में पानी एक देश यानी समुद्र में प्रकट है और बाक़ी देशों में यानी ज़मीन पर गुप्त है, यानी तह या परदों से ढका हुआ है। कहीं वह तह या परदा चार-पाँच हाथ मोटा, कहीं दस-बीस हाथ, कहीं चालीस-पचास हाथ और कहीं इससे भी ज़्यादा।

मगर पानी हर जगह मौजूद है, और बग़ैर परदे या तह के हटाये उसका दर्शन या उससे कुछ कार्रवाई मुमकिन नहीं है।

३१–दूसरी धार निरंजन से (जिसका स्थान ब्रह्माण्ड में है और वह नीचे के देश में भी व्यापक है) निकली, और इसका नाम मन हुआ। और मन उसको कहते हैं कि जिसमें फुरना होवे यानी तरंग और ख़्याल उठे। यह नीचे के देश में दरजे-बदरजे स्थूल होता गया और यही इन्द्रियों का प्रेरक है।

३२–तीसरी धार माया से निकली। इस माया का स्थान भी ब्रह्माण्ड में है, और वही सब नीचे के देश में मौजूद है। और यह भी दरजे-बदरजे मुवाफ़िक़ परदों के स्थूल यानी कसीफ़ होती गई। इसके मसाले से तन और इन्द्रियां वग़ैरा बनीं, और यह सुरत की शक्ति से चैतन्य हैं, जिस शक्ति की धार मन के वसीले से पिंड में फैलती है।

३३–सुरत की असली बैठक पिंड में, दरमियान दोनों आँखों के, जो अंदर की तरफ़ तिल है, उसमें है। और इसी स्थान से तमाम पिंड में फैली है और जाग्रत के वक़्त दोनों आँखों में नशिस्त है। जब सुरत की धार अंदर और ऊपर की तरफ़ खिंच जाती है, उस वक़्त देह और इन्द्रियां बेकार हो जाती हैं, यानी तमाम कार्रवाई उनकी बन्द हो जाती है।

३४–मन की बैठक, खास कर, सीने के नीचे कौड़ी के मुक़ाम पर है, और वहीं से धार इन्द्रियों में आती है, और भी तमाम देह में फैलती है। लेकिन जब तक सुरत की धार ऊपर से मन के स्थान पर न आवे, तब तक यह कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता है।

३५–माया की धार से जो कि जगह २ स्थूल रूप हो गई, पिंड के अंग २ बने हैं, और वही कुल्ल देह में व्यापक है।

६–बयान हालत खिंचाव सुरत का

३६–जब आदमी की आंख की पुतली खिंच जाती है, वह फ़ौरन बेहोश हो जाता है, और देह बेकार हो जाती है, और मन और इन्द्रियां भी बेकार हो जाती हैं।

३७–इसी तरह जब ज़्यादा खिंचाव उस धार को हो जाता है, तब आदमी मर जाता है, और जो थोड़ा सा खिंचाव हुआ, तब बेहोश हो जाता है, या नींद आ जाती है और इस तरफ़ से ग़ाफ़िल हो जाता है।

३८–इससे साबित हुआ कि तमाम कार्रवाई बदन की, सुरत की धार के आसरे है। और इस धार का ऊपर से यानी दिमाग़ से, आंखों में और फिर तमाम देह में उतरना और फैलना, और फिर अख़ीर वक़्त पर इसी रास्ते से, यानी आंख के मुक़ाम से, अंदर और ऊपर की तरफ़

होकर चले जाना और पिंड का छोड़ना, साफ़ इन आँखों से नज़र आता है। क्योंकि मरते वक़्त पाँव की उँगलियों से खिंचाव उस धार का शुरू होकर रफ़्ता २ ऊपर की तरफ़ को चलता जाता है, और जब पुतली उलट गई यानी खिंच गई, तब पिंड की मौत हो जाती है।

३९—और यह बात भी इस बयान से साबित हुई कि जब सुरत जाग्रत के वक़्त आँखों में बैठी है, उस वक़्त देह और दुनिया का दुख-सुख और चिंता और फ़िक्र व्यापता है, और जब अंदर की तरफ़ थोड़ी-बहुत खिंच गई, उस वक़्त न देह की खबर रहती है और न दुनिया की, और उनका दुख-सुख भी नहीं व्यापता है। देखो जब डाक्टर लोग शीशी सुँघाते हैं उस वक़्त सुरत यानी रूह की धार हट जाती है, फिर बदन काट डालते हैं और कुछ ख़बर नहीं होती। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि देह और इन्द्रियां जड़ हैं, और सुरत चैतन्य है। उसकी चैतन्यता से यह भी चैतन्य होते हैं। और जब उससे यानी सुरत से सम्बन्ध ढीला हो जाता है या टूट जाता है, उस वक़्त यह देह और इन्द्रियाँ बेकार या मुर्दा हो जाती हैं।

४०—ऊपर के बयान से ज़ाहिर होता है कि जो कोई जीते-जी संसार और देह के दुख-सुख से बचाव चाहे, तो वह ऐसी तरकीब करे कि जिससे जब चाहे तब वह अपनी सुरत को आंख के स्थान से, अंदर और ऊपर की तरफ़

जिस क़द्र मुनासिब और ज़रूर समझे, खींच ले जावे। तब उसको तकलीफ़ और आराम, देह और दुनिया से बचाव हो सकता है।

७–रचना के तीन दरजों का बयान

४१–संतों ने कुल्ल रचना को तीन बड़े दरजों में तक़सीम किया है और वह तीन दरजे यह हैं।

(१) पहला दरजा–जिसमें निर्मल-चैतन्य यानी सिर्फ़ रूह का मंडल है, और वहाँ के लोक, और उन लोकों में सब रचना रूहानी यानी चैतन्य लतीफ़ है और यह मंडल दयाल अथवा संत देश कहलाता है।

(२) दूसरा दरजा– इस पहले दरजे के नीचे से जैसा कि ऊपर बयान हो चुका है, ग़ुबार यानी माया का ज़हूर हुआ। जितने रंग हैं, लाल से लगा कर नीले यानी काले रंग तक, सब मन और माया के रंग हैं। इस दरजे में सूक्ष्म यानी लतीफ़ माया निर्मल-चैतन्य को तह या ग़िलाफ़ के तौर पर ढके हुए है, यानी लतीफ़ माया की देहियाँ तैयार होकर और उनमें रूह बैठ कर उस देश में कार्रवाई करती है। यह दरजा ब्रह्माण्ड कहलाता है।

३–तीसरा दरजा—इस दरजे में निर्मल चैतन्य पर सिवाय सूक्ष्म माया के ग़िलाफ़ों के स्थूल माया की तहें

चढ़ी हुई हैं और इसी सबब से यहाँ के लोक भी कसीफ़, और उनकी रचना भी निहायत कसीफ़, यानी स्थूल है। छः चक्र पिण्ड के इसी दरजे में शामिल हैं।

८–इस लोक में सुरत की हालत और कार्रवाई का बयान और उसके निकासी का जतन

४२–हमारा यह पृथ्वी लोक तीसरे दर्जे में है, और इसी सबब से यहाँ की रचना भी स्थूल है और यहाँ सुरत यानी रूह कितने ही परदों में गुप्त है। किसी दरख़्त का बीज लेकर देखो कि कितनी तह या छिलके उस पर चढ़े हुए हैं, और फिर उनके अंदर मग़ज़ और मग़ज़ के भी किसी दरजे में उस बीज की रूह की बैठक है, जहाँ से कि वक़्त पैदाइश कुला फूटता है यानी प्रथम धार निकलती है। और इन परदों या ग़िलाफ़ या तह को शरीर या देह कहते हैं।

४३—इसी तरह आदमी की रूह भी कई परदों यानी शरीरों में गुप्त है। पहिला स्थूल शरीर, दूसरा सूक्ष्म और तीसरा कारण शरीर, और इन तीनों में हर रोज़ सुरत यानी रूह की आमद-ओ-रफ़्त रहती है।

४४—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि यह देश सुरत यानी रूह का नहीं है, क्योंकि यह माया का देश है और यहाँ काल और माया प्रधान यानी ग़ालिब हैं, और सुरत उनके आधीन हैं। हरचंद कि सब कार्रवाई इस देश में

सुरत की धार की ताक़त से हो रही है, पर सुरत का मुख यहाँ नीचे और बाहर की तरफ़ हो रहा है। और इस सबब से उसकी धारें मन और माया से मिल कर जारी होती हैं, और मन और माया का असर उनमें ज़बर रहता है। इस वास्ते जीव का झुकाव संसार और उसके भोगों की तरफ़ ज़्यादा रहता है।

४५—अब जब तक कि किसी मनुष्य को, ऊपर के देश के बासी या उस तरफ़ के चलने वालों का संग न मिलेगा, और वह उन से भेद रास्ते और जुगत चलने की लेकर, इस देश और इस घाट याना स्थान को आहिस्ता २ छोड़ना शुरू न करेगा, तब तक सच्चे और पूरे तौर से मन और माया का ज़ोर कम न होगा, और न उस मनुष्य की पुरानी आदतें और स्वभाव और ख़्वाहिशें और व्यवहार, जो संसारियों का संग करके पड़ गई हैं, बदलेंगी।

४६—संग और तमाशा और तजरुबा जिस सोहबत और जिस पेशे में जो कोई कि होवे, बड़ा भारी असर रखता है। यानी जैसे आदमी की सोहबत होगी और जैसा कुछ कि वह अपनी आँख से देखेगा, और जो कुछ कि हालत उस पर बीतेगी, उसी मुवाफ़िक़ उसकी रहनी और व्यवहार और चाह होवेगी। और जो चाह कि उसके मन में ज़बर होगी, उसी के पूरा करने के वास्ते वह मेहनत और तवज्जह के साथ जतन करेगा।

६—अमर और परम सुख की प्राप्ति के लिये जतन करना ज़रूर है, और उसी का नाम सच्चा परमार्थ है

४७—सब जीव, दुनिया के सुखों के वास्ते, मेहनत कर रहे हैं और दुखों के दूर करने के लिए तद्बीर करते हैं। पर इस दुनिया के जितने सुख हैं, वे सब मन और इन्द्रियों के भोग हैं और नाशमान और तुच्छ और जड़ हैं। और जिस किसी को यह सब सुख मिल भी गये तो एक दिन उनको ज़रूर, मरने के वक़्त, छोड़ना पड़ेगा। और जो उन्हीं की चाह मन में ज़बर रही और उम्र भर यही काम करता रहा, तो उसी चाह और स्वभाव और आदत के मुवाफ़िक़ फिर जनम धरना पड़ेगा। और इसी तरह हमेशा जनम-मरन का चक्कर जारी रहेगा और दुख-सुख भोगता रहेगा, और चाहे जैसा जतन करे, देही के दुख-सुख से कभी निवृत्ति नहीं होवेगी।

४८—अब समझना चाहिए कि जिस क़दर सुख और ज्ञान और आनन्द और रस हैं, सब सुरत की धार के वसीले से मालूम होते हैं। जो वह धार शामिल न होवे या हट जावे तो यह सब सुख और आनन्द और ज्ञान जाते रहें। और जब कि सुरत की एक एक धार में इस क़दर रस और आनन्द है कि मनुष्य उस में फँस रहे हैं, तब

सुरत के भंडार में यानी उस रूहानी और निर्मल चैतन्य देश में जहाँ से कि सब सुरतें आई हैं, किस क़द्र रस और आनन्द और सुख और ज्ञान होवेगा ?

४६—इस वास्ते हर एक मनुष्य को, चाहे पुरुष होवे या स्त्री, मुनासिब है कि उस परम आनन्द की प्राप्ति के लिए थोड़ा-बहुत जतन ज़रूर करे। और जिस क़दर वह जतन करता जावेगा, इस नीचे के देश से ऊँचे देश में चढ़ कर विशेष सुख भोगता जावेगा और रफ़्ता २ एक दिन परम और अमर आनन्द के भंडार में पहुँच जावेगा, और वहाँ पहुँच कर आप भी अमर हो जावेगा और वह देश भी जो निर्मल चैतन्य का भंडार है, अमर है, और वहाँ का सुख भी अमर है।

५०—जो कोई इस बात को नहीं मानेगा, वह इसी नीचे देश में पड़ा रहेगा, और बारम्बार ऊँची-नीची जोनों में, और ऊँचे-नीचे देशों में देह धर कर दुख-सुख भोगता रहेगा, और अपनी करनी और करम के मुवाफ़िक़ उन जोनों में फल पावेगा।

५१—सिवाय इसके मनुष्य में तीन क़िस्म की ताक़तें मौजूद हैं। पहिली, देह और इन्द्रियों की, दूसरी, मन और बुद्धि की, और तीसरी, सुरत (रूह) की। जो कोई इन तीनों ताक़तों को मंथन करके जगावे, वह सब में श्रेष्ठ कहलावे, और ऊँचे दरजे में पहुँच सकता है, और मालिक के भेद

को जान सकता है। और जो सिर्फ़ एक-एक ताक़त को जगावेगा, वह उसी मुवाफ़िक़ फ़ायदा उठावेगा। लेकिन जो सुरत की ताक़त को मथन यानी अभ्यास करके जगावेगा, उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकेगा। वह ख़ुद मालिक का प्यारा हो जावेगा और सब रचना उसकी फ़रमा-बरदारी करेगी।

५२—अब समझो कि जिसने देह और इन्द्रियों की क़ुव्वतें भी नहीं जगाईं, वह सिर्फ़, क़ुली या हल जोतने का काम करके मुश्किल से अपना और अपने कुटुम्ब का पेट भरेगा और हैवानों के मुवाफ़िक़ नादान रहेगा, और जिसने कि यह क़ुव्वतें जगाईं जैसे सीने, लिखने, तसवीर खींचने, गाने बजाने वग़ैरा का काम सीखा, वह किस क़दर फ़ायदा अपनी मेहनत से उठा सकता है?

५३—और जिसने अक़्ली और इल्मी क़ुव्वत को मदरसे में अभ्यास और मश्क़ करके जगाया, वह देखो किस क़दर बड़ा दरजा हाकिमी व डाक्टरी व जजी व मुंसिफ़ी व आनरेरी वग़ैरा का पाता है? और अपनी मेहनत और कार्रवाई से किस क़दर ज़्यादा फ़ायदा उठाता है? और किस क़दर मान बड़ाई उसकी होती है और हज़ारों लाखों आदमियों पर हुकम चलाता है?

५४—और जिसने अपनी सुरत यानी रूह की ताक़त को अभ्यास करके जगाया, जैसे कबीर साहब और गुरु

नानक साहब जो संत हुए, और कृष्ण महाराज और रामचन्द्र और बौधजी औतार, और व्यास और वशिष्ठ जी वग़ैरा महात्मा, और हज़रत ईसा और हज़रत मुहम्मद और पैग़म्बर और औलिया वग़ैरा, उनकी किस क़दर महिमा और शुहरत हुई कि औरत और मर्द और बच्चे अनेक देशों में उनके नाम की ताज़ीम करते हैं, और उनकी बानी और बचन को अपनी मुक्ति का वसीला समझते हैं, और कैसे भाव और प्यार के साथ उनकी पूजा और यादगारी करते हैं ? बा-वजूदे कि उनको सैकड़ों और हज़ारों वर्ष गुज़र गये, मगर उनका नाम और बानी ब-दस्तूर लोगों के दिलों में ताज़ा असर करती है ।

५५——अब समझना चाहिए कि हर एक औरत और मर्द पर फ़र्ज़ है कि थोड़ा बहुत तीनों क़ुव्वतों को अभ्यास करके जगावे ।

५६——और जो ऐसा नहीं करेंगे, तो यह क़ुव्वतें उन में जैसी सोती आईं, वैसी ही सोती रहेंगी, और उनके जगाने से जो फ़ायदा हासिल होना मुमकिन है, उससे वे महरूम और अभागी रहेंगे ।

५७——इन सब में से रूह यानी सुरत की क़ुव्वत को तो ज़रूर थोड़ा-बहुत जगाना हर एक मनुष्य को लाज़िम और फ़र्ज़ है, कि उसमें उसके जीव (रूह) का कल्यान और मालिक के देश में पहुँच कर परम आनन्द का प्राप्त होना

मुमकिन है, और नहीं तो हमेशा अँधेरे यानी माया के घेर में पड़ा रहेगा और देहियों के साथ दुख-सुख और जनम-मरन की तक़लीफ़ भोगता रहेगा।

५८—सिवाय इसके दफ़ा ३६, ३७, ३८, ३९, ४० के पढ़ने से मालूम होगा कि सुरत (रूह) मरने के वक़्त आँख के रास्ते होकर जाती है, यानी जब पुतली उलट जाती है, उस वक़्त मौत हो जाती है। अब, हर एक मनुष्य को चाहे स्त्री होवे या पुरुष, ज़रूर और मुनासिब है कि अपने मरने के वक़्त से पहिले, इस रास्ते को जिस क़दर बन सके खोले, यानी तै करे, और वहाँ की रचना और क़ुदरत और कैफ़ियत अपनी आँखों से देख ले। और जो ऊपर की तरफ़ चलने में आनन्द और सरूर ज़रूर ज़्यादा से ज़्यादा मिलता जावेगा, उसका भोग मन और रूह के साथ थोड़ा-बहुत इस ज़िंदगी में करे, तब अख़ीर वक़्त पर और भी किसी भारी तकलीफ़ या दुख या चिन्ता के समय उसको रंज बहुत कम होगा, और ऐसे वक़्त पर अपने अंदर की तरफ़ तवज्जह करने से फ़ौरन किसी क़दर फ़ायदा मालूम होवेगा।

५९—ऐसे अभ्यासी को कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया-और मेहर और उनके अंग-संग और हाज़िर-नाज़िर होने का सबूत अपने अंतर में मिल कर, दिन २ प्रेम और प्रतीत चरनों में बढ़ती जावेगी, और दुनिया

के काम भी उसके सहज में, कुल्ल मालिक की मौज के मुवाफ़िक़, सरंजाम पावेंगे, और उसके मन में संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से सहज उदासीनता होती जावेगी, और भक्ति बढ़ती जावेगी, कि जिससे यह अपना सच्चा उद्धार होता हुआ जीते-जी आप देखता जावेगा।

६०–सच्चा परमार्थ इसी का नाम है कि अपने घट में जिस रास्ते होकर सुरत (रूह) राधास्वामी देश से उतर कर पिंड में आकर ठहरी है, उसी रास्ते से उसको चला कर, उसके निज देश में पहुँचाना, और अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँचकर उनके दर्शन के बिलास का आनन्द लेना।

६१–संत मत में कुल्ल मालिक की महिमा और पूजा है, और वह पूजा ज़ाहिरी नहीं है। उसका भेद लेकर उससे मिलने का जतन करना यही पूजा है। और उसके चरनों में दिन २ प्रीति और प्रतीत का बढ़ाना यही उसकी भक्ति है।

६२–और जो कि सच्चा और कुल्ल मालिक सब जगह मौजूद है, और मनुष्य इस लोक में सबसे श्रेष्ठ यानी उत्तम है, फिर मनुष्य के चोले में उसका प्रकाश ब-निस्बत और रचना इस लोक के, ज़्यादा प्रकट है। इस वास्ते जो कोई उससे मिलना चाहे या उसका प्रकाश और जलवा देखना चाहे, उसको मुनासिब है कि अपने घट में उसका पता

और भेद लेकर खोज करे, क्योंकि मनुष्य का चोला कुल्ल रचना का नमूना है और इस चोले में जो कुछ कि बाहर रचना है, वह सब छोटे स्केल पर मौजूद है। जैसे कि एक तसवीर बड़ी और एक उसी की नक़ल छोटी, दोनों में बराबर सब आकार बड़े और छोटे के हिसाब से मौजूद हैं।

६३–बाहरमुख पूजा जिस क़दर कि है, वह नक़्ल की है, या मनुष्य से कमतर दरजे की रचना की है। यह दोनों असल से बहुत दूर हैं, और जो इनका सिलसिला असल से नहीं लगा हुआ है यानी असल का भेद जो घट में है, नहीं मालूम है, और न उसके मिलने की तरकीब की ख़बर है, तो वह सब पूजा वृथा और फ़िज़ूल है, क्योंकि उस काम के करने से कभी असल नहीं मिलेगा, जब तक कि भेदी से उसका भेद लेकर, वह जुगत कि जिससे मेला होवे, अपने अंतर में कमाई न जावे।

६४–और वह भेद और जुगत यानी तरीक़ा अभ्यास का, इस वक़्त में, सिर्फ़ राधास्वामी मत में मिल सकता है। और किसी मत में उस भेद और तरीक़े का ज़िक्र भी नहीं है। और वह जुगत ऐसी है कि लड़का, जवान, बूढ़ा, चाहे स्त्री होवे या पुरुष, उसको आसानी के साथ, बग़ैर किसी ख़तरे या विघ्न के, कमा सकता है।

६५–और मतों में प्राणायाम को सब में बढ़का तरीक़ा या योग क़रार दिया है। पर वह ऐसा मुश्किल

और ख़तरनाक है कि विरक्तों से भी उसका अभ्यास नहीं बन सकता, फिर बिचारे गृहस्थी और ख़ास कर औरतें तो उसके संजमों की निगह-दाश्त, और प्राणों के रोकने और चढ़ाने का अभ्यास बिलकुल नहीं कर सकतीं। और इस सबब से उनका उद्धार उन मतों के मुवाफ़िक़ मुतलक़ नहीं हो सकता।

६५—इन मतों के आचार्यों ने प्राण की धार पर सवार होकर रास्ता तै करना बतलाया, यानी प्राण-योग का उपदेश किया, पर संतों ने रूह (सुरत) की धार की सवारी तजवीज़ की। अब ख़्याल करो कि रूह की धार बड़ी है या प्राण की धार ? सोते में प्राण की धार जारी रहती है मगर कुल्ल कार्रवाई मन और इन्द्रियों की बन्द रहती है, और जाग्रत में जब कि रूह की धार आँखों के मुक़ाम पर आकर ठहरी, उस वक़्त कुल्ल कार्रवाई तन, मन और इन्द्रियों की जारी हो जाती है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि जो कोई रूह की धार पर सवार होकर घर की तरफ़ चलेगा, वह सुखाला पहुँचेगा, और जल्द, मन और इन्द्रिय और तन उसके क़ाबू में आवेंगे, और किसी तरह का ख़तरा और विघ्न रास्ते में पैदा नहीं होगा। और जो प्राण की धार के आसरे चलेगा, उसको प्राणों का रोकना और चढ़ाना बग़ैर पाबंदी (बर्ताव) मुक़र्रर किये हुए संजमों के, जो कि निहायत कठिन और मुश्किल हैं और न गृहस्थ

से बन सकते हैं और न विरक्त से, क़तई ना-मुमकिन होगा। इस वास्ते यह रास्ता बिलकुल बन्द हो गया और सिर्फ़ ज़बानी या तहरीरी बात-चीत इस अभ्यास की रह गई। और जो बिलफ़र्ज़ किसी एक विरक्त से थोड़ा-बहुत अभ्यास बना भी, तो बाक़ी विरक्त और कुल्ल गृहस्थियों से तो उसका बन आना ना-मुमकिन है। फिर ऐसे रास्ते के बयान करने से क्या फ़ायदा? किताबों में उसका ज़िक्र लिखने और ज़बानी बयान करने से अभ्यास का फल नहीं मिल सकता है।

६७–इस वास्ते जो अभ्यास कि संतों ने बताया है, उसका मानना और उसके मुवाफ़िक़ थोड़ी-बहुत कार्रवाई करना, हर एक को, चाहे औरत होवे या मर्द-मुनासिब और ज़रूर है, क्योंकि बग़ैर उसके दुनिया और देह के सुख-दुख और जनम-मरन के सख़्त दुक्खों से बचाव किसी तरह मुमकिन नहीं, और न सच्चा और पूरा उद्धार या मुक्ति हासिल हो सकती है।

१०–वर्णन कैफ़ियत सुरत-शब्द अभ्यास की

६८–इस अभ्यास का नाम सुरत-शब्द योग है यानी सुरत (रूह) को शब्द के साथ मिला कर चढ़ाना। और शब्द नाम सिर्फ़ आवाज़ का नहीं है, बल्कि चैतन्य की धार से मतलब है। क्योंकि जहाँ धार रवाँ है, वहाँ उसके

साथ आवाज़ भी बराबर होती है। धार नज़र नहीं आती, पर आवाज़ से उसकी पहिचान होती है, जैसे आदमी का असली रूप यानी उसकी सुरत रूह की कैफ़ियत नज़र नहीं आती, पर आदमी के बोलने से मालूम होता है कि रूह सुरत उसमें मौजूद है और कार्रवाई कर रही है। कुल्ल रचना में शब्द के वसीले से कार्रवाई हो रही है और यह शब्द निशान और ज़हूरा चैतन्य का है। जहाँ शब्द नहीं, वहाँ चैतन्य भी नहीं, यानी गुप्त है।

६९—सुरत-चैतन्य को शब्द-चैतन्य से मिलाने का मतलब यह है कि सुरत, जो उस शब्द की धार है, उसको अपने घर की तरफ़, आवाज़ की डोरी को पकड़ के उलटाना। और आवाज़ की बराबर कोई अँधेरे में उजाला करने वाला और रास्ता दिखलाने वाला नहीं है। जब कि कोई आदमी अँधेरी रात में जंगल में रास्ता भूल जावे और उस वक़्त, ब-सबब छाये होने बादल के, किसी क़िस्म की रोशनी, चाँद तारागन बिजली और मशाल वग़ैरा की, नहीं है, तो जो आवाज़ आदमियों की किसी नज़दीक के गाँव से आती होवे, उसको पकड़ के, भूला हुआ आदमी गाँव में पहुँच सकता है।

७०—इसी तरह यह आवाज़ अनहद शब्द की, जो घट २ में पूर है, और बग़ैर मदद ज़बान या किसी बाजे के हर वक़्त जारी है, ऊँचे से ऊँचे देश यानी कुल्ल मालिक

के दरबार से आरही है और एक-एक रास्ते के स्थान पर ठहर कर, और फिर उस धार के वसीले से जो वहाँ से निकली है, बरामद होकर (निकल कर) कुछ तबदीली के साथ, बराबर ऊपर से नीचे के मुक़ाम तक जारी है, और कुल्ल देह और रचना भर में फैली हुई है। जो कोई इस आवाज़ का भेद और पता, यानी स्थान-स्थान के शब्द का हाल, भेदी से दरियाफ़्त करके अपने मन और चित्त से उसको सुनता हुआ, आंखों के रास्ते से चलना शुरू करे, वह दिन २ उस स्थान के, जहाँ से कि पहिली आवाज़ आ रही है, नज़दीक पहुँचता जावेगा, और फिर वहाँ से दूसरे शब्द को पकड़ के चलेगा। इसी तरह सब मंज़िलें रास्ते की तै करता हुआ एक दिन कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के देश में जा पहुँचेगा।

७१—मालिक कुल्ल अरूप और विदेह है। उसका ध्यान किसी तरह कोई नहीं कर सकता है। पर शब्द के वसीले से, जो मालिक के चरनों से जारी हुआ है, अभ्यासी ध्यान करता हुआ पहुँच सकता है, क्योंकि शब्द उस मालिक का प्रथम ज़हूरा और निशान है। और जैसे कि वह मालिक अरूप है, शब्द भी अरूप है, पर ध्यान में बहुत भारी मदद देता है, यानी ध्याता को उसके इष्ट के पास पहुँचाता है, इसी तरह अरूप का ध्यान करके अभ्यासी उस अरूप पद में पहुँच सकता है। और कोई रास्ता या

तरकीब पहुँचने की, ऐसो आसान और बे-ख़तरा और निश्चय करके सीधी राह से पहुँचाने वाली, क़तई नहीं है। क्योंकि रूह की धार जो शब्द की धार है, उस से बढ़ कर और कोई धार रची नहीं गई है। वह और सब धारों को कर्त्ता और चैतन्य करने वाली है। ख़ुद प्राण की धार भी रूह यानी जान की धार से चैतन्य है। फिर सुरत-शब्द से बढ़ कर और कोई जुगत न रची गई और न हो सकती है।

७२–यह बात सब को मालूम होवेगी कि सुरत (रूह) का आवाज़ के साथ प्यार और इश्क़ ज़ाती यानी असली है। जैसे कोई आदमी कैसे ही ज़रूरी काम के वास्ते जाता होवे, और जो कहीं रास्ते में उम्दा गाना-बजाना होता होवे, तो ज़रूर थोड़ी देर के वास्ते वहाँ ठहर कर उसको शौक़ से सुनेगा। बल्कि सिर्फ़ आदमी ही नहीं, जानवर भी उम्दा बाजे और रसीली आवाज़ के आशिक़ हैं और उसको बड़ी तवज्जह के साथ एकाग्र चित्त हो कर सुनते हैं और ख़ुश होते नज़र आते हैं। सबब इसका यही है कि सुरत का भंडार शब्द है, और यह आप भी आवाज़ स्वरूप है, और इस वास्ते आवाज़ के साथ इसकी प्रीत या इश्क़ ज़ाती और असली है। रसीली आवाज़ सुन कर सुरत और मन मस्त हो जाते हैं और गाने या बाजा बजाने वाले के संग २ फिरते हैं, और कभी ख़ुशी में भर कर

नाचने लगते हैं और ज़्यादती सरूर में बे-होश हो जाते हैं।

७३—जिस किसी को सच्चा शौक़ होवे, इस अभ्यास का चंद रोज़ यानी एक महीने, पन्द्रह रोज़ इम्तिहान और परीक्षा करके आप देख ले। क्योंकि यह राधास्वामी मत करनी का है, बातों और विद्या बुद्धि की चतुराई का नहीं है। विद्यावान अपनी बुद्धि के अहंकार में, संतों के बचन को ग़ौर और फ़िक्र के साथ, बिना पक्षपात के, न सुन कर कोरे रह गये, और उनको सच्चे मालिक का या उसके मिलने के रास्ते और तरीक़े का पता न लगा। सिर्फ़ बातों में संतोष करके थक रहे और अहंकार किया कि उनकी बराबर कोई कुछ नहीं जानता है, और हक़ीक़त में असल भेद कुल्ल मालिक और जीव यानी सुरत और शब्द की धार से बिल्कुल बे-ख़बर हैं।

७४—जो सच्चे खोजी और दर्दी लोग हैं और किसी मत या तरीक़े में उनका बंधन और पक्ष नहीं है और न अपनी विद्या और बुद्धि का ऐसा अहंकार रखते हैं कि हमने सब कुछ जान लिया और समझ लिया है, वे राधास्वामी मत के अभ्यास के लायक़ हैं। और वही राधास्वामी मत के हाल और भेद और अभ्यास की जुगत को सुन कर मगन होवेंगे, और उसको दिलो जान से मानेंगे, और उसके मुवाफ़िक़ करनी करके उसके फल को प्राप्त होंगे, यानी अपनी ज़िन्दगी में अपने सच्चे उद्धार और

सच्ची मुक्ति का सबूत हासिल करेंगे, और एक दिन सच्चे मालिक के देश में पहुँच कर उसके दर्शन का आनन्द लेवेंगे, और जनम-मरन और देह के दुख-सुखों से बच जावेंगे।

११-राधास्वामी मत के अभ्यासी को प्रेम और सच्चे शौक़ की ज़रूरत, और उसकी महिमा

७५—जितने काम दुनिया के हैं, बग़ैर शौक या मोहब्बत के, वह दुरुस्ती से नहीं बन सकते हैं, यानी जब तक कि उनमें मन और इन्द्रिय पूरी तवज्जह के साथ शामिल नहीं होते हैं, वह काम दुरुस्त नहीं होते। फिर परमार्थ का खोज और अभ्यास बग़ैर पूरी तवज्जह के किस तरह दुरुस्त बन सकता है? इस वास्ते राधास्वामी मत में, सच्चे परमार्थी को ज़रूर है कि प्रेम अंग लेकर सतसंग और अभ्यास करे, तो उसमें फ़ायदा मालूम पड़ेगा। और नहीं तो उसकी कार्रवाई रूखेपन के साथ होवेगी और उसमें रस कुछ नहीं आवेगा और न प्रीत और प्रतीत बढ़ेगी।

७६—जो प्रेम कि प्रतीत के साथ है, उसके ठहराव का भरोसा ज़्यादा होता है, और उसमें फ़ायदा भी ज़्यादा मिलेगा, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया

भी ज़्यादा आवेगी और यह प्रतीत सतसंग करके हासिल होगी।

७७–सतसंग नाम गुरु या साध के संग का है। और वह गुरु और साध, संत-मत अथवा राधास्वामी मत के पैरौ होने चाहिये। ऐसे सतसंग में सिवाय इन बातों, के और किसी लड़ाई-झगड़े, क़िस्से-बखेड़े का ज़िक्र न होगा–(१) महिमा सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की और भेद रास्ते और मंज़िलों का और जुगत रास्ता तै करने की। (२) तरीक़ा बढ़ाने प्रेम-प्रीत का, राधास्वामी दयाल और गुरु के चरणों में। (३) पैदा करना हालत उदासीनता का, दुनिया और उसके भोगों की तरफ़ से, अपने मन में। (४) वर्णन उन विघ्नों का, जो मन और माया अभ्यासी के रोकने को पैदा करते हैं। (५) हाल उस कैफ़ियत का, जो अभ्यासी को हालत सतसंग और अभ्यास में मालूम होती है और (६) ज़िक्र चढ़ाई सुरत का, मुक़ामों पर, और उसकी हालत वग़ैरा।

७८–सतसंग में बैठ कर और चित्त देकर बचन सुनने से बहुत से संशय और भरम दूर होते हैं, और बहुत सी चीज़ों में या बातों में जो भाव और पकड़ जीव की अर्से से चली आता है, वह भी ढीली हो जाती है। इस तरह आहिस्ता २ जीव क़ाबिल अभ्यास करने सुरत-शब्द योग के, हो जाता है और जिन्होंने कि सतसंग नहीं

किया और सिर्फ़ अभ्यास की बड़ाई सुन कर और मत में शामिल होकर यानी उपदेश ले कर उसकी कमाई करने लगे, तो उनसे अभ्यास जैसा चाहिये वैसा बन नहीं पड़ेगा और न रस आवेगा। क्योंकि जब तक संशय और भरम दूर न होवें और अंतर में सफ़ाई न होवे, तब तक मन और सुरत सर्व-अंग करके दुरुस्ती के साथ अभ्यास में नहीं लगते।

७६–इसी तरह जब कोई सतसंग में बैठ कर पहिचान कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और उनके धाम की, और भेद रास्ते का, और बड़ाई सुरत शब्द मारग की, सुनेगा और बुद्धि से अच्छी तरह समझेगा, तब उसके मन में संतों के बचन की थोड़ी-बहुत प्रतीत आवेगी। और जब उस प्रतीत के मुवाफ़िक़ थोड़ा-बहुत अभ्यास करके रस और राधास्वामी दयाल की दया का परचा अपने अंतर में पावेगा, तब सच्ची प्रीत घट में पैदा होगी, और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और फिर अभ्यास का भी शौक़ बढ़ता जावेगा।

८०–बग़ैर थोड़े बहुत ऐसे शौक़ और प्रीत और प्रतीत के, रास्ता घट में तै करना और क़ुदरत की कैफ़ियत को देखना मुशकिल है, क्योंकि जब तक कुछ भी शौक़ और प्रीत और प्रतीत दिल में नहीं आवेगी, तब तक सुरत और मन और इन्द्रियां सिमट कर अभ्यास में नहीं

लगेंगी, और न उस में रस आवेगा। और इस सबब से अभ्यासी थोड़े दिन कुछ कार्रवाई करके, उसको थक कर और निरास होकर छोड़ देगा, और संतों के बचन को रोचक समझ कर उनका निरादर करेगा।

८१–प्रेम या प्रीत खैंच-शक्ति को, यानी क़ुव्वते जाज़बा को कहते हैं। इसी शक्ति से तमाम रचना, जो कि छोटे २ ज़र्रे या परमाणु से मिल कर रची गई है, क़ायम है, और कुल्ल देहियों या सूरतों का ठहराव और कार्रवाई इसी शक्ति के आसरे हो रही है। जो प्रेम न होवे तो कोई किसी से मेल न करे और न किसी काम में मन लगा कर उसकी कार्रवाई करे।

८२–जब कि कुल्ल रचना की कार्रवाई प्रेम के आसरे जारी है, बल्कि सब रचना प्रेम के वसीले से ठहरी हुई है, तो परमार्थ की कार्रवाई जिससे सुरत-अंश अपने अंशी यानी भंडार से मिलना चाहती है, किस तरह बग़ैर प्रेम के जारी हो सकती है ? और क्यों कर बिना सच्चे शौक़ के इन दोनों का आपस में मेला हो सकता है ?

८३–कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल प्रेम का भंडार हैं, और सुरत जो उनकी अंश या धार है, वह भी प्रेम स्वरूप है। इस वास्ते जब तक सुरत में प्रेम न प्रकट होगा, तब तक उसका मेल अपने भंडार से नहीं होगा, यानी रास्ता तै करके उस भंडार में पहुँचने की कार्रवाई

(जिसको सुरत-शब्द का अभ्यास कहते हैं) दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगी।

८४—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि जब तक पहिले सतसंग करके, प्रीत और प्रतीत मन में नहीं आवेगी, और संशय और भरम दूर न होवेंगे, तब तक प्रेम पैदा न होगा। इस वास्ते हर एक सच्चे खोजी और दर्दी परमार्थी को मुनासिब और ज़रूर है कि पहिले राधास्वामी मत के सतसंग में शामिल होकर होशियारी से बचनों को सुन कर और समझ कर, और अपने संशय और भरम दूर करके, अभ्यास शुरू करे, तब उसको उसका फ़ायदा जल्द मालूम होवेगा, और आइंदा को दिन २ मुवाफ़िक़ उसकी लगन के, तरक़्क़ी होती जावेगी।

१२—राधास्वामी मत में पाप-पुण्य यानी शुभ और अशुभ कर्म की शरह

८५—राधास्वामी मत में शुभ और अशुभ कर्म यानी पुण्य और पाप की शरह ऐसे तौर पर की गई है कि जिस में किसी को किसी तरह का शक और पकड़ के वास्ते मौक़ा नहीं रहता है। और जो अनेक फ़िरक़ों और अनेक मत वालों ने बहुत से काम पुण्य और बहुत से पाप के साथ नामज़द किये हैं, इनमें बहुत भेद रहता है। यानी बाज़े काम ऐसे हैं कि एक मत या एक देश में वे पाप

समझे जाते हैं और दूसरे देश और मत में पुण्य माने जाते हैं, या एक ही मत में एक वक़्त वे पाप कर्म, और दूसरे वक़्त में जायज़ शुमार किये जाते हैं। जैसे जानदार का मारना आम तौर पर अज़ाब में दाख़िल है, और मांस-अहारियों में वही काम जारी है। या आदमी का मारना गुनाह है और लड़ाई में वही काम जायज़ समझा गया। या अपने पड़ोसी का माल और ज़मीन छीन लेना या उससे ज़बरदस्ती करना ना-मुनासिब समझा गया और राजे और बादशाह लोग अपने क़रीब के कमज़ोर राजों का राज ज़रा-ज़रा सी बात पर नाराज़ होकर छीन लेते हैं और यह काम मुल्कगीरी में दाख़िल किया गया। या यह कि दूसरे के माल या औरत को हाथ लगाना पाप समझा गया, लेकिन बाद फ़तह के राजा लोग शहरों के लूटने का हुक्म दे देते हैं और उस वक़्त उनकी फ़ौज बहुत से बे-गुनाह मर्द और औरत को क़तल कर डालती है और उनका माल लूट लेती है और औरतों की इज़्ज़त बिगाड़ती है। या यह कि अपने मतलब के वास्ते झूठ बोलना नाक़िस समझा गया और राजों की आपस की कार्रवाई में उनके वकील तरह २ की बातें बना कर और तहरीरात को उलट-फेर कर उनके मानी और मतलब अपने मुफ़ीद लगा कर जो कार्रवाई करते हैं, वह दानाई और उम्दा कार-गुज़ारी में दाख़िल होती है। या दीवानी और फ़ौजदारी के

मुआमलात में जो कोई वकील या मुख़्तार क़ानून और अपनी तक़रीर के ज़ोर से सफ़ेद को स्याह या स्याह को सफ़ेद दिखला देवे, वह बहुत होशियार और चालाक कारकुन समझा जाता है।

८६—राधास्वामी मत में जो काम कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में सुरत को पहुँचावे, शुभ और पुण्य कर्म में दाख़िल है, और जिस काम के करने से दूरी होती जावे, वही अशुभ और पाप कर्म है। यह शुभ और अशुभ कर्म मनुष्य की ज़ात से ताल्लुक़ रखते हैं।

८७—कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल सबकी जड़ यानी आदि भंडार हैं। उन्हीं के चरनों से धार प्रकट होकर नीचे तक रचना करती चली आई। जिस धार यानी सुरत का रुख़, मन और इन्द्रियों के वसीले से बाहर और नीचे की तरफ़ है, और उसी तरफ़ उसकी कार्रवाई जारी है, वह दिन-दिन किसी क़दर दूर होती जावेगी। और जिस सुरत ने कि संत मत का भेद और जुगत लेकर अपना रुख़ चरनों की तरफ़ मोड़ना शुरू किया और राधास्वामी दयाल के सनमुख पहुंचने और उनके दर्शन का बिलास हासिल करने का इरादा सच्चा और पक्का करके, अभ्यास शुरू किया, वही सुरत दिन २ नज़दीक होकर एक दिन चरनों में पहुँच जावेगी। ऐसी समझ लेकर सुरत-शब्द का अभ्यास करना यह शुभ और पुण्य कर्म है।

८८—असली शुभ और अशुभ कर्म यही हैं कि जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया। अब वह शरह इन कर्मों की, की जाती है जो इस लोक के व्यवहार के ताल्लुक़ है। और वह यह है कि जो काम कि यह जीव अपनी निस्बत पसंद न करे, उसको औरों की निस्बत भी पसंद करना नहीं चाहिए, यानी जैसा कि यह चाहता है कि लोग इससे बर्ताव करें, वैसा ही इसको चाहिए कि औरों के साथ आप बर्ताव करे। इस में किसी को इसके हाथ से रंज और तकलीफ़ नहीं पहुँचेगी। इस वास्ते इसी का नाम शुभ और पुण्य कर्म है और इसके बर-ख़िलाफ़ बर्ताव करना, अशुभ और पाप कर्म है। यानी ख़ास अपने आराम और मतलब के लिए मन और बचन और काया से दूसरों को नुक़सान या रंज या तकलीफ़ पहुंचाना पाप है, और बग़ैर अपने ख़ास मतलब के, दूसरों को सुख और फ़ायदा पहुँचाना, पुण्य कर्म है। जो फ़ायदा और आराम न दे सके तो इस मनुष्य को चाहिए कि किसी को दुख भी न देवे।

८९—जो कोई इन दोनों क़िस्म के शुभ और अशुभ कर्मों पर नज़र रख कर, समझ के साथ, कार्रवाई करेगा, उससे कुल्ल मालिक राज़ी होकर, उसको प्रेम और भक्ति दान यानी अपनी नज़दीकी और मुहब्बत की बख़्शिश करेगा, और जो बर-ख़िलाफ़ इसके काम करेगा, वह दिन २

मालिक के दरबार से दूर होता जावेगा और अंधेरे के घेर में जनम-मरन के चक्कर में देहियों के साथ दुख-सुख सहता रहेगा।

६०—राधास्वामी मत में इस बात की बहुत ताकीद है कि अभ्यासी ऊपर की लिखी हुई हिदायत के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे। तब उसका प्रेम और भक्ति दिन-दिन बढ़ती जावेगी, और अभ्यास में भी आनंद और रस मिलता जावेगा। और जो इस हुक्म के मानने में समझ बूझ कर बे-परवाही करेगा, वह अपनी कार्रवाई के एवज़ में तकलीफ़ पावेगा और मालिक के चरनों के प्रेम से किसी क़दर ख़ाली रहेगा।

१३–बयान इस बात का कि कोई सच्चा और कुल्ल मालिक ज़रूर है और जीव सुरत उसकी अंश है

६१—जो कोई, निस्बत मौजूदगी कुल्ल और सच्चे मालिक के, शक लावे, तो उसको यह कहा जाता है कि देखो चैतन्य सब जगह मौजूद है, पर बिना मदद अपने से विशेष चैतन्य के कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता है, जैसे इस लोक में भी चैतन्य मौजूद है, पर बग़ैर मदद सूरज की रोशनी और गरमी के यहाँ कुछ रचना नहीं हो सकती और न क़ायम रह सकती है। और यह सूरज मय अपने

कुटुम्ब परिवार के, यानी तारों के, दूसरे अपने से ऊँचे सूरज के गिर्द घूम रहा है जो कि इसका मरकज़ है, यानी यह हमारा सूरज उस सूरज से ताक़त ले रहा है।

९२—इस क़दर तो आसमानी इल्म और दुरबीन की मदद से मालूम हुआ। और संत फ़रमाते हैं कि उस बड़े सूरज के मंडल के ऊपर तीन सूरज मंडल एक से एक बहुत बड़े और हैं और इन सब के ऊपर राधास्वामी धाम है, जो कि कुल्ल का मालिक और कुल्ल का निज भंडार है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि एक के ऊपर एक मालिक चला गया है और राधास्वामी कुल्ल के मालिक हैं। राधास्वामी धाम अपार और अनंत है। उसके परे और कोई मंडल या रचना नहीं है।

९३—जो लोग कि अपनी नादानी और बे-ख़बरी से कहते है कि कोई मालिक नहीं है और यह रचना आप ही आप मसाले यानी माया से हुई है, किस क़दर ग़लती में पड़े है ? उनकी देह की कार्रवाई और इस लोक की कार्रवाई से साफ़ ज़ाहिर है कि कुल्ल रचना का ताल्लुक़ और उसकी कार्रवाई किसी ऊँचे से ऊँचे और बड़े से बड़े स्थान से हो रही है, जैसे देह की कार्रवाई उस धार पर मुनहसर है, जो दिमाग़ के ऊँचे मुक़ाम से उतर कर तमाम देह में, रगों के मंडलों के वसीले से, फैली हुई है। और इसी तरह इस लोक और कुल्ल ऊँचे-नीचे लोकों की रचना की

कार्रवाई ऊँचे से ऊँचे और बड़े से बड़े सूरज मंडल के वसीले से जारी है। और वह मालिक कुल्ल अंतरजामी और सर्व समर्थ और महा ज्ञानी और सब से भारी बन्दोबस्त करने वाला और कुल्ल का पैदा करने वाला और कुल्ल रचना को चैतन्यता देने वाला यानी कुल्ल जानों की जान है। जो उस ऊँचे देश से धार हर एक मंडल में होकर न आवे तो सब रचना का खेल बिगड़ जावे और बंद हो जावे।

६४–इस लोक की कुल्ल रचना और भी देह की रचना से साफ़ ज़ाहिर है कि हर एक देह और उसके अंग-अंग के बनाने में क़ुदरत और समर्थता और इरादा और मतलब और कारीगरी पाई जाती है। फिर यह बातें बग़ैर महा समर्थ और महा ज्ञानी मालिक के किस तरह ज़ाहिर हुईं ? और कुल्ल माया और उसके मसाले और शक्तियाँ पर, उस कुल्ल मालिक की क़ुदरत का असर साफ़ मालूम होता है, यानी यह सब उसी के हुक्म से पैदा हुईं और अब उसी के हुक्म के ताबे हैं, और उसकी मौज के मुवाफ़िक़ उसी की ताक़त के साथ जा-ब-जा कार्रवाई कर रही हैं।

६५–और सुरत जीव उसी कुल्ल मालिक की अंश है। देखो जब यह सुरत जिस शरीर में अपना ज़हूर करती है, जैसे जब किसी दरख़्त के बीज से कुला फूटता

है यानी आदि धार प्रकट हुई, उसी वक़्त से जितनी कि शक्ति हैं, जैसे खैंच, शक्ति, हटाव, शक्ति और बनाव, शक्ति और बिजली और रोशनी, और पाँचों तत्व और तीनों गुन, सब उस देह में मौजूद होकर और इसी आकाश से मसाला लेकर, उस देह का बनाव और सम्हाल करते हैं। और जब तक कि सुरत उस देह में मौजूद रहे, तब तक बा-वजूदे कि यह सब आपस में मुख़ालिफ़ और उलटे हैं, पर हिल-मिल कर काम देते हैं और जिस वक़्त कि सुरत उस देह को छोड़ती है, उसी वक़्त से आपस में बर-ख़िलाफ़ी के साथ कार्रवाई करके उसका रूप और रंग बिगाड़ देते हैं।

६६—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि सब तत्त्व और गुन और शक्तियाँ सुरत के हुक्म-बरदार हैं। जहाँ यह अपना ज़हूरा करे, वहाँ यह सब हाज़िर होकर उसकी ताबेदारी में कार्रवाई करते हैं और जब वह उस देह को छोड़ देवे, तब सब जुदा होकर अपने २ मंडल में समा जाते हैं। और जो कि यह सुरत ही इस लोक में सत्य है कि इसके आसरे सब रचना सत्त दिखलाई देती है यानी कुल्ल देहियाँ अपनी २ कार्रवाई कर रही हैं, और सब देहियों और रूपों को चैतन्य करने वाली भी यही सुरत है, और इसी के वसीले से कुल्ल रस और आनन्द और सरूर पैदा होता है, तो अब यही सुरत सत्त-चित्त-आनन्द

स्वरूप हुई और जो कि यह अमर और अजर है और शब्द इसका ज़हूरा है, तो यह उसी सिंध रूप सत्त-चित्त-आनन्द कुल्ल-मालिक की अंश साबित हुई, यानी इसका और उसका जौहर एक ही है।

६७—जब यह बात साबित हुई कि कोई कुल्ल-मालिक सत्त-चित्त-आनन्द स्वरूप और सर्व-समर्थ और सर्व-ज्ञाना ज़रूर मौजूद है और सुरत जीव उसकी अंश है, तो जब तक कि यह अंश अपने अंशी से, यानी बूँद अपने सिंध, और किरन अपने सूरज में, न पहुँचेगी, तब तक इसको परम आनन्द प्राप्त नहीं होगा। और जब तक माया के घेर में रहेगी, तब तक उसके मसाले के ग़िलाफ़ इस पर चढ़े रहेंगे। यानी इसको देहियों में बैठ कर कार्रवाई करनी पड़ेगी, और उनके साथ दुख-सुख और जनम-मरन की तकलीफ़ सहनी पड़ेगी।

६८—इस वास्ते जो इन तकलीफ़ों से बचना चाहे और परम आनन्द को प्राप्त होना चाहे, उसको राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके, आहिस्ता २ इस माया के देश को छोड़ कर, अपने निज घर की तरफ़ ज़रूर चलना चाहिये, और कुल्ल-मालिक की मौजूदगी की निस्बत मन में शक नहीं लाना चाहिये, नहीं तो मरने के बाद बहुत पछताना और शरमाना पड़ेगा और उस वक़्त का अफ़सोस कुछ फ़ायदा नहीं देवेगा।

१४–नीचे दरजे के मालिकों और औतारों और देवताओं की पूजा का बयान और उसका नतीजा

९९–जो लोग कि औरों को, यानी देवताओं और औतारों को, मालिक समझ कर मान रहे हैं, उनका पूरा और सच्चा उद्धार नहीं हो सकता है। और जो परमेश्वर या ब्रह्म या खुदा को कुल्ल-मालिक समझते हैं, वे भी सच्चे कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल से बे खबर हैं। और इस वास्ते वे भी माया के घेर से बाहर नहीं जा सकते, और इस सबब से जनम-मरन के चक्कर से नहीं बच सकते, क्योंकि ब्रह्म और ईश्वर और परमेश्वर या परमात्मा सब सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की एक एक कला हैं और माया के संग मिले हुए हैं यानी उससे मिलकर रचना की कार्रवाई कर रहे हैं। उनके लोक में जो कोई उनकी भक्ति करके पहुँचेगा, वह बहुत काल के लिये सुखी हो जावेगा, पर जनम-मरन से बचाव नहीं होगा।

१००–और जितने औतार हुए हैं, वे सब ब्रह्म या विष्णु के हुए हैं। और ब्रह्मा, विष्णु और महादेव, यानी तीनों गुन, बड़े देवता हैं, और बाक़ी देवता इनसे उत्पन्न हुए। इस वास्ते जो कोई इनकी भक्ति करेगा, वह इनके लोक में पहुँच सकता है। मगर इनका लोक अमर नहीं है और न वहाँ की रचना अमर है। इस

सबब से जनम-मरन से छुटकारा नहीं हो सकता है। और ब-निस्बत ब्रह्म, पारब्रह्म और शक्ति के देश या लोक के, देवताओं और औतारों के लोकों में उमर भी थोड़ी है, यानी वहाँ जनम-मरन जल्द होता है और सुख भी ऊपर के लोकों की निस्बत कम है।

१०१—इस वास्ते मुनासिब है कि जब कोई परमार्थी काम करना चाहे, तब अच्छी तरह से निर्णय करके अपने सच्चे मालिक की पहिचान करे, और दूसरों की पक्ष छोड़ कर सच्चे मालिक की सेवा और भक्ति इख़्तियार करे। तब पूरा फ़ायदा होगा, क्योंकि भक्ति-भाव सब जगह बराबर और एकसाँ बर्तना पड़ेगा, पर फल यानी फ़ायदे में हर एक के फ़र्क़ होगा।

१०२—और जो कोई असली रूप और धाम औतारों और देवताओं से बे-ख़बर हैं, और सिर्फ़ उनकी नक़ल या मूरत की पूजा और भक्ति करते हैं, और असल का खोज नहीं करते, वे असल को नहीं पा सकते। इस वास्ते उनको उस क़दर सुख भी नहीं मिल सकता, जिस क़दर कि असल के पूजने वालों को मिलता है। इनकी सीढ़ी बहुत नीची है।

१५–वर्णन हाल वाचक-ज्ञानी और सूफ़ी का, और यह कि उनका पूरा उद्धार नहीं होता

१०३—और जो लोग कि इस वक़्त में ज्ञानी और

विद्वान और वेदान्ती या सूफ़ी कहलाते हैं, वे भी कुल्ल-मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल से बे ख़बर हैं। इनको पुराने जोगेश्वर वेदान्ती और ज्ञानी की बानी और बचन से, ब्रह्म पद तक का हाल मालूम हुआ, पर वह भी तफ़सील-वार नहीं, सिर्फ़ इस क़दर कि ब्रह्म सब जगह व्यापक है, और वही सत्त-चित्त-आनन्द स्वरूप है और माया से न्यारा है और कुल्ल रचना ब्रह्म या आत्मा स्वरूप है, फिर कहीं जाना-आना नहीं है। इस क़दर समझ लेकर इस बात का निश्चय कर लेना कि मैं ब्रह्म हूँ, और सब ब्रह्म हैं, वास्ते उद्धार के, वक़्त मौत यानी जुदाई शरीर के, काफ़ी समझते हैं। और मन को, किसी तरकीब से कुछ दिन अभ्यास करके, एकाग्र करना, और उसके पीछे ऐसा विचार करते रहना कि मैं कोई शै रचना में से नहीं हूँ, तत्व नहीं हूँ, गुन नहीं हूँ, वग़ैरा वग़ैरा, फिर जो कुछ कि सब पदार्थों के निषेद के बाद बाक़ी रहा, वही ब्रह्म है, और वह ब्रह्म मैं ही हूँ, यही उनका अभ्यास है। और कोई तरकीव सुरत के चलने और चढ़ने की वे नहीं मानते, और कहते हैं कि जब ब्रह्म सब जगह मौजूद है, फिर चलना और चढ़ना क्या ज़रूर है? और सुरत जीव को वे ब्रह्म से जुदा या उसकी अंश नहीं मानते, सिर्फ़ ब्रह्म ही मानते हैं।

१०४—और जोगेश्वर-ज्ञानी और वेदान्ती जो पुराने वक़्तों में गुज़रे, उन्होंने अष्टांग-योग यानी प्राणायाम

का अभ्यास करके आत्मा को पिंड यानी छः चक्र की हद्द से न्यारा किया, और ब्रह्माण्ड में चढ़ कर और ब्रह्म-पद् में पहुंच कर फ़रमाया कि ब्रह्म सर्वत्र-व्यापक है। उनका यह कहना उस स्थान पर पहुंच कर सही था, क्योंकि वहाँ पिंडी और ब्रह्माण्डी माया बहुत नीचे रह गई, और वह शुद्ध ब्रह्म का स्थान था कि जहाँ से सिवाय ब्रह्म के और कोई वस्तु यानी माया वग़ैरा और उसकी रचना नज़र नहीं आती। जैसे ऊँचे पहाड़ पर चढ़ कर नीचे देश की रचना नज़र नहीं आती, सिर्फ़ ग़ुबार या बादल छाया हुआ दिखलाई देता है, या जो कोई समुद्र या बड़े दरिया में गहरा ग़ोता मारे, उसको उस वक़्त सिवाय पानी के दूसरी चीज़ नज़र नहीं आती, ऐसे ही जोगेश्वर ज्ञानियों को शुद्ध ब्रह्म-पद् में पहुंचने पर सिर्फ़ ब्रह्म व्यापक नज़र आया, और माया और उसकी रचना, जो नीचे थी, वहाँ से नज़र नहीं आई, और असल में वहाँ पहुंचने वाले की यह हालत सच्ची होती है।

१०५–लेकिन हाल के ज्ञानी और वेदान्ती और सूफ़ियों की अजब हालत है कि इन्होंने कोई अभ्यास प्राण और आत्मा के चढ़ाने का अपने घट में नहीं किया, और न करने की ताक़त और ख़्वाहिश रखते हैं। सिर्फ़ जोगेश्वरों के सिद्धान्त के बचनों को पढ़ कर या सुन कर उनका निश्चय करके अपने को ब्रह्म और ज्ञानी और विद्वान

मान कर चुप हो बैठे। और जो बचन कि उन्हीं जोगेश्वर ज्ञानियों ने निसबत जोग अभ्यास और उसके संजमों की कार्रवाई के लिखे हैं, उनको छोड़ दिया, यानी मेहनत और अभ्यास, वास्ते सफ़ाई और मर्दन करने यानी क़ाबू में लाने मन और इन्द्रियों के, न कर सके। और उनके सिद्धान्त के बचनों से ऐसा समझ कर कि जब ब्रह्म सब जगह मौजूद है तो उससे मिलने के लिये अभ्यास करने की क्या ज़रूरत है, और उन बचनों की तामील कि जिस में अभ्यास के वास्ते ताकीद है, नहीं करते।

१०६–और जोगेश्वर ज्ञानियों ने साफ़ अपने ग्रंथों में फ़रमाया है कि जब तक मन और बासना का नाश न होगा, तब तक तत्त्व-पद का ज्ञान हासिल नहीं हो सकता है। और यह कि जब तक किसी में यह चार साधन पूरे पूरे न पाये जावें, वह ज्ञान के ग्रंथों के पढ़ने का अधिकारी नहीं है। और जो कोई बग़ैर चार साधन हासिल किये उन ग्रंथों को पढ़ेगा, तो वह पढ़ना उसके हक़ में ज़हर-ए-क़ातिल होगा, यानी आत्मघाती हो जावेगा। और वह चार साधन यह हैं (१) बैराग (२) विवेक (३) षट सम्पत्ति (१–सम, यानी अंतःकरण का रोकना, २–दम, यानी बाहर इन्द्रियों का रोकना, ३–उपरति, यानी संसार के दुख-सुख और ख़्वाहिशों से उपराम यानी न्यारे रहना, ४–तितिक्षा, यानी तकलीफ़ की बरदाश्त करना, ५–सरधा, यानी परमार्थ

की सच्ची क़द्र और चाह, और गुरु और महात्माओं और उनके बचनों में भाव और प्यार, ६–समाधानता, यानी होशियारी और पूरी समझ के साथ गुरु और महात्माओं के बचन को सुनना, और चित्त में धर के उनके मुवाफ़िक़ बर्ताव करना) और (४) मुमोक्षता, यानी सच्ची और तेज़ चाह वास्ते हासिल करने मुक्ति यानी अपने जीव के कल्यान के।

१०७–अब मालूम होवे कि इन चारों साधन का हासिल होना, और मन और बासना का नाश होना, बग़ैर योग-अभ्यास की मदद से किसी क़द्र पिंड से न्यारे होने के, यानी बग़ैर छः चक्र के बेधने के, किसी सूरत में मुमकिन नहीं है। इसी सबब से आज-कल के ज्ञानी, वाचक और विद्यावान कहलाते हैं, यानी बातें तो पूरे जोगेश्वरों की सी बनाते हैं, और उनके मन और इन्द्रियों की हालत और उनका व्यवहार और बर्ताव संसारी और अज्ञानी लोगों के मुवाफ़िक़ है। जो ब्रह्म-आनन्द या आत्म-आनन्द उनको प्राप्त हुआ होता तो उस आनन्द में मगन और बे-परवाह रहते, और मेलों और तमाशों में और देशों और मकानों की सैर के वास्ते, देश विदेश मारे २ न फिरते, और रेल खर्च और भंडारों के लिये इससे-उससे माँग कर रुपये न जोड़ते। बल्कि जो सच्ची चाह परमार्थ की और अपने जीव के कल्यान का दर्द उनके दिल में होता, तो किसी पूरे गुरू

या महात्मा को तलाश करके, उसके सनमुख दीनता और आधीनता के साथ रह कर, कोई दिन सुरत और मन की घट में चढ़ाई का अभ्यास करते, कि जिस से चारों साधन पूरे २ उन में आ जाते, और मन और वासना का किसी क़दर नाश हो जाता, और तब ज्ञान के बचन सुनने और समझने के अधिकारी बन जाते।

१०८–लेकिन अफ़सोस की बात है कि इन वाचक ज्ञानियों को अपने मन और इन्द्रियों के हाल की भी ख़बर नहीं कि कैसे चक्रों में उनको डाल कर घुमा रहे हैं। और जो कोई उनको चितावनी का बचन सुनावे तो उससे लड़ने को तैयार होते हैं, और जो संतों का भेद और जुगत मन और सुरत के चढ़ाने की सुनाना चाहे, तो उससे वाद-विवाद करते हैं, और अपने जीव के हित के बचनों का निरादर करके मुतलक़ नहीं सुनते। यह लोग आप भी ठगाये गये और जो कोई उनके बचन सुनेगा और मानेगा वह भी धोखा खावेगा, और अपने जीव के कल्यान में आप ख़लल डालेगा यानी आत्मघाती हो जावेगा।

१०९–ग़ौर करने से मालूम हो सकता है कि चैतन्य में ब-सबब हायल होने (परदा डालने) माया के, बहुत दरजे हो गये हैं यानी ऊँचे से ऊँचे दरजे का चैतन्य महा निर्मल और लतीफ़ है। और जहाँ से कि माया का ज़हूर

हुआ है, उससे नीचे की तरफ़ दरजे-बदरजे माया की कसाफ़त से चैतन्य भी मलीन हो रहा है। और इस लोक का चैतन्य निहायत कसीफ़ यानी मलीन है कि अपनी ताक़त से कोई कार्रवाई रचना की नहीं कर सकता है और सूरज मंडल के विशेष चैतन्य का आधीन है। इसी तरह सूरज मंडल का चैतन्य अपने से ऊँचे के सूरज मंडल के चैतन्य का आधीन है, यानी माया की हद्द में सामान्य और विशेष चैतन्य का हिसाब नीचे से ऊपर तक चला गया है, और माया के घेर के पार महा निर्मल चैतन्य देश है। बग़ैर वहाँ पहुँचे किसी को सच्चा और पूरा उद्धार नहीं हो सकता है। फिर वाचक ज्ञानियों ने जो चैतन्य को व्यापक मान कर ऊपर की तरफ़ चलना चढ़ना नहीं माना तो किस क़द्र ग़लती करी और अपने जीव के उद्धार में किस क़द्र धोखा खाया ?

११०—क्योंकि इस देश का चैतन्य, मलीन-माया के संग से आप मलीन हो रहा है और जनम-मरन यानी रचना के भाव और अभाव में पड़ा हुआ है। फिर यहाँ रह कर यानी पिंड में बैठ कर जहाँ से कि दुनिया की कार्रवाई मन और इन्द्रियों के वसीले से हो रही है, किसी का छुटकारा जनम-मरन और देह और दुनिया के दुख-सुख से नहीं हो सकता है। और यही सबब है कि वाचक ज्ञानियों की हालत नहीं बदलती। यानी उनके मन और इन्द्रियों का बर्ताव संसारी और अज्ञानी जीवों के मुवाफ़िक़ रहता है।

१११–जोगेश्वर ज्ञानियों ने ब्रह्म में तीन दरजे क़ायम किये यानी माया-सबल ब्रह्म, जो कि माया से मिल कर रचना कर रहा है, और साक्षी, ब्रह्म, जो कि उसको मदद दे रहा है, और शुद्ध-ब्रह्म, जहाँ कि माया निहायत सूक्ष्म और बीज रूप है और वह पद रचना की कार्रवाई से किसी क़दर न्यारा है, यानी गुप्त मदद दे रहा है। अब जो मुवाफ़िक़ समझ वाचक ज्ञानियों के, ब्रह्म के सर्वत्र-व्यापक होने में कोई भेद नहीं था, तो जोगेश्वर ज्ञानियों ने यह दरजे क्यों मुक़र्रर किये ? और माया-सबल ब्रह्म और साक्षी-ब्रह्म के मंडल में क्यों नहीं ठहरे ? और योग-अभ्यास करके पहिले पिंड से न्यारे होकर और फिर ब्रह्माण्ड में चढ़ कर शुद्ध-ब्रह्म पद में पहुँच कर क्यों विश्राम किया ?

११२–इससे साफ़ ज़ाहिर है कि वाचक ज्ञानी निरे विद्यावान हैं, यानी परमार्थी किताबें, सिर्फ़ मुताल्लिक़ ज्ञान के, पढ़ कर अपने आप को पूरा समझते हैं, और ब्रह्म रूप मानते हैं और अमल यानी अभ्यास कुछ नहीं किया या करते हैं। विद्या यानी इल्म बग़ैर अमल यानी अभ्यास के ख़ाली है। इस वास्ते यह लोग बे-अमल यानी अभ्यास से ख़ाली रह कर अहंकारी और मानी हो गये, और अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारी, यानी घट में चलने और चढ़ने को फ़िज़ूल समझ कर संसारी और अज्ञानी जीवों के गिरोह में शुमार किये गये, बल्कि उनसे भी कम, क्योंकि

उन लोगों के चित्त में थोड़ी-बहुत दीनता है, और जो कोई महात्मा उनको मिल जावें तो उनके बचन को मान कर उनकी दया के भागी हो जावें, और अपना थोड़ा-बहुत उद्धार का रास्ता जारी कर लेवें। और यह वाचक ज्ञानी इस क़दर अहंकारी और बे-परवाह हो गये कि अपने बराबर किसी को ख़्याल नहीं करते, और किसी के बचन को, जो इनके हित के वास्ते कहे, नहीं मानते हैं।

११३—और मालूम होवे कि वाचक ज्ञानी क़रीब-क़रीब नास्तिक हैं। यानी जब उन्होंने अपने आप को ब्रह्म माना तो उनको किसी की सेवा या भक्ति करने की ज़रूरत नहीं रही, तो वह असली ब्रह्म जो कि तमाम तीन लोक की रचना का करता-धरता है, ग़ायब कर दिया गया, और उसकी भक्ति मौक़ूफ़ हो गई। अब ख़्याल करो कि ऐसे ज्ञान का मत नास्तिक मत हुआ या क्या ? क्योंकि यह वाचक ज्ञानी जीवों से अपनी भक्ति और सेवा तो कराते हैं, और आप किसी की भक्ति या सेवा नहीं करते, बल्कि भक्ति से विरोध रखते हैं, और कहते हैं कि जो कोई भक्ति करेगा, उसका जनम-मरन दूर न होगा, और अपना जनम-मरन नहीं मानते हैं। यानी ऐसा ख़्याल करते हैं कि वे देह छोड़ने पर ज़रूर मुक्त हो जावेंगे। और हाल यह है कि अपनी ज़िन्दगी भर में मुक्ति की कुछ भी हालत या कैफ़ियत

नहीं पैदा करी, तब मरने पर किस तरह मुक्ति मिल सकती है ?

११४–जो लोग कि मदर्सों में विद्या पढ़ कर दरजा हासिल करते हैं, उन में से बाज़े, इल्म फ़िलासफ़ी और हिकमत की किताबें पढ़ कर, और कुल्ल-मालिक की मौजूदगी में शक लाकर, नास्तिक मत की तरफ़ रुजू करते हैं। उनका हाल भी थोड़ा-बहुत बाचक ज्ञानियों के मुवाफ़िक़ समझना चाहिये, यानी बाज़े उनमें से चैतन्य को सब जगह व्यापक मान कर, उसकी और माया की मिलौनी से रचना का ज़हूर कहते हैं, पर उस चैतन्य को समझवार और शक्तिमान नहीं मानते। और कोई २ चैतन्य को न्यारा नहीं मानते। उसको माया के मसौले का ख़ुलासा ख़्याल करते हैं, और कहते हैं कि जब जीव की मौत होती है, उस वक़्त माया का मसाला यानी तत्त्व और गुन वग़ैरा सब आपस में जुदा होकर अपने २ मंडल में जा समाते हैं, और वह चैतन्य क़ुव्वत जो इनकी मजमुई (मिलौनी) शकल से पैदा हुई थी, गुप्त यानी ग़ायब हो जाती है, और फिर मनुष्य के आपे का कुछ निशान बाक़ी नहीं रहता है। इस वास्ते जो कुछ काम किया जाता है, वह इसी जिन्दगी के आराम के वास्ते है, और दूसरों को भी आराम देना चाहिये–इससे ज़्यादा वे लोग कुछ नहीं मानते, और मालिक की भक्ति करने वालों को नादान समझते हैं।

११५–यह सब मत, काल-पुरुष ने जीवों के भरमाने और सत्त पद से बे-ख़बर रखने के वास्ते, विद्या और बुद्धि की मदद से, प्रकट कराये। और जो जीव कि उस क़िस्म की तबीयत रखते हैं, वे उन में शामिल होकर सच्चे मालिक से मुनकिर (नास्तिक) हो जाते हैं, और कुल्ल मज़हबों पर जो किसी को मालिक मानते हैं, तान करते हैं, और कहते हैं कि उनके आचार्यों ने अपनी नामवरी और फ़ायदे की नज़र से उन मतों को मूर्ख जीवों में जारी किया, और उनको ख़ौफ़ और उम्मेद दिखा कर अपने बचनों में ख़ूब मज़बूत बाँधा। असल में कोई मालिक नहीं है, और बाद मौत के, कर्म और उसका फल बाक़ी नहीं रहता है और न कहीं स्वर्ग और नर्क वग़ैरा है।

११६–इन लोगों ने सिर्फ़ माया के पदार्थों के भोग-बिलास को अपना आनन्द और सरूर समझा है और जीवों की अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ मदद करना उपकार समझा है। इनकी समझ पर अफ़सोस आता है कि कुल्ल कार्रवाई इस रचना की अपनी आँख से देखते हैं कि वह किसी न किसी रूह की ताक़त से जारी है, और वह रूह किसी न किसी क़िस्म की देह यानी जिस्म में बैठ कर कार्रवाई करती है, और मिस्ल सूरज और चाँद वग़ैरा बे-शुमार अर्से से उनका ज़हूर और क़याम चला आता है

और बे-शुमार अर्से तक जारी रहेगा। इसी तरह इस मंडल के ऊपर और मंडल मालूम होते हैं। और क़ानून क़ुद्रत को निज़ाम फ़लकी और ज़मीनी यानी ऊँचे और नीचे देश की रचना के बन्दोबस्त में देख कर साबित होता है कि उनका बन्दोबस्त मुक़र्रर किये हुए क़ायदों के मुवाफ़िक़ जारी है, और बे-शुमार अर्से से ऐसा ही चला आया है और जारी रहेगा, और इस दुनिया के बन्दोबस्त में भी कोई न कोई अफ़सर और कारकुन की मार्फ़त कार्रवाई जारी होती है। इसी तरह घर का बन्दोबस्त भी किसी घर के बड़े की मार्फ़त जारी होता है। और जो कि इस दुनिया की कार्रवाई ऊपर की रचना की छाया यानी अक्स और नक़ल समझी जाती है, इस सबब से मुमकिन नहीं है कि ऊँचे देश की रचना का बन्दोबस्त और इसी तरह कुल्ल रचना का बन्दोबस्त बग़ैर किसी अफ़सर या मालिक के जारी होवे। अलबत्ता एक के ऊपर एक अफ़सर या मालिक मुक़र्रर हैं, और सब के परे, और सब के ऊपर, कुल्ल मालिक का देश और तख़्त है। वहाँ से आदि में रचना की कार्रवाई शुरू हुई और सब बन्दोबस्त और क़ायदे वहीं से मुक़र्रर होते चले आये। और जो कि कुल्ल रचना के हर एक जिस्म और चीज़ के बनाने में इरादा और मतलब और क़ुद्रत और कारीगरी पाई जाती है (जो समर्थ कर्त्ता की मौजूदगी के गवाह हैं), फिर जो कोई रचना को आप से आप, बग़ैर किसी कर्त्ता

के मानते हैं, वह सरीह ग़लती में पड़े हुए हैं, पर अपनी मन-हठ से इस बात के क़ायल नहीं होना चाहते। सो इसका फल उनको, वक़्त सख़्त तकलीफ़ के, इस ज़िन्दगी में, या वक़्त छोड़ने इस देह के, मालूम पड़ेगा।

११७–बहुत से मुआमले तसदीक़ किये हुए ऐसे हैं कि जहाँ एक शख़्स ने पैदा हो कर अपने पिछले जन्म का हाल बयान किया और जो उसके कलाम की तसदीक़ उसके पिछले जन्म की सकूनत (रहने की जगह) से की गई तो सब बातें दुरुस्त निकलीं। फिर जो यह लोग रूह सुरत का मरते वक़्त अभाव मानते हैं, निहायत ग़लती करते हैं। ज़्यादा इस मुआमले को यहाँ तूल करना मुनासिब नहीं। जिस क़दर लिखा गया है, उसी क़दर समझवार सतसंगी खोजी के वास्ते काफ़ी है। और जो लोग वाद विवाद करें, वह किसी दलील से क़ायल नहीं होवेंगे, उनसे बात-चीत करना फ़िज़ूल है।

१६–समाजों की परमार्थी कार्रवाई

११८–जो समाज जहाँ-तहाँ आज-कल जारी हैं, उनके आचार्य, विद्यावान और बुद्धिमान हुए। उन्होंने हालत इस वक़्त के जीवों की देख कर कि खान-पान और आज़ादगी की ख़्वाहिश से अपने मत को छोड़ कर ग़ैर मत में शामिल होते चले जाते हैं या इरादा शामिल होने का रखते हैं, इस सबब से मुनासिब और मसलहत वक़्त

समझ कर क़रीब २ वेदांत शास्त्र के क़ायदे और उसूल के मुवाफ़िक़ नया मत खड़ा किया कि उसमें हर तरह की आज़ादगी खान-पान वग़ैरा और शादी व्यवहार की मिस्ल ईसाई मत वालों के, जीवों को दे दी। और जो ज़ाहिरी रसूम कि पुराने वक़्तों से जारी हैं, और उनको लोग अपने मज़हब का एक अंग समझते हैं, और उनके जारी रहने में इस ज़माने में सिवाय हर्ज और तकलीफ़ के कोई ख़ास दुनियावी या परमार्थी फ़ायदा नज़र नहीं आता, उनकी क़ैद छुड़ा दी। और एक मालिक का जिसको मुताबिक़ वेदांत शास्त्र के, ब्रह्म कहते हैं, इष्ट बँधवा कर, उसकी स्तुति और महिमा और शुकराने के भजन या बानी का पढ़ना या गाना जारी किया, और नक़ल यानी मूर्ति वग़ैरा बना कर पूजा करने को मना और निषेध किया और तीर्थ-व्रत और औतार और देवताओं की पूजा (मूर्तियाँ बना कर) जो कसरत से जारी थी, मौक़ूफ़ कर दी। और जो कोई ज़्यादा शौक़ वाले मालूम हुए, उनको, वास्ते प्राणायाम यानी अष्टांग योग के अभ्यास करने की हिदायत की। लेकिन जो कि यह अभ्यास निहायत कठिन और उसके संजम भी बहुत कठिन हैं, इसका सच्चा अभ्यासी उनके बेड़े में ज़ाहिरा कोई नज़र नहीं आता। और कोई २ ब्रह्म को आकाशवत व्यापक मान कर उसका ध्यान आँख बन्द करके या खुली आँखों से, बग़ैर मुक़र्रर करने किसी ख़ास

मुक़ाम के, अंतर या बाहर में करते हैं। इस अभ्यास से थोड़ी सफ़ाई होती है। और जो कोई प्रेम सहित बानी का पाठ करते हैं या भजन गाते हैं, तो वह भी उस वक़्त किसी क़द्र अपने मन में गद् २ होकर प्रेम की हालत में थोड़ी देर के वास्ते भर जाते हैं। मगर वह हालत ज़्यादा ठहराऊ नहीं होती और न उसकी तरक़्क़ी सिर्फ़ इसी क़द्र कार्रवाई से मुमकिन है। इन समाजों में सिर्फ़ इसी क़द्र साधन वास्ते प्राप्ति मुक्ति के जारी हैं।

११६–ये सब कुल्ल और सच्चे मालिक के भेद, और अंतर में मन और सुरत के चढ़ाने के अभ्यास से, बिलकुल बे-खबर हैं। और इस सबब से उन जीवों का, जो इन समाजों में शामिल हैं, सच्चा उद्धार बल्कि किसी ऊँचे दरजे का भी उद्धार या मुक्ति मुमकिन नहीं। बहुत से लोग तो इन समाजों में सिर्फ़ नामवरी और दुनिया की कार्रवाई या आज़ादी के हासिल करने के लिये शामिल होते हैं, और असल में परमार्थ की चाह उनके दिल में बिलकुल नहीं मालूम होती है।

१२०–एक नुक़्स (कसर) इन समाजों में और भी है कि वे गुरु की ज़रूरत नहीं समझते, और न पूरे गुरु की खोज करते हैं। सबब इसका यह है कि इनके मत में भेद और अभ्यास नहीं है। और इसी सबब से इनको ज़रूरत

पूरे गुरु की मदद् की नहीं होती, क्योंकि इनके मत में सिर्फ़ किताबों का पढ़ना और पढ़ाना या भजन वग़ैरा का गाना जारी है, और इनकी किताबों में भेद् रास्ते या तरकीब अभ्यास अंदरूनी (अंतरी) का कोई ज़िक्र नहीं है, कि जिस के वास्ते, ज़रूरत दरियाफ़्त की, भेदी और अभ्यासी से, होवे। बल्कि उन में तारीख़ी हाल या महिमा और सिफ़त मालिक की, या मसले इल्मी और अक़्ली, या हाल तत्वों और गुनों का, जो स्थूल रचना की कार्रवाई कर रहे हैं, दर्ज है। इस सबब से जिस किसी ने थोड़ी-बहुत रस्मी विद्या हासिल की है, वह भी उन किताबों को पढ़ कर उनका मतलब अपनी समझ के मुवाफ़िक़ समझ सकता है। यह लोग भेदी और अभ्यासी गुरु की क़दर नहीं जानते हैं, क्योंकि इनको अपने जीव के सच्चे उद्धार और अपने मालिक से मिलने की ख़्वाहिश बिलकुल नहीं है।

१२१—इसी तरह कर्म-काण्ड के शास्त्र भी सिर्फ़ बाहरी रस्मों, और उनकी कार्रवाई का ज़िक्र करते हैं, और इसी सबब से वहाँ भी पूरे गुरु की ज़रूरत नहीं है, सिर्फ़ विद्यावान गुरु, जो होम और यज्ञ वग़ैरा और जनम-मरन और दूसरे समय के कर्म, किताबों को पढ़ कर, कराते हैं, और जिन को वे आचार्य्य कहते हैं, काफ़ी समझा जाता है। और जो लोग आप थोड़ा-बहुत संस्कृत ज़बान से

वाक़फ़ियत रखते हैं, वे आप सब कारवाई किताबों को देख कर कर सकते हैं। यह लोग भी, यानी कर्मकाण्डी, पूरे गुरु की क़दर नहीं जानते, और न इनके मन में खोज सच्चे परमार्थ का है। सिर्फ़ कर्म करने से मुक्ति हासिल होने का यक़ीन करते हैं। मगर यह बात सही नहीं है, क्योंकि जब तक उपासना करके सच्चा ज्ञान हासिल न होगा, मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। और संतों के बचन के मुवाफ़िक़ यह मुक्ति भी ना-तमाम है। यानी पूरा और सच्चा उद्धार सच्चे ज्ञानियों का भी जिनको जोग अभ्यास करके ज्ञान प्राप्त हुआ है, नहीं होता है, जब तक कि संत मत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके पारब्रह्म पद के पार संत देश में न जावें। फिर कर्मकाण्डी और बाहरमुख उपासना, मूर्ति वग़ैरा की करने वालों को, सच्ची मुक्ति किस तरह हासिल हो सकती है ?

१२२—ऊपर के लिखे हुए से ज़ाहिर है कि वाचक ज्ञानी और समाज वाले और कर्मकाण्डी, घट के भेद से बिलकुल बे-खबर हैं और हरचंद उनके मत में शब्द की महिमा बहुत की है, और साफ़ लिखा है कि आदि में ओम शब्द प्रकट हुआ, और इसी शब्द से कुल्ल रचना पैदा हुई, और तीन लोक की रचना की ताक़त और मसाले का भंडार भी यही शब्द है, पर ये लोग शब्द का खोज नहीं करते, और न रचना का भेद दरियाफ्त करते हैं कि कैसे

ओम् शब्द से तीन लोक की रचना हुई। जो यह ख़्वाहिश इनके दिल में होती तो जरूर भेदी और अभ्यासी गुरु की जरूरत इनको पड़ती।

१२३—ज़रा ग़ौर करने से मालूम होगा, और वेद के उपनिषदों में भी लिखा है कि जब तक अभ्यासी ओम् शब्द यानी शब्द ब्रह्म को पहिले प्राप्त होकर उसके पार न जावेगा, तब तक वेद मत के मुवाफ़िक़ उद्धार न होगा, यानी अशब्द ब्रह्म की प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि ओम् शब्द को ही महातत्व कहते हैं, और वही तीन लोक की रचना के मसाले का भंडार है। फिर जब तक उसके पार न जावेगा, तीन लोक की रचना के घेर से न्यारा नहीं होगा। यह भेद जोगेश्वर-ज्ञानी जानते थे, और वे जोग-अभ्यास करके ओम् पद के पार पहुँचे। पर आज-कल के ज्ञानी इस रास्ते और भेद से बिलकुल बे-ख़बर हैं, और उन को ख़्वाहिश उसके मालूम करने और योग-अभ्यास करने की नहीं है। सिर्फ़ अपनी विद्या और बुद्धि की समझ के मुवाफ़िक़ अपनी विदेह मुक्ति का यक़ीन करते हैं, यानी बाद मरने के, मुक्ति का हासिल होना, मानते हैं, और यह भारी ग़लती और भूल है और सच्चे जोगेश्वर-ज्ञानी और उपनिषदों के कलाम के बर-ख़िलाफ़ है।

१२४—रस्मी विद्या तो विद्यावान गुरु से हासिल हो सकती है। सो विद्यावान गुरु को यह सब मानते हैं। पर

ब्रह्म-ज्ञान बग़ैर ब्रह्म-नेष्ठी गुरु के हासिल नहीं हो सकता है। सच्चे ज्ञानियों ने तीन दरजे ब्रह्म-ज्ञानियों के मुक़र्रर किये हैं—ब्रह्मश्रोत्री, ब्रह्मनेष्ठी, ब्रह्मसंतुष्ठ। ब्रह्मश्रोत्री, विद्यावान ज्ञानी को कहते हैं। यह अव्वल सीढ़ी है। ऐसे ब्रह्म-ज्ञानी से जीव का कारज नहीं हो सकता, जब तक कि वह पढ़े और सुने के मुवाफ़िक़ नेष्ठा यानी अभ्यास न करे। ब्रह्मनेष्ठी, अभ्यासी को कहते हैं कि वह अभ्यास करके ब्रह्म पद में पहुँचना चाहता है। और ब्रह्मसंतुष्ठ, उसको कहते हैं कि जो ब्रह्म-पद को प्राप्त होकर शान्त स्वरूप हो गया।

१२५—अब ख़्याल करो कि जितने ज्ञानी आज कल नज़र आते हैं, वे सब विद्यावान हैं, यानी विद्या पढ़ कर उन्होंने ब्रह्म का निश्चय किया है। यह निश्चय इल्मी और अक़्ली है। जीव का कल्यान इससे नहीं हो सकता है, जब तक कि उस विद्या के मुवाफ़िक़ अमल यानी अभ्यास न किया जावेगा। और वह अभ्यास, अन्तरमुख उपासना ब्रह्म-पद की है, यानी प्रेम और भक्ति के साथ जो अभ्यास कि संतों ने इस वक़्त में जारी फ़रमाया है, उसकी कमाई करके पिण्ड देश से न्यारे होकर, ब्रह्माण्ड में चढ़ कर, पहुँचना, क्योंकि प्राणायाम का अभ्यास जो पिछले वक़्त में जारी था, जीवों से बिलकुल नहीं बन सकता है। उसके संजम वग़ैरा निहायत कठिन हैं।

१२६—इन मतों के अभ्यास की कमाई, बग़ैर मदद अभ्यासी यानी नेष्ठावान या संतुष्ट गुरू के, किसी तरह

मुमकिन नहीं है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह वाचक ज्ञानी सिर्फ़ विद्या में अटके रह गये, और अंतरमुख अभ्यास इन से नहीं बना। इस वास्ते इन्होंने अभ्यासी गुरू का खोज नहीं किया, और जो कोई ऐसा गुरू मिले तो उसके बचन को भी नहीं मानते और नहीं सुनते हैं। यह लोग साफ़ खिलाफ़ बचन सच्चे जोगेश्वर, वेदांती या ज्ञानी और वेद मत के, कार्रवाई कर रहे हैं, और फिर अपनी ग़लती और भूल के मन-हठ और अहंकार से क़ायल नहीं होते।

१२७—यही हाल कुल्ल मतों के लोगों का है कि अपने आचार्य्यों के बचन के बर-खिलाफ़ कार्रवाई कर रहे हैं, यानी नीचे के दरजे की बातों में अटक रहे हैं, या अपने मन और बुद्धि के वसीले से बाहरमुख पूजा ईजाद (नई जारी) करके, जीवों को उसमें भरमा रहे हैं, और अपने रोज़गार की ख़ातिर सच्ची बात को छिपाते चले आये हैं। यहाँ तक कि अब वे उन सच्ची बातों से आप भी बे-ख़बर रह गये, और जो कोई उन बातों को जनावे, उससे विरोध करते हैं। और बा-वजूदे कि आप अपने आचार्य्यों के बचन से ग़ाफ़िल और बे-ख़बर हैं, उलटा उस समझाने वाले को निन्दक क़रार देकर, आम जीवों को उलटे बचन सुना कर, सच्चे रास्ते पर चलने से बाज़ रखते हैं। यानी इन्होंने अपना अकाज किया और औरों का भी अकाज करते हैं।

१२८—सच्चे परमार्थी को ऐसे लोगों और बाहरमुखी पूजा वालों के संग से क़तई परहेज़ करना चाहिए और उनके बचनों को सुनना नहीं चाहिए, बल्कि नेष्ठावान या अभ्यासी गुरु से (और जो मिल जावे तो संतुष्ट गुरु से) मिल कर उनसे अभ्यास की जुगत दरियाफ़्त करे, और जिस क़दर बन सके अभ्यास करके अपने अंतर में आनंद हासिल करना और जीते-जी अपनी मुक्ति होती हुई देखना चाहिए।

१७—संत सतगुरु और साधगुरु की पहिचान

१२९—राधास्वामी मत में संत सतगुरु या साधगुरु की खास पहिचान यह रक्खी है—

(१) यह कि सुरत-शब्द मार्ग के भेदी और अभ्यासी होवें, और घट का भेद और जुगत अभ्यास की, मय नाम स्थानों और शब्दों के समझाते होवें, और सिवाय इसके, दूसरे क़िस्म के अभ्यास की हिदायत न करते होवें।

(२) यह कि दर्दी खोजी को, फ़ौरन बचन सुन कर और अभ्यासियों की हालत देख कर, दिल में शान्ति और आनंद पैदा होगा, और जिस क़दर उसके संशय और संदेह दूर होते जावेंगे, और प्रश्नों के पूरे जवाब मिलते जावेंगे, उसी क़दर उसकी प्रीत और प्रतीत, संत सतगुरु या साधगुरु के चरनों में, बढ़ती जावेगी और अंतर में

राधास्वामी दयाल की दया के परचे पाकर, यक़ीन मजबूत होता जावेगा, और प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा। इससे बढ़कर, यानी बचन और भेद से ज़्यादा, कोई पहिचान नहीं है कि जिससे सच्चे परमार्थी के दिल में थोड़ा-बहुत यक़ीन पैदा होवे कि यहाँ से मेरा परमार्थी काम बनेगा।

(३) यह कि जो कोई कुछ अर्से तक उनका रात-दिन सतसंग करे, और उनकी रहनी और गहनी और बोलचाल और व्यवहार और बर्ताव को देखे, तो उसके मन में दिन २ इस बात का यक़ीन होता जावेगा कि वे ज़रूर पूरे अभ्यासी हैं, और रहनी उनकी सतोगुनी है, और उसका परमार्थ उनके वसीले से ज़रूर बन जावेगा। सिवाय इसके और जो कोई पहिचान है, वह सिवाय सुरत-शब्द अभ्यासी के दूसरा नहीं परख सकता है, क्योंकि अभ्यासी की हालत को अभ्यासी ही परख और समझ सकता है, दूसरे की ताक़त नहीं है।

१३१—जो कोई पुरानी किताबों के मुवाफ़िक़ महात्माओं के लक्षण पढ़ कर, किसी महात्मा या अभ्यासी की पहिचान किया चाहें, तो उनको हरगिज़ पहिचान नहीं आवेगी, क्योंकि जो काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार और मन और इन्द्रियों के चक्कर में आप पड़े हैं, और मालिक के भेद, और उसके मिलने की जुगत से बेख़बर हैं, उनकी क्या ताक़त है कि जो इनके चक्कर से

न्यारे बर्त रहे हैं या इन क़ुव्वतों पर किसी क़दर सवार हैं, यानी उनको अपने क़ाबू में लाये हैं, उनकी हालत की थोड़ी-बहुत परख और पहिचान कर सकें ? ऐसे लोग हमेशा धोखा खाते हैं और धोखा खावेंगे ।

१३१—इस वास्ते सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि पहिले सिर्फ़ वचन की पहिचान करे, यानी जिनके दर्शन और बचन और संग से कुल्ल मालिक के चरनों में भय और भाव पैदा होवे, और परमार्थ की क़दर और बड़ाई चित्त में समावे, और दुनिया और उसके सामान दिन २ ओछे और रूखे और फीके मालूम होते जावें, और जिन चीज़ों और बातों में कि संसारी जीव अटके और फँसे हुए हैं, उनसे उसकी तबियत आहिस्ता २ हटती जावे, तो जानना और समझना चाहिए कि ऐसों के संग और उपदेश से ज़रूर एक दिन, संसार और उसके बंधनों से, छुटकारा हो जावेगा और परम पद और परम आनंद की प्राप्ति हो जावेगी । इससे ज़्यादा हाल उनके अभ्यास और उनकी गति का जब तक कि यह आप कोई दिन अभ्यास न करेगा, तब तक नहीं मालूम होगा ।

१३२—फिर उन्हीं का कोई दिन सतसंग करे, और जब उनकी रहनी और बर्ताव थोड़ा-बहुत देख ले, तब उन में अपना गुरु-भाव लावे, और जिस क़दर बने, उनकी आज्ञा अनुसार, कार्रवाई परमार्थ की करे, और जिस बात में

कसर पड़े, उसके दूर होने के वास्ते उनकी और राधास्वामी दयाल की दया माँगता रहे। रफ़्ता २ एक दिन उसका कारज सिद्ध हो जावेगा।

१८--सच्चे परमार्थी के थोड़े-बहुत लक्षण और स्वभाव यहाँ लिखे जाते हैं

१३३--हर एक परमार्थी को चाहिए कि इन लक्षणों के मुवाफ़िक़ अपने मन के हाल और चाल को परखता चले :--

(१) परमार्थी का मन कोमल और चित्त मुलायम होना चाहिए, ताकि किसी के साथ सख़्ती न करे, और दुखिया का दुख, तवज्जह से सुन कर, जो बन सके तो अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ उसकी मदद करे, नहीं तो उसकी हमदर्दी, ग़म-ख़्वारी और दिलदारी करे।

(२) परमार्थ की चाह सच्ची होवे, और सच्चे परमार्थ का खोज बराबर जारी रहे, और जब उसका पता लग जावे, तब, वाद-विवाद और पक्षपात छोड़ कर, उसको दिल से क़बूल करके, जो अभ्यास कि उसके हासिल करने के वास्ते बताया जावे, उसकी, सच्चे मन से कार्रवाई करे।

(३) कुल्ल मालिक की मौजूदगी का पूरा यक़ीन मन में होवे, और उसकी भक्ति करने के वास्ते नई २ उमंग मन में उठती रहे।

(४) जो कोई सच्चे कुल्ल मालिक का पता और भेद सुनावे, वह शख़्स प्यारा लगे, और दीनता के साथ उसका संग बारम्बार करे, और उससे पूरा भेद और जुक्ति लेकर, जिस क़दर जल्दी बने, अभ्यास शुरू करके, अपने अंतर में थोड़ा-बहुत रस और आनन्द लेवे।

(५) क्षमा और बरदाश्त करना उसकी आदत हो जावे, और जहाँ तक मुमकिन होवे, किसी से गुस्सा या तकरार या झगड़ा न करे।

(६) संसारी लोग और माया के पदार्थों से, मन में किसी क़दर नफ़रत होवे, यानी इनसे मिलने में मन राज़ी और ख़ुश न होवे।

(७) सच्चे परमार्थ की कार्रवाई में संसारी लोगों का ख़ौफ़ और शर्म न करने का इरादा रक्खे, और जिस क़दर बने, इसी मुवाफ़िक़ बर्ताव शुरू करे।

(८) सच्चे मालिक की भक्ति तन, मन और धन से शौक़ के साथ करने की चाह बनी रहे, और जिस क़दर बन सके, उसकी कार्रवाई जारी करे।

(९) गुरू और मालिक की प्रसन्नता की, औरों की प्रसन्नता पर, जहाँ तक मुमकिन होवे, मुख्यता रक्खे।

(१०) मन और इन्द्रियों को, शौक़ के साथ, जिस क़दर बने, क़ाबू में लाने का इरादा मज़बूत रक्खे।

(११ जो काम या चाल या रस्म कि उसके परमार्थ

की कार्रवाई में विघ्नकारक होवें, उनसे जिस क़दर बने बचाव करे।

(१२) निंदक लोगों के बचन सुन कर, विचार के साथ, कार्रवाई करे, और ग़ौर करके समझे और विचारे कि उनकी निंदा किस क़दर ग़लत और किस क़दर सही है, और जो सही है उसमें क्या नुक़सान है, या यह कि परमार्थी फ़ायदा उसमें किस क़दर है, और जो अपनी समझ में कोई बात ब-ख़ूबी न आवे तो प्रेमी सतसंगी से उसका हाल अलेहदगी में दरियाफ़्त करके अपना इतमीनान और तसल्ली करे।

(१३) किसी तरह का अहंकार या मान, ज़ात-पाँत और धन और हुकूमत और गुन वग़ैरा का, अपने मन में, परमार्थी कार्रवाई और सतसंग में न रक्खे।

(१४) अपनी कसरों और औगुनों का ख़याल करके, आपको निबल और ना-चीज़ और ना-कारा देखता और समझता रहे, और हर एक से प्यार और दीनता के साथ बर्ताव करे, और उन कसरों के दूर करने की बराबर कोशिश जारी रक्खे।

(१५) जहाँ तक बने, ईर्षा और विरोध और क्रोध को अपने मन में न आने देवे, और किसी की बुराई-भलाई दूसरे से, उसकी ग़ीबत में (पीठ पीछे) न करे, और न दूसरों की बुराई सुनने की आदत रक्खे।

(१६) बे-फ़ायदा लोभ और लालच न करे, और बग़ैर ज़रूरत के, दूसरे से कोई पदार्थ न माँगे और न लेवे।

(१७) अपनी मान-बड़ाई के वास्ते कोई काम दिखावे का न करे। परमार्थ में ऐसी करतूत निष्फल समझी जाती है। जो काम या सेवा करे, वह गुरु और मालिक की प्रसन्नता के वास्ते, निर अहंकार और चित्त में दीनता रख कर, करे।

१८--राधास्वामी मत के अभ्यासी को इन संजमों की सम्हाल रखना चाहिए

१३४—जो कोई राधास्वामी मत में शामिल होवे और उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू करे, उसको, सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास दुरुस्ता से करने के वास्ते यह संजम दरकार हैं :–

(१) मांस-अहार न करे, और न कोई नशे की चीज़ पीवे या खावे। हुक़्क़ा पीना नशे में दाख़िल नहीं है।

(२) मामूली खाने से आहिस्ता २ क़रीब चौथाई हिस्से के कम कर देवे, और बहुत चिकने चुपड़े और स्वाद के भोजन ज़्यादा न खावे।

(३) सोवने में भी कुछ कमी करे, यानी आम तौर पर छः घंटे से ज़्यादा न सोवे।

(४) संसारी लोगों से ज़रूरत के मुवाफ़िक़ मेल और बर्ताव करे। उनसे ज़्यादा मेल न रक्खे, और बग़ैर ज़रूरत के, किसी के संसारी मुआमले में दख़ल न देवे।

(५) संसारी पदार्थ और इन्द्रियों के भोगों की चाह फ़िज़ूल न उठावे और न उनके वास्ते फ़िज़ूल जतन करे, बल्कि जो भोग और पदार्थ मुयस्सर आवें, उनमें भी जिस क़द्र मुनासिब होवे, एहतियात के साथ बर्ताव करे।

(६) वक़्त अभ्यास के, बे-फ़ायदा, ख़्याल दुनिया और उसके पदार्थों और भोगों के, न उठावे, और जो पुरानी आदत के मुवाफ़िक़ ऐसी गुनावन मन में पैदा होवे, तो उसको, जिस क़द्र जल्दी बने, दूर हटावे, नहीं तो अभ्यास में रस नहीं मिलेगा।

(७) सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और गुरु का किसी किसी क़द्र ख़ौफ़ दिल में रक्खे, और उनकी प्रसन्नता में अपनी बेहतरी समझे, और नाराज़ी में नुक़सान, परमार्थ और स्वार्थ का। और उनके चरनों में दिन २ प्रीत और प्रतीत बढ़ाता रहे।

(८) जहाँ तक मुमकिन होवे किसी जीव से विरोध और ईर्षा दिल में न रक्खे।

(९) पुण्य-कर्म, मुवाफ़िक़ दफ़ा ८५ से ८६ तक के, जिस क़द्र बन सके, करे, और पाप-कर्म से, जहाँ तक बने, बचता रहे।

(१०) राधास्वामी दयाल की दया का, हर दम भरोसा मन में रख कर, अपना अभ्यास नेम से हर रोज़, दो बार या ज़्यादा, करता रहे, और पोथियों का भी थोड़ा पाठ किया करे कि उससे अभ्यास और मन और इन्द्रियों की दुरुस्ती में मदद मिलेगी।

(११) सतसंग में शामिल होने का हमेशा शौक़ रक्खे और जब मौज से मौक़ा मिले, तब चेत कर होशियारी से बचन सुने, और उनका मनन करके अपने लायक़ के बचन छाँट कर, उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई और बर्ताव शुरू करे।

(१२) अपने मन और इंद्रियों की चाल को निरखता चले, यानी मन की चौकीदारी करे कि नाक़िस और पाप कर्मों और ख़्यालों में न जावे, और जहाँ तक बने मन और माया के हाथ से धोखा न खावे।

(१३) सच्चे परमार्थी यानी प्रेमी जन से मोहब्बत करे, और जब वे मिल जावें, तो शौक़ के साथ उनका संग और ख़ातिरदारी, और जो मौक़ा होवे, तो मेहमानदारी करे।

(१४) अपने वक़्त का ख़्याल रक्खे कि जहाँ तक मुमकिन होवे, फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा कामों और बातों में मुफ़्त ख़र्च न होने पावे।

(१५) जब कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल को सर्व-समर्थ और सर्वज्ञ समझा तो जो कुछ कि स्वार्थ

और परमार्थ के मुआमले में पेश आवे, उसको उनकी मौज समझना चाहिये, और चाहे वह मन के मुवाफ़िक़ होवे या नहीं, उस मौज के साथ मुवाफ़िक़त करना चाहिये, यानी तकलीफ़ को धीरज के साथ बरदाश्त करना चाहिये, और तरक़्क़ी यानी सुख में परमार्थ से ग़ाफ़िल होना नहीं चाहिये।

ख़ुलासा कुल्ल बचन का

१३५—जो कि यह बचन बहुत तूल यानी लम्बा हो गया है, इस वास्ते मुनासिब है कि इसका ख़ुलासा थोड़ा दफ़ों में लिख दिया जावे, ताकि असली मतलब इस बचन का, पढ़ने वालों की समझ में, जल्द आजावे और थोड़ा-बहुत याद रहे :—

(१) राधास्वामी मत सन्त मत है।

(२) राधास्वामी नाम कुल्ल और सच्चे मालिक का नाम है।

(३) यह नाम किसी ने नहीं धरा। इसकी धुन आप हर एक स्थान पर हो रही है, यानी यह ध्वन्यात्मक नाम है, और इसको संत और साध जन और प्रेमी अभ्यासी सुनते हैं।

(४) "राधा" नाम आदि-धार का है, जो कुल्ल मालिक यानी स्वामी के चरन से निकली। और "स्वामी" नाम शब्द का है, जिसमें से धुन या धार निकली और वही

धुन या धार सुरत है। इस वास्ते "राधास्वामी" नाम के अर्थ सुरत-शब्द के समझने चाहिये।

(५) जब तक कोई इस नाम को, मय इस के भेद के, अपने हिरदे में नहीं बसावेगा, तब तक उसको अभ्यास में पूरे तौर से मदद नहीं मिलेगी, और न धुर मुक़ाम तक का रास्ता निर्विघ्न तै कर सकेगा।

(६ आदि-धार जो राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक के चरनों से निकली, वही नूर और जान और शब्द की धार है। और उसी ने जगह २ ठहर कर, और मंडल बाँध कर, सत्तलोक तक रचना करी, और फिर वहाँ से दो धारों ने, यानी निरंजन और जोत ने, उतर कर ब्रह्माण्ड की रचना, और सहसदल कँवल से तीनों धारों ने (जिनको सतोगुन, रजोगुन और तमोगुन कहते हैं) उतर कर, पिंड देश की रचना करी। खुलासा यह है कि कुल्ल रचना शब्द की धार ने करी है, और शब्द ही कुल्ल मालिक का प्रथम ज़हूरा यानी प्रकाश है, और सब जगह शब्द ही चैतन्य का निशान और ज़हूरा है।

(७) शब्द की धुन या धार का नाम सुरत है, और यह दोनों यानी सुरत और शब्द कुल्ल रचना और उसकी कार्रवाई कर रहे हैं।

(८) इस लोक में भी कुल्ल काम शब्द (यानी बोलने वाला) और सुरत (यानी सुनने वाला) कर रहे हैं।

(९) जब बच्चा पैदा होता है और उसने शब्द किया, यानी रोया, तो ज़िन्दा है, और जब तक आदमी बोलता है तो ज़िन्दा है, नहीं तो मुर्दा है।

(१०) सुरत की धार उतर कर, दोनों आँखों के मध्य में, अंदर की तरफ़, छठे चक्र के स्थान पर, इस जिस्म यानी देह में ठहरी है, और वहीं से दो धार होकर, दोनों आँखों में, जाग्रत के वक़्त, बैठ कर इस लोक में मन और इन्द्रियों के वसीले से कार्रवाई करती है।

(११) सुरत-चैतन्य सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की अंश है, और मन, निरंजन यानी कालपुरुष या ब्रह्म की अंश है, और इंद्रियाँ और देह, माया की अंश हैं, यानी उसके मसाले से बनी हुई हैं।

(१२) आँखों के स्थान से, सुरत की धार को, घर की तरफ़ यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में, विरह और प्रेम अंग लेकर उलटाना चाहिये, तब सच्चा और पूरा उद्धार होगा, और इसी कार्रवाई का नाम सच्चा परमार्थ है।

(१३) इसी उलटाने को सुरत-शब्द का अभ्यास कहते हैं, और असली मतलब राधास्वामी मत का यही है कि जीव यानी सुरत को जो सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों से जुगान-जुग से जुदा हो गई है, और यहाँ देह और मन और इन्द्रियों का संग करके दुख-सुख भोग रही

है, फिर उलटा कर उसके निज घर में, जो महा प्रेम और महा आनन्द का आदि, भंडार है, और जहाँ काल, कलेश और माया का बीज भी नहीं है, पहुँचाना, ताकि अमर, अजर और महा सुखी हो जावे और जनम-मरन और देहियों के दुख-सुख के कलेश से, उसका हमेशा को बचाव हो जावे।

(१४) कुल्ल रचना के तीन दरजे हैं। पहिला, निरमल-चैतन्य देश और इसी को संत देश और दयाल देश कहते हैं। यहाँ माया बिलकुल नहीं है। और इसी सबब से यह देश अमर और अजर है और महा सुख और परम आनन्द का भंडार है। दूसरा, निरमल-चैतन्य और शुद्ध-माया देश। इसी दरजे के शुरू में माया का ज़हूर हुआ, लेकिन इस दरजे में वह निहायत लतीफ़ है। इसको ब्रह्माण्ड कहते हैं। तीसरा, निरमल-चैतन्य और मलीन-माया देश। यहाँ, मलीनता ज़्यादा है और यहाँ की रचना भी इस वास्ते स्थूल है। इस दरजे को पिंड-देश कहते हैं।

(१५) जिस वक़्त पुतली आँखों की ज़रा चढ़ जाती है, आदमी फ़ौरन बे-होश हो जाता है, और जब ज़्यादा खिंच जाती है, तब मर जाता है। तो इससे ज़ाहिर है कि देही और मन और इन्द्रियों और संसार के बंधनों से छुटकारा, इसी रास्ते से, सुरत के उलटाने यानी चढ़ाने से

मुमकिन है, यानी सच्ची मुक्ति और उद्धार इसी जुगत की कमाई से मुमकिन है, और किसी तरह नहीं।

(१६) जिस क़दर बाहरमुख करनी परमार्थ के नाम से अन्य मतों में जारी है, वह असल में मुक्ति का साधन नहीं है, बल्कि सब भर्म है।

(१७) और जो कोई साधन प्राणों के साथ या किसी और धार के साथ चढ़ाई का है, पहिले तो वह ऐसा कठिन है कि किसी से बन नहीं सकता। और जो किसी बिरले जीव से बन भी गया, तो वह अभ्यासी माया के घेर से बाहर नहीं जावेगा। क्योंकि सिवाय शब्द की धार के और सब धारें जिस क़दर कि हैं, वे ब्रह्माण्ड से जारी हुई हैं, यानी जहाँ से कि माया का ज़हूर होकर माया और चैतन्य ने मिल कर रचना करी है। इस सबब से, जो कोई इन धारों पर सवार होकर चलेगा, वह माया के घेर में रहेगा, और देह के बंधनों और जनम-मरन से उसका छुटकारा नहीं होगा।

(१८) माया, सुरत-चैतन्य की धार का खोल और ग़िलाफ़ हो रही है, यानी जिस क़दर माया में सूक्ष्म और स्थूल वग़ैरा दरजे हैं, उसी क़दर ग़िलाफ़, सुरत पर, चढ़े हुए हैं, और यही ग़िलाफ़ या खोल देही कहलाते हैं, और इन्हीं ग़िलाफ़ों का, सुरत के वियोग यानी जुदाई से, बेकार हो जाने का नाम मौत है। इस वास्ते, जब तक सुरत,

माया के देश में रहेगी, तब तक ग़िलाफ़ में रहेगी, और इस सबब से जनम-मरन उसका चाहे जल्दी होवे या देर से, जारी रहेगा। इस वास्ते, संत फ़रमाते हैं कि जब तक सुरत, संत देश अथवा दयाल देश यानी निर्मल-चैतन्य देश में जहाँ माया बिल्कुल नहीं है, न पहुँचेगी, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार न होगा।

(१९) यह उद्धार, सिर्फ़ सतगुरु और शब्द भक्ति से हो सकता है। और किसी की भक्ति या दूसरे क़िस्म के अभ्यास से हासिल नहीं हो सकता है। और संत मत के अभ्यासी को प्रेम और शौक़ के साथ करनी शुरू करना मुनासिब है, क्योंकि बग़ैर प्रेम और शौक़ के, अभ्यास में आसानी नहीं होवेगी, और जैसा चाहिये रस भी नहीं आवेगा।

(२०) हर एक आदमी को, चाहे औरत होवे या मर्द, वास्ते अपने सच्चे और पूरे उद्धार के, सुरत-शब्द का अभ्यास करना ज़रूर और मुनासिब है, और इसी को सच्चा परमार्थ कहते हैं। बाक़ी जिस क़दर बाहमुख पूजा और अभ्यास है, जिसका अंतर से सिलसिला नहीं लगा हुआ है, वह भर्म है। उस से जीव का सच्चा और पूरा कल्यान नहीं होगा। अल्बत्ता शुभ कर्म का फल मिलेगा, यानी थोड़े अरसे के वास्ते सुख-स्थान मिल जावेगा, और जो अशुभ कर्म बनेगा, उसके एवज़ में दुख भोगना पड़ेगा।

(२१) कर्म का स्थान आँखों का मुक़ाम है। यानी जब सुरत, जाग्रत अवस्था में आंखों के स्थान पर बैठती है, तब मन और इन्द्रियों से बाहरमुखी करतूत बनती है। और संत फ़रमाते हैं कि जैसे बने, जीव को चाहिये कि भक्ति और अभ्यास करके, आँखों के स्थान से, आहिस्ता २ सरकता जावे, यानी ऊपर और अंदर की तरफ़ चलना शुरू, करे तो जिस क़दर चाल चलेगी, उसी क़दर, कर्म थकता और घटता जावेगा, और रफ़्ता २ एक दिन यह जीव निःकर्म हो जावेगा।

(२२) संतों ने कर्म की दो क़िस्म करी हैं। एक, जो इस जीव की ज़ात यानी आपे से ताल्लुक़ रखता है और दूसरा, जिसका ताल्लुक़ औरों के साथ व्यवहार में है। पहिली क़िस्म यह है कि जो करतूत करके यह जीव अपने मालिक के नज़दीक पहुंचता जावे, वह असली यानी परमार्थी शुभ कर्म है, और जो करतूत कि इसको अपने मालिक के चरनों से दूर डाले, वही असली यानी परमार्थी अशुभ कर्म है। दूसरी क़िस्म यह है कि औरों के साथ मन, बचन और कर्म करके इस तरह बर्ताव करे कि जैसे यह जीव चाहता है कि और लोग, इसके साथ, बर्ताव करें। यह व्यवहारी शुभ कर्म है, और इसके ख़िलाफ़ बर्ताव करना, व्यवहारी अशुभ कर्म है। परमार्थी जीवों को मुनासिब है कि ऊपर के क़ायदे के

मुवाफ़िक़ अपने ज़ाती और व्यवहारी कर्म को दुरुस्ती से बर्ताव करें।

(२३) और मतों में बाहरमुखी कर्म का बहुत विस्तार किया है। सबब इसका यह है कि सच्चे और कुल्ल मालिक की भक्ति की रीत और महिमा उन को मालूम नहीं हुई, और न सुरत-शब्द अभ्यास की ख़बर हुई, कि जिससे जीव-बहुत जल्द कर्म के घेर से निकल कर, अपने निज घर की तरफ़ जा सकता है। और जो कर्मों के बखेड़े में पड़ा रहा तो चाहे उस से व्यवहारी शुभ कर्म बने या अशुभ, उसका हिसाब काल और माया के संग कभी बेबाक़ नहीं हो सकता है, और इस वास्ते जनम-मरन और दुख-सुख के फंदे से रिहाई मुमकिन नहीं है।

(२४) जिन मतों में कि सिर्फ़ बाहरमुखी पूजा या पोथियों का पढ़ना और पढ़ाना जारी है, और घट के भेद से बे-ख़बरी है, उनकी कुल्ल कार्रवाई व्यवहारी शुभ या अशुभ कर्म में दाख़िल है। उससे मुक्ति हासिल नहीं हो सकती।

(२५) और जिन मतों में थोड़ा अंतर अभ्यास जारी है, और वह वर्णात्मक नाम का सुमिरन या ध्यान किसी देवता या औतार या परमेश्वर का, या मुद्रा का साधन है, और स्थान उस अभ्यास का छः चक्र के अंदर है, और संतों के धाम का भेद मालूम नहीं है, तो भी वह

सच्ची मुक्ति का साधन नहीं है। अलबत्ता सुख-स्थान कुछ काल के वास्ते मिलेगा और फिर जनम-मरन के चक्कर में आना पड़ेगा।

(२६) जो लोग कि ज्ञानी या वेदान्ती या सूफ़ी कहलाते हैं, और अपने को ब्रह्म मानते हैं, पर कोई अभ्यास ब्रह्म-पद में पहुँचने का नहीं करते, और न ब्रह्म-पद और उसके रास्ते के भेद से वाक़िफ़ हैं, वे भी जनम-मरन के चक्कर से नहीं बच सकते। ऐसा ज्ञान, वाचक कहलाता है। बग़ैर संतों के अभ्यास के मुवाफ़िक़ मन और सुरत की चढ़ाई के, हालत नहीं बदल सकती, और न ब्रह्म-पद की प्राप्ति हो सकती है, क्योंकि प्राणायाम का अभ्यास ब-सबब उसकी कठिनता के ख़ारिज है, और कोई दूसरे अभ्यास से यह मतलब हासिल नहीं हो सकता। और यह वाचक ज्ञानी और सूफ़ी, अपनी विद्या और बुद्धि के अहंकार में, संतों का बचन नहीं मानते, इस सबब से ख़ाली रह गये।

(२७) नास्तिक और और मत जो विद्यावानों ने जारी किये हैं, इन में तो कोई परमार्थी बात नहीं है। सिर्फ़ पर-उपकार का उपदेश है और कुल्ल मालिक की मौजूदगी से इनकार है। फिर यह लोग क्या भक्ति और अभ्यास कर सकते हैं ? इस वास्ते इनका उद्धार किसी तरह मुमकिन नहीं है।

(२८) रचना का हाल ग़ौर से नज़र करने से साफ़ ज़ाहिर होता है कि कोई कुल्ल और सच्चा मालिक ज़रूर

है, क्योंकि हर एक चीज़ से कारीगरी और मतलब और इरादा, समर्थ बनाने वाले का, ज़ाहिर है, और यह जीव उसी कुल्ल मालिक समर्थ दयाल की अंस है, यानी उसका, और जीव का जौहर एक ही है। फिर जो लोग कि इस बात को नहीं मानते हैं, वे अपना भारी नुक़सान करते हैं और अंत को बहुत पछतावेंगे।

(२९) जो लोग कि तीर्थ-व्रत और मूर्ति-मंदर और औतारों और देवताओं की पूजा में अटक रहे हैं, और घट के भेद और संत मत की ज़ुक्ति से बे-ख़बर हैं, और न उस की तलाश और खोज करते हैं, उनका भी सच्चा उद्धार नहीं हो सकता। वे, कर्म का फल अलबत्ता पावेंगे, पर सच्चे मालिक के दरबार में नहीं पहुँच सकते, बल्कि उस औतार और देवता के असल रूप का भी, जैसा कि उसके लोक में है, दर्शन नहीं मिलेगा, क्योंकि अपनी जिंदगी में असल का खोज नहीं किया। फिर मरने के बाद भी नक़ल का ही दर्शन पावेंगे, बशर्ते कि सच्ची लगन और किसी क़दर प्रतीत के साथ मूर्ति की पूजा करी होगी। और जो रस्मी परमार्थ के तौर पर कार्रवाई की है, तो नक़्ली रूप की भी प्राप्ति नहीं होगी।

(३०) सच्चे परमार्थी को चाहिये कि भेदी और अभ्यासी गुरु खोज कर, और उनकी थोड़ी पहिचान करके, सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास में लग जावे, और जो संजम

कि बताये गये हैं, उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई अपनी दुरुस्त करता जावे। तब जो कुछ कि बचन संतों ने कहे हैं, उनकी तसदीक़ अंतर में वह आप करता जावेगा और कुल्ल मालिक की दया भी अपने अंतर में परखता जावेगा। इस तरह उसकी प्रीत और प्रतीत, चरनों में, दिन २ बढ़ती जावेगी, और एक दिन अपने मालिक के चरनों में पहुँच जावेगा।

बचन १६

राधास्वामी दयाल के चरनों में जैसी-तैसी प्रति करना चाहिये, तब सहज २ सच्चा उद्धार होता जावेगा, और एक दिन काम पूरा बन जावेगा

१-इस दुनिया में जितने कारोबार हैं और जहाँ-तहाँ जिस का मेल और मुवाफ़िक़त है, वह शौक़ और प्रतीत के सबब से जारी हैं। यानी जहाँ जिसकी प्रीत है और जिस काम में जिसका शौक़ है, वहाँ कार्रवाई आसानी और दुरुस्ती के साथ जारी है, और जिस जगह या जिस काम में किसी को ना-मुवाफ़िक़त या नफ़रत है, वहाँ कुछ कार्रवाई नहीं हो सकती है! और जो ज़बरदस्ती से कोई ऐसी जगह या ऐसे काम में कुछ कार्रवाई करावे, तो वह

दुरुस्ती से और आराम और आसानी के साथ न होगी, बल्कि उसमें हुज्जत और तकरार होने का ख़ौफ़ रहेगा।

२–जहाँ जिसकी सच्ची प्रीत या शौक़ है, वहाँ वह तन, मन और धन से कार्रवाई करने को बहुत ख़ुशी के साथ तैयार होता है, और इन तीनों को ख़र्च करके, यानी काम में लाकर, बहुत मगन होता है। और जिसके वास्ते ऐसी कार्रवाई करता है, वह भी अपने प्यार वाले की यह कार्रवाई देख कर बहुत ख़ुश होता है, और उलट कर उसकी भी इसी तरह ख़िद्मत और सेवा करने को, उमंग के साथ, तैयार होता है, और आपस में मोहब्बत दिन २ बढ़ती जाती है।

३–जिस वक़्त जिस किसी का कोई प्यारा दूर से आने को होता है, तो चाहे जैसा बे-वक़्त होवे, और चाहे उस वक़्त शिद्दत से सरदी या गरमी या बारिश होती होवे, पर वह शख़्स बग़ैर किसी ख़्याल और सोच के, उसी वक़्त घर से चल कर रेल के स्टेशन पर, या थोड़े फ़ासले पर, पहले से पहले, अपने दोस्त या प्यारे से मिलने को जाता है, और उस वक़्त उसकी सुरत और मन बहुत ताक़त के साथ तन को वहाँ पहुँचाते हैं कि जिस से, जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, अपने प्यारे का दीदार करे, और उस से मिल कर आनन्द पावे। और जब दोनों

आपस में मिलते हैं, तब दोनों बहुत ख़ुश होते हैं और उस ख़ुशी में सब तकलीफ़ या थकावट, जो जागने या बारिश या गरमी और सरदी वग़ैरा के सबब से आयद हुई होवे, एक छिन में दूर हो जाती है।

४–इससे ज़ाहिर है कि सुरत और मन और इन्द्रिय सब मोहब्बत यानी प्रीत के बस हैं। जहाँ और जिस में प्रीत आ जाती है, वहाँ यह उमंग के साथ कार्रवाई करते हैं और उस में किसी तरह का थकाव या तकलीफ़ नहीं होती।

५–इसी तरह, जहाँ असली प्रीत नहीं है, पर धन या और किसी चीज़ या काम के लालच से शौक़ पैदा हुआ है, तो वहाँ भी, मन और इन्द्रिय और तन, बहुत तवज्जह और मेहनत के साथ कार्रवाई करके, उस शख़्स को, जिससे वह लालच का काम पूरा होने वाला है, राज़ी और ख़ुश करके अपना मतलब निकालते हैं।

६–ख़ुलासा यह है कि सुरत, मन और इंद्रिय और तन, प्रीत या कोई मतलब या किसी किस्म के मतलब की आसा के आधीन है। जहाँ इन में से कोई बात होगी, वहीं वे शौक़ और उमंग के साथ कार्रवाई करने को तैयार होवेंगे।

७–और जहाँ कि प्रीत या कोई मतलब या उसके थोड़ी देर बाद पूरे होने की आस नहीं है, लेकिन ख़ौफ़

किसी क़िस्म के नुक़सान या तकलीफ़ का है या दबाव है, तो वहाँ भी, हुक्म के मुवाफ़िक़, मन, तन और इन्द्रियाँ दुरुस्ती के साथ काम करते हैं। पर ऐसी कार्रवाई में वह ख़ुशी और उमंग कि जो प्रीत और मतलब की जगह होती है, नहीं होती है, और न वैसा आराम और आसानी उस काम के करने में मालूम होती है।

८—लेकिन जिस जगह कि ख़ौफ़ अपने प्यारे की नाराज़गी या तकलीफ़ का है, या अपने आराम और आनन्द में ख़लल और विघ्न पड़ने का है, तो ऐसी जगह मन और इन्द्रियाँ और तन, वैसे ही उमंग और शौक़ के साथ काम देते हैं जैसे कि ख़ास प्रीत की जगह, और उस कार्रवाई में किसी तरह की तकलीफ़ नहीं मालूम होती है।

९—अब समझना चाहिये कि संत अथवा राधास्वामी मत में, सिर्फ़ प्रेम के ऊपर ज़ोर दिया है कि जितनी और जिस क़दर हो सके, सच्चे मालिक और सच्चे गुरु के चरनों में प्रतीत के साथ प्रीत करना चाहिये। जो थोड़ी-बहुत भी प्रीत होवेगी, तो वक़्त सतसंग बाहर के, मन और चित्त तवज्जह के साथ परमार्थी बचन सुनेंगे और गुरु स्वरूप का मोहब्बत के साथ दर्शन करेंगे, और अंतर में अभ्यास के वक़्त, मन और सुरत और इन्द्रियाँ, शब्द और स्वरूप में, थोड़े बहुत, उमंग के साथ लगेंगे, और इस तरह जब

जो जीव हुक्म के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं करेगा तो सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल उससे राज़ी नहीं होवेंगे, और उनकी अप्रसन्नता यानी नाराज़गी में जीव का निहायत दरजे का नुक़सान है, कि उसका रास्ता अंतर में अपने निज घर की तरफ़ चलने का बन्द हो जावेगा, और फिर काल और कर्म और माया उस जीव को अपने घेर में रख कर, दुख-सुख देते रहेंगे, और उसका सच्चा और पूरा उद्धार न होने देवेंगे।

१२—जब इस तरह से थोड़ी-बहुत प्रीत और प्रतीत जीव को, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और उन के सतसंग और गुरु में आई, और दोनों या एक क़िस्म का ख़ौफ़ भी उसके दिल में सच्चा पैदा हुआ, तब उसका रास्ता आसानी से अंतर में तै होता जावेगा। यानी मन और सुरत, अपने प्यारे गुरू और सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँचने और दर्शन का बिलास और आनन्द हासिल करने के वास्ते, सहज में, पहिले पिंड में सिमट कर, फिर ऊँचे देश यानी ब्रह्माण्ड और उसके पार संत देश की तरफ़ शब्द की डोरी पकड़ के, और स्वरूप के ध्यान का आसरा लेकर, चढ़ना शुरू करेंगे, और प्रीत-भाव और ख़ौफ़ के सबब से, उनको ज़रा भी इस काम के करने में सुस्ती या आलस या तकलीफ़ नहीं सतावेगी, बल्कि अंतर में शब्द और स्वरूप का थोड़ा-बहुत रस और

आनन्द लेते हुए उमंग और शौक़ के साथ ऊपर की तरफ़ क़दम बढ़ावेंगे, और सतगुरु की मदद और राधास्वामी दयाल की मेहर से एक दिन धुर घर में जो कि अपने प्रीतम कुल्ल मालिक का महल है, पहुँच कर, परम आनन्द को प्राप्त होवेंगे ।

१३–सब जीव निहायत दरजे के कमज़ोर हैं, और जिस जगह, पिण्ड में, सुरत बैठ कर कार्रवाई देह और दुनिया की कर रही है, उस जगह, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार और मन और दसों इन्द्रियों का बहुत भारी ज़ोर है । किसी की ताक़त नहीं है कि इनसे बच कर निज घर की तरफ़ को, अपने बल से चल कर रास्ता तै करे । लेकिन राधास्वामी दयाल की मेहर और सतगुरु अथवा साध के संग से आहिस्ता २ जीव के अधिकार यानी शौक़ के मुवाफ़िक़ काम बन सकता है । और जो शौक़ कम भी है, तो सतगुरु अपनी दया और मदद से उसको बढ़ा सकते हैं । और अभ्यासी के दिल में थोड़ा-बहुत ख़ौफ़ भी पैदा कर सकते हैं कि जिससे उसका शौक़ बढ़ता रहे और ढीला और सुस्त न होवे ।

१४–सब जीव अजान हैं यानी अपने निज घर और अपने सच्चे माता और पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के भेद से ना-वाक़िफ़ हैं और न जुगत चलने की जानते हैं । सब कर्म और भर्म में अटके हुए हैं । और

बाहरमुख पूजाओं में अपना वक़्त और तन, मन, धन मुफ़्त ज़ाया कर रहे हैं, या विद्या पढ़ कर, और बुद्धि और चतुराई बढ़ाकर, अपने आपको ब्रह्म मान कर निश्चिंत हो जाते हैं, या कुल्ल मालिक की मौजूदगी और सुरत के चैतन्य और अमर होने से इनकार करके नास्तिक बन जाते हैं। इनको जब तक सतगुरु का संग न होगा, और यह उनका बचन प्रीत-भाव से सुन कर, असल हाल रचना और अपनी मौजूदा हालत से वाक़िफ़ न होंगे, और वास्ते बचाव दुख-सुख और जनम मरन के, संतों की जुगत चलने का, सुरत-शब्द मार्ग के मुवाफ़िक़, दरयाफ़्त करके अपने अन्तर में सतगुरु का बल और दया लेकर थोड़ा-बहुत रास्ता काटना शुरू न करेंगे, तब तक इनको सच्चे मालिक की प्रतीत और प्रीत नहीं आवेगी और न अन्तर में कुछ रस और आनन्द प्राप्त होगा।

१५–इस वास्ते ज़रूर है कि पहिले भेदी और अभ्यासी गुरू की तलाश करे, और जब वे मिल जावें, तो उनसे भेद रास्ते का लेकर अभ्यास शुरू करे, और उनका और उनकी बानी का संग करके अपनी समझ-बूझ बढ़ावे, और संसारी मत और समझ और बर्ताव को बदलता जावे, और उनके चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत जिस क़दर हो सके, करे। तब उनकी दया और मदद से इसका रास्ता तै होवेगा, और एक दिन अपने निज घर में पहुँच कर, जनम-मरन से रहित हो जावेगा, और नहीं तो

बारम्बार संसार में ऊँचे-नीचे देश और ऊँची-नीची जोनों में जनम लेकर, माया के भोगों में भरमता रहेगा, और अनेक तरह के कष्ट और क्लेश देह के संग भोगता रहेगा, और कभी इसका छुटकारा इस चक्कर से न होवेगा।

१६–जो प्रीत कि सिवाय सच्चे मालिक के दर्शनों की प्राप्ति के, और किसी मतलब या चाह लेकर, लगाई जावेगी, वह परमार्थी हिसाब में स्वार्थ यानी कपट की भक्ति कहलाती है। ऐसी प्रीत से जीव का कारज किसी तरह से नहीं बन सकता है। चाहे दुनिया का मतलब शायद किसी क़दर पूरा हो जावे, पर गुरू और राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्चा प्रेम, जो सफ़ाई करके, सुरत और मन को, उनके निज घर में पहुँचावे, कभी हासिल नहीं होगा।

१६–इस वास्ते मुनासिब है कि चाहे थोड़ी प्रीत होवे, पर सच्ची प्रीत, वास्ते प्राप्ति दर्शन मालिक के, अपने हिरदे में धारन करे, और सतगुरु और सतसंग और अन्तर अभ्यास की मदद से उसको आहिस्ता २ बढ़ाता जावे, तो एक दिन निज घर में पहुँच कर बासा पावेगा, यानी राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

१८–इसी प्रीत के आसरे मन और सुरत घर की तरफ़ आहिस्ता २ चलना शुरू करेंगे, और जिस क़दर रस

मिलता जावेगा, उसी क़द्र चाल उनकी बढ़ती जावेगी। इस वास्ते हर एक मर्द और औरत को मुनासिब और लाज़िम है कि जैसे बने, वैसे थोड़ी या बहुत प्रीत राधास्वामी दयाल और गुरू के चरनों में पैदा करके, परमार्थ की कार्रवाई जारी कर दें, और जनम-मरन और देह धर के दुख-सुख भोगने का ख़ौफ़ दिल में लाकर, इस काम में सुस्ती और ग़फ़लत न करें। नहीं तो अन्त को बहुत पछताना पड़ेगा और फिर वह अफ़सोस कुछ फ़ायदा नहीं देगा, और अमोल नर देह, जो बड़ी मुश्किल यानी चौरासी का चक्कर खाकर हाथ आई है, पशुओं के मुवाफ़िक़ खान-पान यानी इन्द्रियों के भोग-बिलास और उनके हासिल करने की मेहनत और मशक़्क़त में मुफ़्त बरबाद जावेगी।

बचन १७

हर शख़्स को अपने जीव-चैतन्य के भंडार का खोज और पता लगा कर, वहाँ पहुँचने का जतन करना चाहिये कि जिससे परम आनन्द को प्राप्त होवे, और जनम-मरन और देह के दुख-सुख से बचाव हो जावे

१—इस रचना में दो पदार्थ हैं—एक चैतन्य और दूसरा जड़। चैतन्य वह है जो चेष्टा करता है और जिस

देह में वह विराजमान होता है, उस देह की सम्हाल और उसके औज़ारों (यानी इन्द्रिय वग़ैरा) के वसीले से इस लोक में कार्रवाई करता है, बल्कि और देहियों की भी सम्हाल करता है।

२–और जड़ पदार्थ वह है जो अपने आपसे किसी क़िस्म की चेष्टा और हरकत नहीं कर सकता है, और बिना मदद् और सहारे चैतन्य के, उससे कोई कार्रवाई नहीं हो सकती है।

३–अब इस चैतन्य की कैफ़ियत और ताक़त समझना चाहिए कि जिस जगह या जिस वीर्य्य से कि इसकी प्रथम धार प्रकट होती है, वही धार उस वीर्य्य के स्वरूप और कुल्ल देह की करता है। और जब से कि वह धार प्रकट हुई, उसी वक़्त से जिस क़द्र शक्तियाँ यानी क़ुव्वतें और तत्त्व और गुन इस रचना में कार्रवाई कर रहे हैं, वे सब इस धार के बढ़ाव और देह के बनाव में (आपस में रल-मिल कर) कार्रवाई जारी करती हैं। और वे शक्तियाँ और तत्व वग़ैरा यह है–(१) खैंच शक्ति, (२) हटाव शक्ति, (३) बनाव शक्ति, (४) मिलाव शक्ति, (५) मिक़नातीसी यानी चुम्बक शक्ति, (६) संहार शक्ति, (७) बिजली की शक्ति, (८) रोशनी की शक्ति, और तीन गुण, सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण और पाँच तत्व-आकाश, पवन, अग्नि, जल, और पृथ्वी।

४—देह जड़ है, और पाँच तत्व और तीन गुन की

मिलौनी से बनी है, और सुरत-चैतन्य की शक्ति से चैतन्य और कार्रवाई करती नज़र आती है।

५—सुरत-चैतन्य की ताक़त किस क़दर भारी है कि जब और जहाँ वह ज़हूर करे, वहीं सब शक्तियाँ और तत्व और गुन वग़ैरा हाज़िर होकर (बा-वजूद मुख़ालफ़त के) आपस में रल-मिल कर कार्रवाई करती हैं, और जब सुरत किसी देह को छोड़ती है, उसी वक़्त से, रूप और रंग और ताक़त उस देह की जाती रहती है, और निहायत भयानक यानी ख़ौफ़नाक और डरावना रूप उस देह का हो जाता है, और कुल कार्रवाई उस देह और उसके औज़ारों की, बंद होकर वह देह जल्द गल कर मिट्टी के मुवाफ़िक़ हो जाती है।

६—सब जगह (मैदान यानी आकाश में और लोकों में) तमाम रचना, सुरत के बल से हुई है, और क़ायम है, और आइन्दा को जारी रहेगी यानी एक-एक सुरत, जो महा चैतन्य की अंस है, हर एक जिस्म यानी लोक (सूरज, चाँद, तारागन) में बैठ कर, उस देह का बनाव और सम्हाल कर रही है। और जब वह सुरत उस देह को छोड़ती है, तब उसकी फ़ौरन प्रलय हो जाती है, यानी उसका अभाव हो जाता है।

७—जिस क़दर सूरज और चाँद और तारागन नज़र आते हैं, यह सब एक-एक देह हैं, और सुरत अंस इन में

बैठ कर उनकी रचना की सम्हाल और कार्रवाई करती रहती है, और जो २ तारे हर एक सूरज और चांद के मुताल्लिक़ हैं, उनकी रचना की भी सम्हाल वही सूरज और चाँद करते हैं।

८—इससे साबित हुआ कि जिस क़दर रचना हुई है, सब सुरत की धार से प्रकट हुई है, और सुरत-चैतन्य ही के आसरे क़ायम है, और उसी की ताक़त से सब काम दुनिया के जारी हैं।

९—जब इस सुरत की, जो एक किरन के मुवाफ़िक़ है, इस क़द्र ताक़त और कार्रवाई है, फिर उस भंडार या कुल्ल सूरज की, जहाँ से यह किरन आई है, ताक़त और समर्थता का क्या अंदाज़ हो सकता है ? वह भंडार कुल्ल रचना का कर्त्ता और कुल्ल का पालन-कर्त्ता और कुल्ल की सम्हाल करने वाला और महा ताक़त वाला यानी सर्व-समर्थ है। वहीं से आदि-धार या किरन प्रकट हुई और नीचे उतर कर, और मंडल बाँध कर, रचना करती चली आई, और पिंड में आँखों के मुक़ाम पर बैठ कर, देह और दुनिया की कार्रवाई कर रही है और दुख-सुख और चिंता और ख़ौफ़ वग़ैरा इसी जगह जाग्रत अवस्था में व्यापते हैं।

१०—जब आँखें मिच जाती हैं, या पुतली ज़रा खिंच जाती है, तब आदमी बेहोश, और देह उसकी बेकार हो

जाती है और जब ज़्यादा खिंचाव हो जाता है, तब सुरत देह को छोड़ जाती है ।

११–यह देश सुरत का नहीं है । यह सुरत, अंस या किरन या धार उस सर्व-समर्थ भंडार की है, जिसको संतों ने कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल कहा है । और जब तक यह उलट कर उसी धार को पकड़ के, जिसके वसीले उतरी है, अपने भंडार में न जावेगी, पूर्ण सुख और आनन्द इसको नहीं मिलेगा और न जनम-मरन से छुटकारा होगा, क्योंकि जनम-मरन देह यानी ख़ोल का होता है, और ख़ोल माया के मसाले यानी तत्वों और गुनों वग़ैरा का बना है । और जब तक सुरत माया के घेर में रहेगी, ज़रूर उस पर ख़ोल चढ़े रहेंगे । और जिस मंडल में सुरत प्रकट होगी, उसी मंडल के मसाले के बने हुए ख़ोल में उसका बर्ताव होगा, और जैसी वहाँ की रचना है, उसके मुवाफ़िक़ दुख-सुख भोगना पड़ेगा । और माया, सत्तलोक यानी दयाल देश के नीचे से प्रकट हुई है, और उसमें ब-हिसाब शुद्धता और मलीनता के बहुत से दरजे हैं । सो जब तक कि इन सब दरजों को तै करके, माया के घेर के बाहर, दयाल देश यानी अपने निज भंडार में सुरत न जावेगी, तब तक निर्मल और सुखी न होवेगी ।

१२–इस वास्ते हर एक जीव को चाहे मर्द होवे या औरत, लाज़िम और मुनासिब है कि जैसे बने तैसे संतों

की जुगत के मुवाफ़िक़, रास्ता घर जाने का तै करना शुरू करे, तब देह के बंधन और कष्ट और क्लेश से सच्चा छुटकारा होगा। और इसी को सच्ची मुक्ति और पूरा उद्धार कहते हैं।

१३–और जो सुरतें यानी जीव मन और इंद्रियों के भोग-बिलास की चाह उठा कर, उन्हीं के हासिल करने के जतन में उमर भर लगे रहेंगे, तो उनकी चाल दिन २ माया के मंडल में नीचे की तरफ़ जारी रहेगी। और इस सबब से जल्दी २ जनम-मरन और ज़्यादा से ज़्यादा तकलीफ़ उनको भोगनी पड़ेगी, और जड़ पदार्थों के साथ (क्योंकि सब भोग दुनिया के जड़ हैं) दिन-दिन उन सुरतों का मेल बढ़ता जावेगा, और अपने निज भंडार से दूरी होती जावेगी।

१४–इस दुनिया में सब जीव मन और इन्द्रियों के भोग से सुख हासिल करने की चाह में फँसे हुए हैं, और रात-दिन इसी चाह को पूरा करने के लिये मेहनत कर रहे हैं। और हाल यह है कि यह सुख तुच्छ और नाशमान हैं, और बारम्बार उनकी प्राप्ति के लिये मेहनत करनी पड़ती है, और फिर एक बार देह छोड़ने के वक़्त इन सब को छोड़ना पड़ेगा।

१५–जब ऐसे ओछे और नाशमान सुखों के वास्ते जीव उम्र भर पचते हैं, तो परम आनन्द और अमरसुख के

हासिल करने के लिये उनको किस क़द्र तवज्जह और मेहनत करना मुनासिब और लाज़िम है, ख़ास कर जब कि इस काम के बनाने के वास्ते सिर्फ़ एक बार किसी क़द्र मेहनत, बहुत आराम और ख़ुशी के साथ, करनी पड़ेगी और फिर वह सुख और आनंद हमेशा क़ायम रहेगा ?

१६–अब ग़ौर करना चाहिये कि जब इस दुनिया में दो बड़े पदार्थ, एक चैतन्य और दूसरा जड़ यानी माया हैं और ऊँचे से ऊँचे देश में चैतन्य का भंडार है, और नीचे के देश में जड़ यानी माया का भंडार है, तो चैतन्य को, जो जीव का निज आपा है, उसके भंडार में पहुंचाना, वास्ते प्राप्ति परम आनंद के, निहायत ज़रूर मालूम होता है, और जड़-पदार्थ यानी माया की तरफ़ से, जिस क़द्र जल्दी मुमकिन होवे, हटना, वास्ते बचने के दुक्खों से, उसी क़द्र ज़रूर और मुनासिब है ।

१७–इस वास्ते, हर एक आदमी पर यह काम करना, अपने आपे को सुख देने के निमित्त, फ़र्ज़ है, यानी चैतन्य या सुरत की धार को पकड़ कर, एक सामान्य चैतन्य से विशेष, और फिर उससे ज़्यादा विशेष, और इसी तरह से दरजे-बदरजे चढ़ कर, महा विशेष चैतन्य, यानी निज भंडार में कि जिसके ऊपर और विशेष नहीं है, और जो आप, अपार और अनंत है, पहुँचना चाहिये ।

१८—कुल रचना में, ब-सबब मिलौनी माया के, चैतन्य के दरजे हैं यानी जहाँ माया ज़्यादा है, वहाँ का चैतन्य किसी क़दर उसके ग़िलाफ़ से ढका हुआ है, यानी उसकी ताक़त और प्रकाश वहाँ कम है, और जिस दरजे में माया कम यानी सूक्ष्म है, वहाँ चैतन्य का प्रकाश और ताक़त का ज़हूर ज़्यादा है। जैसे इस लोक का चैतन्य, सूरज चैतन्य की धारों का आधीन है यानी जब तक कि सूरज की रोशनी और गरमी इस लोक में न आवे, तब तक यहाँ कुछ रचना नहीं हो सकती, और न ठहर सकती है, इसी तरह यह सूरज मय अपने तारागन के अपने से बड़े सूरज का आधीन है, और उसके ऊपर इसी तरह कई सूरज मंडल हैं। आख़िरी महा सूरज या महा मंडल और कुल्ल का भंडार और कर्त्ता और रक्षक, सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल हैं। और जो कि सुरत उसी महा सूरज की अंश है, इस वास्ते उसको अपने कुल्ल माता-पिता-निज सूरज या भंडार में पहुँचना चाहिये, नहीं तो माया के घेर में रहेगी।

१९—जो धार कि निज सूरज से निकल कर नीचे के देश में उतर कर ठहरी है, वही सुरत और चैतन्य और जान और रूह और नूर और शब्द की धार है, और जिस जगह पिंड में उतर कर ठहरी है, वहाँ उसका नाम सुरत है।

२०—इस सुरत को शब्द की धार के वसीले से चढ़ा कर, उसके निज घर में पहुँचाने को, सुरत-शब्द योग कहते हैं। और वही भंडार यानी आदि-शब्द कुल्ल का मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल है—ऐसी समझ धारन करके अभ्यास करना राधास्वामी मत का उपदेश है। और यही रचना भर में सच्चा और क़ुदरती मत और सहज अभ्यास है। और बाक़ी जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, और जिन में यह भेद और यह अभ्यास नहीं है, वे मन और बुद्धि के रचे हुए हैं, चाहे वे मन और बुद्धि ब्रह्मांडी हैं या पिंडी यानी जिस्मानी। और उनसे जीवों का कारज दुरुस्त होना, जैसा कि चाहिये, मुमकिन नहीं है, और न उन में पूरी शान्ति हासिल हो सकती है।

२१—जिन्होंने कि प्राणों के रोकने और चढ़ाने का अभ्यास पिछले वक़्त में जारी किया, वह इस कदर कठिन है और उसके संजम ऐसे मुश्किल हैं कि उसका किसी से दुरुस्ती से साथ बनना, ख़ास कर इस जमाने में, ना-मुमकिन मालूम होता है। इस वास्ते वह अभ्यास ख़ारिज समझना चाहिये। और मुद्रा वग़ैरा के अभ्यास से भी माया के पार जाना मुमकिन नहीं है। इस वास्ते सुरत-शब्द का अभ्यास, जो कि संतों ने दया करके इस ज़माने में जारी फ़रमाया है, कुल्ल जीवों के वास्ते, चाहे गृहस्थ होवें या विरक्त, और पुरुष होवें या स्त्री, सब के वास्ते मुफ़ीद है।

और इसी के वसीले से सुरत, धुर पद में, माया के पार पहुँच सकती है। और मुद्रा और प्राणायाम का अभ्यास सिर्फ़ विरक्तों ही के वास्ते था, और अब उन से भी नहीं बन सकता। और वह अभ्यास माया के घेर के अंदर ख़तम हो जाता है, इस सबब से उसमें जीव का पूरा उद्धार भी मुमकिन नहीं है।

अर्थ शब्द नम्बर २
पोथी सार बचन, छन्द बन्द, बचन ४१

सुन्नी सुरत शब्द बिन भटकी, अटकी मन सँग दुख पाई ॥ १ ॥

अर्थ

जो सुरत कि सुन्न यानी चैतन्य मंडल की बासी थी, शब्द की धार को छोड़ कर इस संसार में भटक गई और मन का संग करके दुख पाती है।

भरमत फिरे चक्र की नाईं, उलट गई तन में छाई ॥ २ ॥

और चक्र यानी चकई के मुवाफ़िक़, चंचल हो कर, भरम रही है और उल्टी हो कर देह में फैल गई।

विष खावत जग में झख मारत, समझ सोच धुर नहिं लाई ॥ ३ ॥

अर्थ

और भोगों में, जो ज़हर से भरे हुए हैं, बर्त कर, जगत में टक्करें खाती है, और अपने धुर मुक़ाम की समझ नहीं लाती है।

सोवत रही मोह अँधियारी, जागन चौंप नहीं पाई ॥ ४ ॥

अर्थ

और मोह के अंधकार यानी रात में बेहोश सो रही है और जागने का इरादा नहीं करती।

इन्द्री के बस पड़ी बिकल होय, काल कला घट में छाई ॥ ५ ॥

अर्थ

और इन्द्रियों के बस होकर, हर वक़्त, चंचल और बेकल हो रही है, और इस सबब से काल की कला यानी ज़ोर घट में व्याप रहा है।

भोगन में अति कर लिपटानी, रोग सोग दिन दिन खाई ॥ ६ ॥

अर्थ

और भोगों में लिपट कर दिन-दिन रोग और सोग सहती है।

बंधन बँधी जगत में गाढ़ी, बाढ़ी ममता रस पाई ॥ ७ ॥

इस तरह जगत में बंधन इसके, ख़ूब मज़बूत हो गये, और थोड़ा-थोड़ा रस पाकर, हर एक चीज़ में पकड़ यानी मोह बढ़ गया ।

जग व्यवहार लगा अति प्यारा, धारा उलटी यहाँ आई ॥ ८ ॥

अर्थ

और जगत में बर्ताव प्यारा लग कर, जो धार कि सुरत की ऊपर को चढ़नी चाहिये थी, वह उलटी देह और संसार में बहने और बिखरने लगी ।

बिना मेहर सतगुरु पूरे के, कस उलटे कस घर जाई ॥ ९ ॥

अर्थ

जब ऐसा हाल हो गया, तो अब बिना मेहर पूरे सतगुरु के, मुख इसका ऊपर यानी निज घर की तरफ़ कैसे मोड़ा जावे ?

सुखमन द्वार गगन का नाका, कठिन हुआ नहिं सुध पाई ॥ १० ॥

अर्थ

और इसी सबब से आकाश का द्वारा जो कि पहिला सुखमन स्थान है, खुलना कठिन हो गया, बल्कि उसकी सुधि भी भूल गई ।

श्याम धाम से हुई न न्यारी, सेत पदम कस कस पाई ॥ ११ ॥

अर्थ

और श्याम स्थान यानी काल के घेर से जुदा न हो सकी, फिर सेत धाम जो उसका निज स्थान है, कैसे पावे ?

धुन की छाँट होत नहिं भाई, कैसे सुरत धुन पाई ॥१२॥

अर्थ

और इसी सबब से धुन की छाँट भी नहीं हुई, फिर निज धुन को कैसे प्राप्त होवे ?

घट में बैठ निरख दृग द्वारा, यहाँ से राह अधर जाई ॥१३॥

अर्थ

अब चाहिये कि अपने घट में निश्चल होकर और नेत्रों के द्वारे को झाँक कर अंदर को चले। यही सड़क ऊँचे और निज देश की है।

घाटा तोड़ काल मति मोड़ो, करम काट ऊँचे जाई ॥१४॥

अर्थ

पहिली घाटी को, कि जिसकी हद त्रिकुटी तक है, तोड़ कर, और काल का मुख मोड़ कर, और कर्मों को काटते हुए ऊँचे को चलना चाहिये।

राधास्वामी कहत सुनाई, समझ समझ पग धर भाई ॥१५॥

अर्थ

राधास्वामी दयाल फ़रमाते हैं कि इस रास्ते में निरख-निरख और परख-परख कर क़दम रखना चाहिये।

बचन १८

मालिक का संसार में नर रूप धर कर औतार लेना जीवों के सच्चे उद्धार और कल्यान के वास्ते निहायत दरजे की दया और मेहर का निशान है

१–मालिक को अपने जीवों की तरक़्क़ी समझ-बूझ की और प्राप्ति विशेष सुख की, हमेशा मंज़ूर-ए-नज़र है। इस वास्ते जब, और जिस क़िस्म और दरजे के जीव संसार में पैदा होते हैं, उनके समझाने-बुझाने और तरक़्क़ी देने के वास्ते, कोई न कोई कला, किसी ऊँचे दरजे से, संसार में पैदा करके, कार्रवाई परमार्थ और व्यवहार की, जारी कराई जाती है। यानी दुनियावी मुआमलों में इल्म और हुनर और इख़लाक़ यानी धर्म की नई २ रीत से तरक़्क़ी दी जाती है, और इसी तरह जब और जिस लियाक़त के जीव

रचना में आते हैं, उनकी परमार्थी कार्रवाई और ज्ञान और भक्ति की तरक़्क़ी दरजे-बदरजे की जाती है।

२–और जब प्रेमी और भक्तिवान जीव ऊँचे दरजे के, पैदा होते हैं और पुरानी कार्रवाई जीवों की, मनमुखता के सबब से, ढीली और उलट-पलट हो जाती है और जीवों के उद्धार का रास्ता भूल और भरम की ज़्यादती और भोगों की तरफ़ कसरत से झुकाव होने के सबब से, किसी क़दर बंद हो जाता है, तब कुल्ल मालिक, अति दया करके, आप इस संसार में संत सतगुरू रूप धारन करके प्रकट होते हैं, और सच्चा और सहज रास्ता पूरे उद्धार का, जिससे कुल्ल जीव फ़ायदा उठा सकें, उपदेश करते हैं।

३–जो कोई ऐसा कहे कि क्या कुल्ल मालिक जो कि सर्व-समर्थ है, बग़ैर औतार रूप धरने की तकलीफ़ गवारा करने के, हिदायत नहीं कर सकता, उसका जवाब यह है कि उस मालिक में, सब ताक़त मौजूद है, और बिना नर रूप धारन करने के, कई तरह से, हर एक के अंदर में उपदेश कर सकता है, लेकिन जीवों को ऐसे उपदेश से, शुरू में यानी जब तक कि उनको किसी ऊंचे दरजे की समझ-बूझ हासिल न होवे, और प्रीत और प्रतीत और शौक़ उनके दिल में गहरा पैदा न होवे, कुछ फ़ायदा नहीं हो सकता है, और न भूल और भर्म, क़तई दूर हो सकते हैं,

और न मन और इंद्रियों के भोगों की तरफ़ से, सच्चा और सहज बैराग हासिल हो सकता है, और न ऐसे उपदेश का, जब तक कि उपदेशक नज़र न आवे, और उससे सवालात करके उस उपदेश का निर्णय न किया जावे, यानी जब तक भर्म और संशय दूर न होवें, पूरा २ यक़ीन हो सकता है।

४—जीवों की हालत ऐसी है कि अपनी-अपनी अक़्ल और समझ के मुवाफ़िक़, हर एक नई बात को, खोज और निर्णय करके, समझना चाहता है, और जो-जो भरम और संशय मन में धरे हुए हैं, उनका दूर होना चाहता है, और जब तक यह बात न होवे, उससे, कार्रवाई किसी किस्म की, दुरुस्ती से बन नहीं सकती। और ख़ास कर अंतर की कार्रवाई में तो, जाहिरी और अंतरी मदद दोनों की, निहायत ज़रूरत है, और जब उपदेशक नज़र न आवे, तो अनेक तरह के भरम और ख़ौफ़ दिल में पैदा होकर, कार्रवाई में विघ्न डाल कर, उसको चलने न देंगे।

५—तजरुबा और इम्तिहान से मालूम हुआ है कि बा-वजूद हासिल करने भेद के, पूरे गुरु से, और मालूम होने बहुत से हालात और अंतर की कार्रवाई के, फिर भी अभ्यासी जीव, अंतर के बचन और नई कैफ़ियत जब २ उनको सुनाई और नज़राई देवे, ज्यों का त्यों नहीं समझ

सकते, और अक्सर, बेजा संशय और भरम चित्त में उठा कर, उसके फ़ायदे और बड़ाई की तमीज़ नहीं कर सकते। फिर, जब कि उनको अंतर के हालात और मुक़ामात और कैफ़ियतों से बिल्कुल बे-ख़बरी होगी, तब किस तरह मालिक की दया की, जो वह अंतर में किसी जीव पर करे, या कोई तमाशा क़ुदरत का दिखलावे, समझ और परख आ सकती है ?

६–जीवों की ताक़त और लियाक़त, इस लोक में, इस क़िस्म की रक्खी गई है कि वह दूसरे शख़्स की मदद से, जो उनसे ज़्यादा ताक़त और लियाक़त रखता होवे, आहिस्ता २ बारम्बार समझाने-बुझाने और कार्रवाई का नमूना दिखलाने से, बढ़ सकती है, और सिर्फ़ एक दफ़े के बचन का असर, चाहे जैसा वह बचन ज़बर होवे, क़ायम नहीं रह सकता, क्योंकि मन और इन्द्रियाँ, जो कि काम करने के औज़ार हैं, हर रोज़, किसी क़दर बदलते रहते हैं। और इसी सबब से भूल भी ज़्यादा है। इस वास्ते, जब तक कि किसी काम का बराबर सीखना और अभ्यास करना जारी नहीं रहेगा, और कोई शख़्स, बतौर उस्ताद या गुरु के, उस कार्रवाई की निगरानी और ताकीद नहीं करेगा, तब तक मन और इन्द्रियाँ, जिनका ख़वास आराम-तलबी और भोगों में लिपट कर और उनका रस लेकर, मगन और निःचिंत हो रहने का है, कभी ऐसे काम, कि

जिन में इनको मेहनत और अपनी आदत से विलक्षण यानी जुदा और नई कार्रवाई करनी पड़े, दुरुस्ती से अंजाम नहीं देंगे ।

७–दुनिया में जितने काम हैं, कोई मनुष्य बल्कि जानवर भी बग़ैर सिखाये, और अपने हम-जिन्सों को वह काम करते हुए देखे बग़ैर, नहीं सीखते, और न दुरुस्ती से उसकी कार्रवाई करते हैं । यहाँ तक कि उठना, बैठना, चलना, फिरना, खाना, पीना, कपड़ा पहिरना, खाना, बनाना, और इल्म और हुनर और कारीगरी और चालाकी, और बहुत से और काम, मामूली या ग़ैर-मामूली, बग़ैर सीखने और औरों को वह काम करते हुए देखने के, नहीं आते । फिर, जब कि दुनिया के काम कि जिन में मन और इन्द्रिय अपने पिछले जनमों के स्वभाव के मुवाफ़िक़ आसानी से लग जाते हैं, बग़ैर सिखाने वाले और हम-जिन्सों में बैठ कर उसकी कार्रवाई करने के, नहीं सीखे जाते हैं, तब मनुष्य लोग परमार्थ का कार्रवाई, जो कि कठिन है और उसकी चाल भी उल्टी है, किस तरह से, अंतर में मालिक का बचन एक दफ़े सुन कर, सीख सकते हैं ? और उस बचन को कैसे, ज्यों का त्यों, समझ सकते हैं ?

८–मालिक जब किसी को कोई बात बतावेगा, तो यही करेगा कि अंतर में उसको बचन सुनावेगा, या उसके

मन में प्रेरणा करेगा, पर दोनों हालत में, बग़ैर बाहर की मदद के, कोई कार्रवाई, उस बचन या प्रेरना के मुवाफ़िक़, नहीं बन सकती है। या यह कि मालिक उसको अंतर में, सच्चे सतसंग और पूरे गुरु के सन्मुख जाकर, उपदेश लेने की हिदायत या प्रेरना करेगा, और जब वह यह बचन मानेगा तो उसका, अभ्यास करके, सच्चे उद्धार का रास्ता जारी हो जावेगा, और सतगुरु की मेहर से एक दिन पूरा काम बन जावेगा।

६–जीवों में बहुत दरजे हैं और हर एक की समझ-बूझ और लियाक़त, अपने २ दरजे के मुवाफ़िक़ है। बाहर के बचन, हर एक जीव, अपनी २ लियाक़त और समझ के मुवाफ़िक़ समझता है और सबकी समझ एकसाँ नहीं होती, फिर अंतर का बचन, जो निहायत सूक्ष्म होगा, कैसे सब जीव ज्यों का त्यों समझ सकते हैं ? हर एक की समझ जुदी २ है, और हर एक के मन और इन्द्रिय की ताक़त भी मुवाफ़िक़ उनके बर्ताव और व्यवहार और स्वभाव यानी रहनी के, जुदी २ है, फिर सब जीव एकसाँ नहीं हैं, और उनकी समझ और रहनी भी एकसाँ नहीं है। इस वास्ते, वे अंतर या बाहर का बचन भी एकसाँ नहीं ग्रहण कर सकते हैं, और आपस में फ़र्क़ ज़रूर रहेगा। फिर, मालिक अपने अंतरी बचन या प्रेरना से, हर एक की सम्हाल, जैसा कि चाहिये, नहीं कर सकता। इस वास्ते,

सिखाने और समझाने वाले की मदद बाहर से हर एक जीव को ज़रूर दरकार है।

१०-और मालूम होवे, कि अंतर का बचन सुन कर, जीवों को कैसे यक़ीन हो सकता है कि यह मालिक का बचन है या उनकी, अपने २ मन और बुद्धि की प्रेरना है, या कोई और रूह, मिस्ल भूत या जिन्न के, या कोई काल की कला अंतर में बोलती है ? इस में, अभ्यासियों को, जिनके सिर पर गुरू मौजूद हैं, भरम हो जाता है। फिर, जिनको गुरू नहीं मिले, वे कैसे भरम और संशय से, इस मुआमले में, बच कर किसी क़िस्म की कार्रवाई अंतरी बचन के मुवाफ़िक़, कर सकते हैं, या उसको जैसा कि चाहिये वैसा समझ सकते हैं ?

११-अब मालूम होवे कि जिस क़दर कार्रवाई दुनिया या परमार्थ की है, वह बिदून मोहब्बत या प्रेम के, दुरुस्ती से बन नहीं सकती, और मोहब्बत या प्रेम, जीव को, किसी में, बग़ैर देखने या उसकी महिमा सुनने के, आ नहीं सकता। और जो महिमा सुन कर भी प्रेम आवे तो वह बिदून देखने यानी दर्शन के, और उस तरफ़ से थोड़ी बहुत मदद मिलने के, बढ़ नहीं सकता। फिर मालिक के चरनों का प्रेम, किसो के मन में, पहिले तो महिमा सुन कर आवेगा, और फिर, वह दर्शन और दया पाकर बढ़ेगा ; इस

वास्ते, जो मालिक अंतर में किसी को बचन सुनावे या प्रेरना करे, तो वैसा प्रेम, जो दर्शन पाकर और दया की परख करके आवेगा, पैदा नहीं हो सकता।

१२–जो करनी बताई जावे, वह ऐसी कठिन है कि बग़ैर मन और इन्द्रियों के रोकने के, दुरुस्ती से बन नहीं सकती। और माया के पदार्थ और इन्द्रियों के भोग ऐसे ज़बर हैं कि उनसे, बिदून बाहरी और अंतरी मदद के, हटना और उनसे नफ़रत करना, जीवों की ताक़त से बाहर है। फिर, किसी क़िस्म की करनी जीवों से दुरुस्ती से बन आना, और दिन २ उसमें तरक़्क़ी करना किस क़दर मुश्किल है? इसी सबब से, जितने उपाय और जतन कि पोथियों में लिखे हैं, सब कहने और सुनने की बातें रहीं, और करनी किसी से, उनके मुवाफ़िक़, नहीं बनती और इसी वजह से जीव का सच्चा उद्धार दुर्लभ हो गया।

१३–इस वास्ते ऐसी हालत और बे-ताक़ती जीवों की देख कर, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, आप संत सतगुरु रूप धारन करके प्रकट हुए, और जीवों को, अपने पुत्र की तरह प्यार करके, चरनों में खींचा, और मेहर और दया से अपने चरनों की प्रीत उनके मन में बसाई। इस प्रीत का हिरदे में बसाना, यही दया ख़ास है, क्योंकि प्रीत से जीव एक दूसरे से मिलते हैं, और प्रीत के सबब

से, एक दूसरे की तरफ़ खिंचता है। सो जिसके दिल में राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत पैदा हुई, वही उस प्रीत के सबब से, भेद रास्ते का लेकर, उनके चरनों की तरफ़ खिंचता है, और चौरासी के चक्कर और काल और माया के घेर से निकल कर मुक्ति पद को प्राप्त होता है।

१४-ज़ाहिर है कि जीवों की प्रीत, अनेक पदार्थों और भोगों में, और कुटुम्ब परिवार और बिरादरी में, लग रही है, यानी उनका मन अनेक जगह बँध रहा है। सो, उन सब से हट कर, पहिले एक ज़ाहिरी स्वरूप में जब तक नहीं ठहरेगा, तब तक, उसका सूक्ष्म और अति सूक्ष्म और अरूप में लगना मुश्किल और ना-मुमकिन है। अब समझना चाहिये कि ऐसा चैतन्य और समर्थ ज़ाहिरी स्वरूप, जो कि जीवों के मन को सब तरफ़ से हटा कर अपने में लगावे, कौन है? वह स्वरूप सच्चे और पूरे गुरु का, ज़ाहिरी यानी देह रूप है। उन्हीं के दर्शन और बचन से कुल्ल मालिक़ के चरनों में प्रीत जागेगी और महिमा चित्त में समावेगी, और सच्चे अनुरागी जीवों को, उनका ज़ाहिरी स्वरूप और बचन निहायत प्यारे लगेंगे। और जिस क़दर जीवों की प्रीत उनमें बढ़ती जावेगी, उसी क़दर, वह दुनिया से आहिस्ता २ न्यारे होते जावेंगे। और फिर वही प्रीत, गुरु के सूक्ष्म और अति सूक्ष्म और विदेह रूप में लगती जावेगी, और ज़ाहिरी

स्वरूप से किसी क़द्र नज़र हटती जावेगी। इस तौर से, अनुरागी जीव, भेद रास्ते का, और जुगत चलने की, दरियाफ़्त करके, राधास्वामी दयाल के चरनों की तरफ़, दिन २ चलता जावेगा, और एक दिन धुर पद यानी राधास्वामी धाम में पहुँच कर, कुल्ल मालिक के दर्शन पाकर, सच्ची मुक्ति को प्राप्त होगा।

१५–बग़ैर ऊपर की तरकीब के मुवाफ़िक़ चलने के, कोई जीव धुर पद में नहीं पहुँच सकता, क्योंकि चलना और चढ़ना, बग़ैर प्रेम के, नहीं बन सकता है। इस वास्ते, पहिले गुरु के चरन में प्रीत लगाना ज़रूर है। और ऐसे चैतन्य पुरुष और समर्थ गुरु, सिवाय मालिक के या जिसको कि वह आप अपनी दया से इस दरजे पर पहुँचावें, दूसरा नहीं हो सकता। फिर ज़ाहिर है कि जब तक मालिक आप नर रूप धर कर संसार में न आवे, तब तक, जीवों के सच्चे उद्धार की कार्रवाई जारी नहीं हो सकती।

१६–और मालूम होवे कि कुल्ल मालिक, सिवाय गुरु स्वरूप के, निज रूप से भी, जीवों के उद्धार में मदद देता है। यानी जो जीव कि गुरू का सतसंग करके निर्मल किये गये, यानी अन्तर में रास्ता तै कर के किसी ऊंचे दरजे पर पहुंचाये गये, वहाँ, उनको ताक़त परखने कुल्ल मालिक की दया और मदद को, हासिल होवेगी, और वहाँ से

धुर मुक़ाम तक कुल्ल मालिक अपनी मेहर से, उनको आप मदद देकर, यानी गुरु स्वरूप में दर्शन देकर पहुँचावेगा।

१७-लेकिन, जब तक कि जीव, नीचे दरजे में माया और तमोगुण के घेर में पड़े हुए हैं, उनको, कुल्ल मालिक की दया की धार नज़र नहीं आ सकती है। इस वास्ते, पहिले उनकी सफ़ाई और किसी दरजे तक चढ़ाई, बग़ैर गुरु स्वरूप के उपदेश और मदद के, नहीं हो सकती है। यानी पहिले, उनका भाव और प्यार गुरु के देह स्वरूप में लगाया जावेगा, और उस प्रीत के वसीले से, उनके स्थूल और सूक्ष्म बन्धन काटे जावेंगे, तब अन्तर में वह दरजा हासिल होगा कि जहाँ से कुल्ल मालिक के चरनों में सच्ची और गहरी प्रीत प्रकट होकर, सुरत को निज धाम यानी राधास्वामी के चरनों में पहुँचावेगी।

१८-ऊपर के लिखे हुए से साफ़ ज़ाहिर है कि मालिक का, संसार में, नर रूप धारन करके प्रकट होना, वास्ते उद्धार जीवों के, यानी खींचने ऊपर की तरफ़ को, नीचे के दरजों में से, निहायत ज़रूर है, क्योंकि उन नीचे दरजों से सुरत का उबार सिवाय कुल्ल मालिक के, जब वह आप सतगुरु रूप धारन करके संसार में प्रकट होवे या उसकी ख़ास अंश के, जिसको वह अपनी ताक़त देकर संसार में भेजे, दूसरा कोई नहीं कर सकता।

१६–यह सतगुरु रूप, जीवों को, अपने चरनों में लगा कर और अपनी प्रीत उनके हिरदे में बसा कर, दिन दिन ऊपर की तरफ खींचता है। बिना सतगुरु के प्रेम-प्रीत के, कोई जीव, नीचे का देश छोड़ कर, ऊँचे देश में नहीं पहुँच सकता। और इस वास्ते कुल्ल मालिक का या उसके निज अंश का, गुरु स्वरूप धारन करके संसार में आना निहायत ज़रूर है, और यही उसकी ख़ास दया जीवों के उबार के वास्ते है कि उनको प्रेम-प्रीत यानी भक्ति का दान देकर, और सुरत-शब्द अभ्यास की, जिस क़दर मुनासिब और ज़रूरी है, कमाई करा कर, माया और काल और चौरासी के चक्कर से बचा कर, निज धाम में पहुँचा कर, अपने निज स्वरूप के दर्शन देता है, और जनम-मरन की फाँसी से, अपनी मेहर और दया से, छुड़ा लेता है।

२०–जो जीव कि ज़्यादा नीचे दरजे में पड़े हैं और मन और इन्द्रियों के भोग-बिलास में अटक रहे हैं, उनका उबार भी मंजूर है। लेकिन उनकी सफ़ाई बग़ैर उनके तन और मन को थोड़ा बहुत कष्ट देने के, नहीं हो सकती। सो यह कष्ट और कलेश जो उनको वक़्त मुनासिब पर दिया जाता है, शुरू दरजे की दया है। जैसे कि खिलाड़ी और नटखट लड़कों को, बाप या उस्ताद ताड़ मार करके सम्हालता है, यानी उनका चाल-चलन अपनी मरजी के मुवाफ़िक़ दुरुस्त कर लेता है, इसी तरह, मालिक

नीचे के दरजों के जीवों को, तकलीफ़ और तंगी का दण्ड देकर, निर्मल कर लेता है। तब वे लायक गुरु की सेवा और सतसंग के होते हैं, और फिर गुरु स्वरूप की मेहर और मदद से ज़्यादा ऊँचे दरजे पर चढ़ाये जाते हैं, जहाँ से कि कुल्ल मालिक, उनको, अपनी अन्तरी मेहर व दया से अभ्यास कराके, और प्रेम बढ़ा कर, अपने महल में बुला लेता है। इसी का नाम सच्ची मुक्ति और सच्चा उद्धार है।

बचन १६

"इतसे मोड़ और उतको जोड़" यानी संसार और माया के पदार्थों से चित्त को हटा कर, राधास्वामी दयाल के चरनों में, यानी स्वरूप और शब्द की धार में जोड़ना चाहिये

१—जो कोई सच्चा कल्यान और उद्धार अपने जीव का चाहे, उसको यह काम सिर्फ़ संत अथवा राधास्वामी मत में शामिल होकर और सुरत-शब्द के अभ्यास की कमाई करके पूरा पूरा बन सकता है। और किसी मत में जो दुनिया में जारी हैं, यह काम जैसा चाहिये, दुरुस्त नहीं बन सकता।

२—कुल्ल मालिक का देश यानी सुरत का भंडार

ऊँचे से ऊंचा है, और वहीं से आदि-सुरत की धार निकली, और उतर कर, जगह २ ठहर कर, और मंडल बाँध कर, रचना करती हुई, पिंड में तीसरे तिल के मुक़ाम पर ठहरी है, और वहीं से पिंड की रचना की सम्हाल कर रही है। और दो धारें, दोनों आँखों के तिल के मुक़ाम पर ठहर कर, देह और दुनिया की कारवाई करती हैं, और मुख उनका, बाहर की तरफ़, और पिंड में नीचे की तरफ़ है।

३--जो धारें कि नीचे की तरफ़ पिंड में फैली हैं, उनका बंधन देह के अंग २ में हो रहा है, और जो कि बाहर की तरफ़ जारी हैं, वह अनेक प्रकार के भोगों और पदार्थों में, और भी कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी वग़ैरा में बँध रही हैं। अपनी धारों की ज़ंजीरों से, मन और सुरत, संसार में बंध कर, फँस गये हैं।

४–मन अनेक तरंगें भोग-बिलास और संसार के मान-बड़ाई की उठाता रहता है, और उनके पूरा करने के वास्ते, अनेक तरह के जतन यानी करम करता है।

५–इस कारवाई में जो और जीवों को सुख पहुँचा तो उसका फल किसी क़दर सुख मिलता है और जो जीवों को दुख पहुँचा तो उसकी एवज़ दुख भोगना पड़ता है। खुलासा यह कि करमों के चक्कर से जीव कभी बाहर नहीं होता है, और ऊंच-नीच देश और जोनों में सदा भरमता रहता है।

६–इस चक्कर से जो कि माया के घेर में हर वक़्त

चल रहा है, कोई जीव बाहर नहीं जा सकता, क्योंकि देह की आशा और भोगों की इच्छा, उसको हमेशा नीचे के देशों में, और करम-अनुसार जोनों में भरमाये रखती है। यानी उसके मन और सुरत का रुख़ और झुकाव, अपनी चाहों के सबब से, सदा, नीचे और बाहर की तरफ़, माया के मंडल में, रहता है।

७–जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, उन सब में, जो कुछ कि परमार्थी कार्रवाई अक्सर की जाती है, वह सब बाहरमुखी है, और जो कुछ किसी मत में अंतरी अभ्यास जारी है, उसकी कार्रवाई छः चक्रों के अन्तरगत, यानी पिंड की हद्द के अंदर में, की जाती है, और कहीं २ पिंड के परे, ब्रह्मांड के नीचे के दरजे तक, उस कार्रवाई की रसाई बयान की है। पर वहाँ के अभ्यास का तरीक़ा, मिस्ल प्राण-योग वग़ैरा के, ऐसा कठिन और ख़तरनाक है कि किसी जीव से, चाहे वह गृहस्थ आश्रम छोड़ कर विरक्त भी हो जावे, वह अभ्यास, दुरुस्ती से बनना निहायत मुश्किल बल्कि ना-मुमकिन है।

८–इसी सबब से, सब जीव बाहरमुखी परमार्थ में लग रहे हैं। और जो कि ऐसी कार्रवाई का सिलसिला सच्चे मालिक के देश या उसके चरनों की धार से, अंतर में, नहीं लगा हुआ है, इस वास्ते, वह बाहरमुखी कार्रवाई, सिर्फ़ शुभ करम का फल देती है, और जनम-मरन और दुख-

सुख से छूटना, और सच्चे मालिक के चरनों में पहुंच कर अमर और परम आनन्द को प्राप्त होना, मुमकिन नहीं है।

६–और जो कोई, बिलफ़र्ज़ थोड़ा-बहुत, अन्तरी कार्रवाई करके, पिंड के नाके तक, या ब्रह्मांड के नीचे के दरजे में पहुँचे, वह बहुत काल को सुखी हो जावेगा, पर जनम-मरन से बिलकुल रहित नहीं होवेगा। इस तरह, सच्चा उद्धार किसी का न होगा, यानी सच्चे मालिक का दर्शन किसी को हासिल नहीं हो सकता, और न उसके देश की, जो कि पिंड और ब्रह्मांड के परे है, और जहाँ माया बिलकुल नहीं है, किसी को ख़बर मिल सकती है।

१०–ऐसी हालत जगत के जीवों की देख कर, परम पुरुष पूरन धनी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, संत सतगुरु रूप धार कर, इस संसार में प्रकट हुए, और जीवों को, अति दया करके, सच्चे और पूरे उद्धार की सहज जुगत बताई, यानी सुरत-शब्द मारग का उपदेश किया, जिसकी कमाई, जो सच्चा शौक़ रखता होवे, चाहे मर्द होवे या औरत, जवान होवे या बूढ़ा, विद्वान होवे या अनपढ़, आसानी के साथ कर सकता है, और रफ़्ता २ एक दिन, सच्चे और कुल्ल मालिक के चरनों में पहुंच कर, परम आनन्द को प्राप्त हो सकता है।

११–इस अभ्यास का मतलब यह है कि मन और सुरत की धार को, जो नीचे और बाहर की तरफ़ भोगों

और माया के अनेक पदार्थों में बह रहा है, इधर से हटा कर या मोड़ कर, ऊँचे की तरफ़ को अपने अंतर में चलाना चाहिये ।

१२–कुल्ल मालिक का देश ऊंचे से ऊँचा है, और उसका भेद और रास्ता और स्थानों का हाल संतों के उपदेश से मालूम होगा, यानी हर एक स्थान का नाम और रूप और आवाज़ वग़ैरा का भेद संत बताते हैं। सो उस उपदेश के मुवाफ़िक़, स्वरूप और शब्द के आसरे, मन और सुरत को समेट कर, निज घट में चढ़ाना चाहिये।

१३–कुल्ल काम दुनिया के, प्रीत और शौक़ के साथ, दुरुस्त बनते हैं। इसी तरह जिसके मन में सच्चे और कुल्ल मालिक और उसके देश की महिमा सुन कर, प्रीत और शौक़ आया, वही अधिकारी संत मत के उपदेश का है, और उसी के मन और सुरत की धार, आसानी के साथ, अंतर में, ऊपर की तरफ़ चढ़ेगी।

१४–दुनिया में जिसका जिससे विशेष प्यार और मुहब्बत है, वह एक दूसरे से चल कर मिलते हैं। इसी तरह, जिसका प्यार चरनों में कुल्ल मालिक के आया, और भेद रास्ते और मंज़िलों का, और जुगत चलने की, उसको मालूम हुई, तब शौक़ और प्रेम के साथ, उसके मन और सुरत अपने प्रीतम सच्चे मालिक के दर्शन के वास्ते, उसी रास्ते पर आहिस्ता २ चलना शुरू करेंगे, और जिस क़दर उनकी चाल चलेगी,

उसी क़द्र आनन्द रास्ते में उनको मिलना शुरू हो जावेगा, यानी कुछ २ रोशनी या प्रकाश भी नज़र आता जावेगा, और आवाज़ भी रसीली सुनने में आवेगी। इस तरह शौक़ और प्यार दिन २ बढ़ता जावेगा और उसके साथ चाल भी बढ़ती जावेगी।

१५–फिर जिस क़द्र कि अंतर में कैफ़ियत नज़र आवेगी और आनन्द मिलेगा, उसी क़द्र, शौक़ मालिक के दर्शनो का बढ़ता जावेगा, और उसी क़द्र मन और इन्द्रियाँ, इस तरफ़, यानी दुनिया के भोग बिलासों की तरफ़ से हटती जावेंगी, और दुनिया और उसका सामान फीका लगता जावेगा, और दुनियादारों के संग से तबीयत में उदासीनता आती जावेगी। इसी का नाम इधर से मोड़ना और उधर को जोड़ना है।

१६–सच्चे शौक़ीन और दर्दी परमार्थी को, इस अभ्यास के करने में, ज़रा भी तकलीफ़ नहीं होती, बल्कि और रस और आनंद आता है, और कुल्ल मालिक की दया भी उसको अंतर और बाहर मालूम होने लगती है। तब प्रतीत, यानी यक़ीन बढ़ेगा, और उसके साथ प्रेम-प्रीत भी बढ़ेगी, और दिन २ तरक़्क़ी होती जावेगी और इसी तरह एक दिन निज घर में, जो कि अमर और अजर और प्रेम और आनन्द का महा भण्डार है, पहुँच कर, अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल का दर्शन पावेगा, और तब

बिलास और आनन्द में मगन रहेगा। काल, कष्ट और कलेश और जनम-मरन वहाँ नहीं है, क्योंकि वहाँ माया का नाम निशान भी नहीं है।

१७–यह दुनिया और देह दुख-सुख और मल-मूत्र का भाँडा है। यहाँ रह कर कोई परम आनंद को, जो एक रस सदा क़ायम रहे, प्राप्त नहीं हो सकता। इस वास्ते संत फ़रमाते हैं कि जो कोई दुक्खों से और जनम-मरन की फाँसी से बचना चाहे, वह जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, उसी क़दर, संत सतगुरु की दया और मेहर लेकर, इस पिंड और संसार से न्यारे होने का जतन शुरू कर देवे, तो एक दिन कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया से, पिंड और ब्रह्माण्ड के पार, संत अथवा दयाल देश में पहुँच जावेगा।

१८–ज़ाहिर है कि जिस क़दर कार्रवाई स्वार्थ और परमार्थ, यानी दुनिया और दीन की, जो आदमी से बन रही है, या बन सकती है, वह सब इसकी तवज्जह की धार के सबब के बनती है, और तवज्जह या चित्त की धार में मन और सुरत की धार शामिल है। अब जब तक कि आदमी की तवज्जह की धार, बाहर की तरफ़, जड़-पदार्थों में जैसे इन्द्रिय-भोग वग़ैरा में, जारी रहेगी, तब तक समझना चाहिए कि चैतन्य-धार का ख़र्च ही ख़र्च है, और जड़-पदार्थों के साथ मेल और बंधन होता है, और इस वास्ते, उनके भाव

और अभाव में (जिस क़दर आसक्ति होगी) उसी क़दर सुख-दुख ज़रूर भोगना पड़ेगा। जो तवज्जह दुखदाई पदार्थ की तरफ़ से हटा कर, दूसरी तरफ़ जोड़ दी जावे, तो वह दुख बहुत हलका और कम हो जावेगा, और जो पूरी २ तवज्जह बदल दी जावे तो वह दुख बिल्कुल मालूम नहीं पड़ेगा।

१६–राधास्वामी मत के अभ्यास की यही ख़ूबी और बड़ाई है, कि इस में, आदमी की तवज्जह, इसके सुरत-चैतन्य के भण्डार की तरफ़, सहज में फेरने की तरकीब काम में लाई जाती है। वह चैतन्य-भण्डार आनन्द और सुख का घर है। सो जब तवज्जह, उस तरफ़ को, पूरी २ आती है, फ़ौरन थोड़ा-बहुत सुख और आनन्द प्राप्त होता है और दुख और चिन्ता बिसर जाती है।

२०–जो कोई चिन्ता और तकलीफ़ या रोग-सोग की हालत में अपनी तवज्जह पूरी-पूरी–(१) बानी के पाठ के सुनने में, या (२) मुक़ाम का ख़याल करके नाम के सुमिरन और स्वरूप के ध्यान में, या (३) शब्द की धुन में, या (४)संत और साध की ज़बानी, चर्चा और बचन में, लावे, तो उसी वक़्त, संतों के अभ्यास का असर अपने अन्तर में मालूम कर सकता है यानी ज़रूर उसकी चिंता या तकलीफ़ या बीमारी या रंज किसी क़दर हलके और कम हो जावेंगे, और इस तरह पिछले कर्मों का भोग, बहुत कम व्यापेगा।

और जो अभ्यास जारी रहा, तो दिन दिन पाप-कर्म कटते जावेंगे, और कुछ अर्से में पूरी सफ़ाई हो जावेगी, और आइन्दा को आनन्द बढ़ता जावेगा, और कुल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया व मेहर की परख आती जावेगी, और चरनों में प्रीत और प्रतीत और अभ्यास की लगन बढ़ती जावेगी ।

२१–अब ग़ौर करना चाहिये, कि सब जीव वास्ते प्राप्ति सुख और दूर होने दुक्खों के, उमर भर, रात-दिन जतन करते रहते हैं, और जो सुख कि हासिल होता है, वह तुच्छ और नाशमान है, और हरचन्द कि यहाँ का दुख भी नाशमान है, पर बाज़े २ दुख ऐसे भारी हैं कि उमर भर तकलीफ़ देते हैं ! फिर, वास्ते प्राप्ति निर्मल और ठहराऊ सुख और आनन्द के, और दूर करने या जड़ से काट देने तकलीफ़ और दुक्खों के, किस क़दर तवज्जह, हर एक शख़्स को, चाहे मर्द होवे या औरत, करना वाजिब और मुनासिब है ? और इस काम के करने की जुगत सिर्फ़ राधास्वामी मत में जारी है, और वह इस क़दर सहज है कि जो थोड़ा भी सच्चा शौक़ होवे, तो वह दुरुस्ती से बन पड़ेगी, और वह शौक़ दिन २ बढ़ता जावेगा, और पूरी करनी करा कर, एक दिन अभ्यासी को निज घर में पहुँचा कर, निःचिंत कर देगा ।

बचन २०

मन और सुरत का मुख, अंतर में, ऊपर की तरफ़ मोड़ने, और आहिस्ता २ चढ़ाने में, हमेशा सुख और आनन्द, ज्यादा से ज्यादा मिलेगा, और दुख-तकलीफ़ और चिन्ता दूर और कम होते जावेंगे। इस वास्ते यह अभ्यास कुल्ल जीवों को, चाहे औरत होवे या मर्द, वास्ते अपने असली फ़ायदे के, करना लाज़िम और मुनासिब है।

१—दुनिया में सब जीव, वास्ते प्राप्ति सुख और आनन्द के, रात-दिन मेहनत और कोशिश करते हैं, और दुक्खों से बचने या उनको दूर करने के वास्ते भी बराबर तदबीर और जतन करते हैं। पर जो सुख कि यहाँ प्राप्त होते हैं, वे सब मन और इन्द्रियों के विषय हैं, यानी मन और इन्द्रियों को, उन से, स्वाद और रस मिलता है, और उसका असर बहुत थोड़ी देर तक ठहरता है, और फिर जाता रहता है। और जो दुख कि भारी हैं, जैसे सख़्त बीमारी और मौत, उनके दूर करने का कोई जतन या तदबीर, आदमी के इख़्तियार में नहीं है, यानी वे ला-इलाज हैं, और सब को चार-नाचार सहने पड़ते हैं, बल्कि छोटे

दुक्खों को भी कोई शख़्स उनके मुक़र्ररा वक़्त से पहिले नहीं हटा सकता, और न कम कर सकता है।

२—सबब तुच्छ और नाशमान होने, दुनिया के सुक्खों का, यानी इंद्रियों के भोगों का, यह है कि यह रस और स्वाद जड़-पदार्थों के संग से प्राप्त होते हैं, और जड़-पदार्थों में चैतन्य-अंस बहुत कम है, और जो कि यह बात तहक़ीक़ और निर्णय हो चुकी है कि जितने सुख और आनन्द और रस और स्वाद हैं, वे सब सुरत चैतन्य की धार के वसीले से, जो इंद्रियों के घाट यानी द्वारे पर आकर ठहरती है, हासिल होते हैं। इस वास्ते, जो धार कि इन्द्रियों के घाट से, ऊँचे देश में जारी है, उससे, सुरत और मन को मिलने से, ज़रूर सुख और आनन्द और रस निर्मल और ज़्यादा मालूम होवेगा, और उसी वक़्त में, बग़ैर करनें दूसरे जतन के, तकलीफ़ चाहे किसी किस्म की होवे यानी मानसी या देह की, कम मालूम पड़ेगी, यानी किसी क़दर उसको इफ़ाक़ा हो जावेगा।

३—अब ग़ौर करना चाहिये, कि जो कोई इस तरह का जतन बतावे कि जिससे सुरत और मन और इन्द्रियों का रुख़ ऊँचे देश की तरफ़ को सहज में उलटता जावे, और अंतर में स्वतन्त्र यानी अपने इख़्तियार से जितनी देर चाहे, ऊपर के दरजे का रस और आनन्द ले सके, तो उस जतन या जुगत को, किस क़दर तवज्जह के साथ, हर

एक औरत और मर्द को सीखना, और उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करना, लाज़िम और मुनासिब है, ख़ास कर, जब कि वह जुगत ऐसी है कि विशेष रस और आनन्द प्राप्त करावे, और भी उसी वक़्त चिन्ता और तकलीफ़ को हटा देवे, या कम कर देवे, यानी वह जतन दुहरे फ़ायदे का असर रखता है।

४–और वह जतन यह है कि मन और सुरत को, तवज्जह के साथ, ऊँचे देश में, संतों के भेद के मुवाफ़िक़, रूप में जोड़े, और शब्द की धुन के साथ, जो हर वक़्त घट २ में हो रहा है, लगावे, और उसी धार को पकड़ कर ऊपर को चढ़ावे। इस जतन का नाम, ध्यान और सुरत-शब्द योग है और परम पुरुष राधास्वामी दयाल ने, उसको, इस क़दर सहज कर दिया है कि लड़का, जवान, बूढ़ा, औरत होवे या मर्द, गृहस्थ होवे या विरक्त, पढ़ा-लिखा होवे या अनपढ़, हर एक शख़्स आसानी और आराम के साथ, बग़ैर किसी ख़तरे के, कर सकता है और जल्द उसका असर और फ़ायदा अपने अंतर में देख सकता है।

५–इसी जतन की कार्रवाई करके, जीव, दरजे-ब-दरजे अपने मन और सुरत को, घट में चढ़ा कर, माया के घेर से बाहर जा सकता है, और देहियों के बन्धन और उनके लाज़िमी दुख-सुख से सच्चा छुटकारा हासिल कर सकता है, और फिर वहाँ से आलम-ए-रूहानी यानी निर्मल-चैतन्य देश

में पहुँच कर, अपने सच्चे माता-पिता कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के दर्शन पाकर अमर और अजर हो सकता है।

६—यह जतन कोई जादू या मन्त्र नहीं है। सिर्फ़ तवज्जह का, दरजे-ब-दरजे और आहिस्ता २ ऊँचे स्थानों में, जो कि घट २ में वक़्त उतार सुरत के, क़ुदरती रचे गये हैं, लगाने और जमाने का काम है। जिस क़दर जिसको तवज्जह अंतरी, रूप या शब्द में ठहरेगी, उसी कदर, उसको रस और आनन्द प्राप्त होगा, और दिन २ सफ़ाई होती जावेगी, और दुनिया का मैल और आलायश और नापाकी घटती जावेगी, यानी संसारी चाहें और इंद्रिय-भोगों की बासना, कम होती जावेंगी, और रफ़्ता २ सुरत, मन और इन्द्रियों का संग छोड़कर और विदेह होकर, निर्मल-चैतन्य यानी दयाल देश में चढ़ जावेगी। इस मुक़ाम में पहुंचने पर, सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ति हासिल होती है, यानी जनम-मरन से सच्चा छुटकारा हो जाता है और अमर और परम आनन्द की प्राप्ति होती है, क्योंकि वह देश रूहों का भंडार है। और महा विशेष और निर्मल चैतन्य वहाँ भरपूर है, और जो कि सुरत चैतन्य है और सत्त और अमर और अजर और महा आनन्द स्वरूप है, फिर उस देश के अविनाशी सुख और आनन्द का क्या अनुमान किया जावे कि उसका अंदाजा बिल्कुल अक़्ल और क़यास में नहीं आता है ?

७–ऊपर के लिखे हुए फ़ायदे की तसदीक़ और जाँच, अभ्यासी जीव, अपनी इसी जिन्दगी में कोई दिन के अभ्यास के बाद, अच्छी तरह कर सकता है, और थोड़ा-बहुत रस और आनन्द अभ्यास शुरू करते ही मिलने लगता है। इससे ज़्यादा क्या सबूत इस जतन और अभ्यास की बड़ाई का दरकार है? इस वक़्त के जीवों पर निहायत दरजे की दया, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने फ़रमाई है, कि ऐसा बढ़के दरजे का अभ्यास, इस क़दर सहज कर दिया है कि हर कोई उससे आसानी के साथ फ़ायदा उठा सकता है।

८–अब जीवों को निहायत ग़ौर के साथ, अपने असली नफ़े और नुकसान का विचार करना ज़रूर है कि जब कि वे इस दुनिया के तुच्छ और नाशमान सुख और आराम के लिए ऐसी मेहनत और मशक़्क़त कर रहे हैं कि उमर भर इसी में खो देते हैं, तो फिर वास्ते प्राप्ति अमर और परम आनन्द के, किस क़दर तवज्जह और कोशिश उनको करना वाजिब है कि जिससे बारम्बार जनम धर कर, दुख-सुख भोगने से हमेशा के वास्ते रिहाई हो जानी मुमकिन है?

९–जो कोई यह ख़्याल करे कि अभ्यासी का इस काम के करने में घरबार या रोजगार छोड़ना पड़ेगा,

सो इस बात की, संत अथवा राधास्वामी मत में, कुछ ज़रूरत नहीं है। इस मत में जिस क़द्र त्याग है, वह मन से है, बाहर से गृहस्थी और रोजगार के छोड़ने की ज़रूरत नहीं पड़ती, यानी जब तक कि अभ्यासी को गहरा रस और आनन्द, अंतर में, ऊँचे दरजे का हासिल न होवे, तब तक वह दुनिया की कुल्ल कार्रवाई मुख़्तसर तौर पर, यानी संक्षेप करके बराबर किये जावेगा, और जब इस क़द्र आनन्द हासिल होगा कि फिर तवज्जह दूसरी तरफ़ को, यानी दुनिया के काम में नहीं कर सकता, तब कुल्ल-मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल, अपनी मेहर और दया से, उस अभ्यासी के कारोबार का बन्दोबस्त आप कर देंगे, कि जिसमें उसको और उसके कुटुम्बियों को किसी क़िस्म की तकलीफ़ न होगा।

१०–ऊपर लिखा गया है कि दुनिया में बाज़े दुख बहुत भारी, और बाज़े रोग ला-इलाज यानी असाध हैं, सो उन की तकलीफ़ भी सुरत-शब्द के अभ्यास से बहुत कम और हल्की हो जावेगी, यानी जिस क़द्र कि अभ्यासी को ताक़त चढ़ाने मन और सुरत की, आँख के मुक़ाम से ऊँचे की तरफ़, दिमाग़ में, अभ्यास के वसीले से, हासिल होगी, उसी क़द्र चिन्ता और फ़िकर और दुख और तकलीफ़ मन और देह की, उसको कम व्यापेगी।

११–देखने में आता है कि तवज्जह के रुख़ बदलने

से, यानी चित्त के एक तरफ़ से दूसरी तरफ़ मुख मोड़ने से, आदमी की हालत फ़ौरन बदल सकती है। जैसे कोई आदमी किसी फ़िकर और चिन्ता में बैठा हुआ है, और उस वक़्त उससे कोई अचरजी ख़बर या बात कोई शख़्स आकर कहे, तो जितनी देर उस बात का ज़िक्र और निर्णय वग़ैरा होता रहेगा, और उसकी तवज्जह उस तरफ़ लगी रहेगी, तब तक वह चिन्ता या फ़िकर उसको नहीं सतावेगा। ऐसे ही, अगर बदन के किसी अंग में किसी क़िस्म की तकलीफ़ है, और उस वक़्त बीमार की तवज्जह किसी ख़ास काम या बात की तरफ़ लगा दी जावे, तो उसको, वह तकलीफ़ जब तक कि तवज्जह बँटी रहेगी, बहुत कम मालूम होगी।

१२—अब मालूम होवे, कि राधास्वामी मत में अभ्यास, मन और सुरत की धार या मुख को, घट में ऊँचे की तरफ़ मोड़ने का, कराया जाता है, और वह ऊँचे का देश दरजे-ब-दरजे विशेष सुख और आनन्द का भंडार है, और जीव की बैठक से नीचे के देश में और बाहर की तरफ़, उस क़दर सुख और आनन्द नहीं है, यानी दरजे-बदरजे कम होता गया है, और दुख और तकलीफ़ का मसाला और सामान उस नीचे के देश में बढ़ता गया है। फिर, जिस किसी को कि अभ्यास के बल से ताक़त, सुरत और मन के मुख मोड़ने और चढ़ाने की, हासिल है, वह जब चाहे

अपने इख़्तियार से ऊँचे देश में चढ़ कर, विशेष आनन्द ले सकता है और दुख और तकलीफ़ के मुक़ाम से हट सकता है ।

१३–अब समझना चाहिये कि यह बात किस क़दर भारी फ़ायदे की है, कि एक ही काम करने से, एक ही वक़्त में, दुख और तकलीफ़ और चिन्ता और फ़िक्र घट जावे या बिल्कुल हट जावे, और सुख और आनंद उसी वक़्त ज़्यादा से ज़्यादा मिलता जावे ।

१४–ऐसी जुगत, हर एक को, चाहे औरत होवे या मर्द, इस दुनिया में जानना बहुत ज़रूर और मुनासिब मालूम होता है, क्योंकि इस देश में दुख और सुख दोनों का चक्कर चल रहा है, और जीव उनके भोगने में लाचार है । फिर जिन जीवों को संतों की जुगत सुरत-शब्द जोग की मालूम है और वह उसका नित्त अभ्यास करते रहते हैं, और जिन्होंने घट का भेद और सच्चे मालिक का पता और निशान राधास्वामी मत का उपदेश लेकर मालूम कर लिया है, और उस सच्चे मालिक की सच्ची सरन हिरदे से दृढ़ कर ले ली है, उनको, किस क़दर आसानी के साथ मदद हर वक़्त अपने घट में कुल्ल मालिक की दया से मिल सकती है ? और सुख-दुख की हालत में, किस क़दर शान्ति और ताक़त अपने अंतर में जब चाहें जब हासिल कर सकते हैं ?

१५—जब कोई सख़्त तकलीफ़ या चिन्ता पैदा होती है, उस वक़्त कोई जीव किसी की मदद नहीं कर सकता, और न धन और सम्पत्ति और न हुकूमत कुछ काम दे सकती है। ऐसे कष्ट के समय में, सिर्फ़ सच्चा मालिक ही अपनी दया से कष्ट निवारण कर सकता है। सो उस कुल्ल-मालिक का पता और भेद और निशान किसी मत में खोल कर नहीं बयान किया है कि जिसको समझ कर, जीव, दुख की हालत में, उस मालिक के चरणों में इस तौर से बिनती और प्रार्थना करे कि जिसकी ख़बर चरनों तक पहुँच सके, और वहाँ से दया आवे और उससे थोड़ी, बहुत शान्ति उस वक़्त हासिल होवे।

१६—यह भेद सिर्फ़ राधास्वामी मत में खोल कर समझाया जाता है, बल्कि जीव का, इसके पिंड में बैठक के स्थान से कुल्ल-मालिक के चरनों तक, सूत लगा दिया जाता है, और कुल्ल-मालिक के धाम का निशाना और वहाँ तक अपने मन और सुरत के पहुँचाने की जुगत बतला दी जाती है, कि जिससे जब यह चाहे, उसी वक़्त अपने मन और सुरत की धार को चरनों से जोड़ सकता है, बल्कि निज धाम तक कुछ रसाई हासिल कर सकता है। और इस कार्रवाई का उसी वक़्त फ़ायदा मालूम कर सकता है, यानी किसी क़दर, ताक़त और शान्ति और सरूर और आनन्द को प्राप्त हो सकता है। यह किस क़दर

भारी फ़ायदा है कि किसी को दुनिया भर में, सिवाय सच्चे और प्रेमी परमार्थी के, जो कि राधास्वमी मत के भेद और अभ्यास से वाक़िफ है, और चरन-सरन दृढ़ करके उसकी कमाई कर रहा है, हासिल नहीं है ।

१७–अब इस बात को समझ कर, जीवों को इख़्तियार है कि अपने हाल और आइन्दा के फ़ायदे के वास्ते, चाहे राधास्वामी मत के उपदेश को अंगीकार करें या नहीं । यह काम जब्र या ज़बरदस्ती या झूठे लालच और आसा से नहीं बन सकता । लेकिन जो कोई कि सच्चा परमार्थी है यानी जिसके मन में सच्चे मालिक के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत हैं, चाहे वह थोड़ी होवे, वह इस अभ्यास को आहिस्ता २ करके, उससे ऊपर का लिखा हुआ फ़ायदा उठा सकेगा, और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया को, अपने हर काम में, अंतर और बाहर, और परमार्थ और स्वार्थ में दिन-दिन परखता जावेगा, और तब अपने भागों को सराह कर राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्चा शुकराना अदा करके, दिन दिन प्रीत और प्रतीत बढ़ाता जावेगा, और एक दिन, निज धाम में पहुँच कर, दुख-सुख यानी माया के देश से न्यारा होकर, हमेशा के वास्ते परम आनन्द को प्राप्त होगा ।

———

बचन २१

वर्णन रौशन और अँधेरी किरनियों का जो कि पिंड और ब्रह्मांड की रचना में चैतन्य और जड़ की प्रकट अंस हैं, और उपदेश वास्ते पहुँचने निर्मल चैतन्य यानी हमेशा के नूरानी देश में, जहाँ अँधेरा यानी काल और माया बिल्कुल नहीं हैं

१–इस रचना में दो पदार्थ हैं, एक चैतन्य और दूसरा जड़। चैतन्य का ज़हूरा रोशन किरनियाँ हैं। ज़ड़ का, अँधेरी किरनियाँ।

२–जो कि यहाँ की रचना स्थूल है और जड़ चैतन्य की मिलौनी से हुई है, इस वास्ते यहाँ रोशनी और अंधेरा दोनों मिलकर कार्रवाई कर रहे हैं, यानी कभी रोशनी होती है और कभी अंधेरा हो जाता है।

३–अंधेरा, काल स्वरूप है और इसमें हमेशा भूल और भरम पैदा होते हैं। इस सबब से, यहाँ परमार्थ की निस्बत जो कि रोशनी रूप है, भूल और भरम का बहुत ग़लबा रहता है, यानी परमार्थी बात जल्दी भूल जाती है और परमार्थी कार्रवाई में अनेक तरह के संशय और भरम पैदा होते हैं कि जिसके सबब से, कोई जीव, सच्चे मालिक

की पहचान या उसके चरणों में पहुँचने का जतन दुरुस्ती के साथ नहीं कर सकता है।

४–जिस किसी को, भाग से, संत सतगुरू का सतसंग मिल जावे, तो उसके सब संशय और भरम दूर होकर सच्चे मालिक के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत पैदा होकर, दिन २ बढ़ सकती है, और वही प्रीत और प्रतीत एक दिन, उस अभ्यासी को, परम आनन्द देश में, सच्चे मालिक के सन्मुख पहुँचा कर, हमेशा को जनम-मरन से रहित कर देगी।

५–इस वास्ते, हर एक आदमी को, औरत होवे या मर्द, चाहिये कि अँधेरे और उजेले की मिलौनी के स्थान से, जहाँ कि भूल और भरम की कसरत है, हट कर, जिस क़दर जल्द मुमकिन होवे, निज रोशनी यानी महा विशेष चैतन्य के धाम में पहुँचने का जतन, शौक़ और प्रेम के साथ, अपने घट में करे। और जो ऐसा नहीं करेगा, तो वह हमेशा के वास्ते अँधेरे के मुक़ाम में, जहाँ रोशनी यानी चैतन्य की धार बहुत कम है, पड़ा रहेगा, और नीच-ऊँच जोनों में जनम-मरन का कष्ट सहता रहेगा, और दिन २ ज़्यादा अंधेरे के देश में उसका उतार होता जावेगा और अज्ञान यानी नादानी और कष्ट और क्लेश बढ़ते जावेंगे।

६–इस अंधेरे के देश को छोड़ कर, ऊपर की तरफ़,

यानी नूरानी देश में जाने के वास्ते सिर्फ़ एक ही सच्चा और सहज और क़ुदरती जतन मुक़र्रर है, और वह यह है कि रोशनी की धार को जो कि चैतन्य की धार है, पकड़ कर, ऊँचे देश की तरफ चलना शुरू करे। वह रोशनी और चैतन्य की धार, शब्द और रूह यानी जान और अमृत की धार है। सो धुन की डोर पकड़ कर, जहाँ से कि शब्द या नूर या जान की धार आती है, उलट कर, अपने घट में चलना और चढ़ना चाहिये।

७—जो कोई यह कहे कि हम रोशनी की धार को पकड़ कर, स्वरूप के आसरे, निर्मल-चेतन्य देश में पहुंच जावेंगे, यह बात मुमकिन नहीं है। इस तरकीब के साथ सिर्फ़ एक दर्जा तै होवेगा, लेकिन जब भारी रोशनी नज़र आवेगी, तब उसके मंडल से गुज़रना मुश्किल या ना-मुमकिन हो जावेगा। और रोशनी में बहुत दरजे हैं, यानी माया के घेर में (जिसमें पिंड और ब्रह्माण्ड शामिल हैं), ब-सबब मिलौनी माया के, कमी-बेशी होती चली गई है। सो इन दरजों को तै करके, निर्मल चैतन्य देश यानी हमेशा के नूरानी स्थान में पहुँचना, जहाँ अँधेरी किरनें और माया का ग़ुबार बिलकुल नहीं हैं, बग़ैर भेद रास्ता और स्थानों के स्वरूप के, और मदद शब्द के अभ्यास के, ना-मुमकिन है।

८—निर्मल-चैतन्य देश हमेशा नूरानी है। वहाँ स्याही यानी अंधेरो अथवा काल और माया का ग़ुबार बिलकुल नहीं

है। वह नूर और रोशनी सेत रंग है। उस सेत का वर्णन कुछ नहीं हो सकता है, और न इस लफ़्ज़ के कहने से किसी की समझ में उस सेत की क़ैफ़ियत आ सकती है।

६-महा निर्मल चैतन्य देश में रंग, रूप, और रेखा नहीं है। सिर्फ़ नूर ही नूर है। और सत्तलोक से नीचे के देश में नूर थोड़ी-बहुत स्याही यानी अंधेरी किरनों से मिला हुआ है।

१०-जितने रंग हैं, सब ब्रह्माण्ड और पिंड देश, यानी दूसरे और तीसरे दरजे में रचना के हैं, और यह चैतन्य और माया यानी नूरानी और अँधेरी किरनों की मिलौनी से ज़ाहिर हुए। पहिले, लाल रंग, और फिर पीला रंग, और फिर नीला यानी श्याम रंग, और यही रंग तीनों गुन सतोगुन, रजोगुन और तमोगुन के हैं। और बाक़ी के रंग इन तीनों की कमी और बेशी और मिलौनी से ज़ाहिर हुए। इस देश में जो सेत रंग है, वह किसी क़दर निर्मल है, पर थोड़ी सी श्याम किरनियाँ उसमें भी मिली हुई हैं। और सब रंग इसी से प्रकट हुए।

११-रोशनी यानो नूर का इस कदर तेज है कि इसके आसरे चलना और चढ़ना मुश्किल है, और अजान अभ्यासी को इसके दरजे और क़ैफ़ियत की पहिचान करना भा मुमकिन नहीं है। लेकिन शब्द की धार को पकड़ कर, सहज २ अभ्यासी चल सकता है और रोशनी

के मैदानों और स्थानों को पार कर सकता है।

१२–अब ख़्याल करो कि अँधेरा यानी श्याम रंग और श्याम किरनें, काल और माया का ज़हूरा हैं। सो जहाँ तक कि अभ्यासी को अंधेरा और उजाला मिले, या जहाँ तक कि श्याम रंग या अंधेरा, थोड़ा या बहुत, नज़र आवे, वहाँ न ठहरे, और अपना अभ्यास जारी रख कर, ऊँचे देश की तरफ़ अपनी चाल, शब्द और स्वरूप के आसरे, जारी रखे। यह स्वरूप हर एक स्थान पर, सुरत के उतार के वक़्त, क़ुदरती रचा गया है और जब तक कि उस मंडल की रचना क़ायम है, बराबर क़ायम रहेगा।

१३–पिंड देश, यानी तीसरे दरजे में, प्रलय के वक़्त रचना का अभाव यानी सिमटाव हो जाता है, और महा प्रलय का असर जो कभी २ होती है, ब्रह्माण्ड तक पहुँचता है। महा सुन्न के परे किसी क़िस्म की प्रलय का असर नहीं पहुँचता, यानी उसके ऊपर जो कुछ कि रचना है, वह अव्वल दरजे, यानी निर्मल चैतन्य देश में शामिल है, और सदा एक रस क़ायम रहती है, और वही देश संतों का है, जहाँ काल कलेश और जनम मरन नहीं है।

१४–अंधेरे का ख़वास है कि वह नूरानी किरनों को निगल जाता है। इसी तरह काला कपड़ा या कम्बल, रोशनी या बिजली की धार को खींचता है, यानी अपने

में जल्द जज़्ब कर लेता है या समा लेता है

१५–सुरत-चैतन्य नूरानी है और काल, अँधेरा रूप है। इस वास्ते अपनी हद्द में यह हमेशा उसको निगलता-उगलता रहता है। अपना रूप उसको नहीं बना सकता। यानी सुरत का, और अंधेरे या काल का जौहर एक नहीं है, और न यह दोनों आपस में तद्‌रूप होकर मिल सकते हैं। पर, अंधेरा सुरत को अपने पेट में धर लेता है। इसी सबब से रचना के तीसरे दरजे में, जहाँ काल और माया का बहुत ज़ोर है, जनम-मरन जल्द होता है, और जीवों को दुख और कलेश भी ज़्यादा है, क्योंकि अमृत रूपी नूरानी किरनें यहाँ बहुत कम हैं, और अंधेरी यानी ज़हरीली किरनियाँ बहुत हैं। और ये हमेशा नूरानी किरनियों का आवरण यानी ग़िलाफ़ हो जाती हैं।

१६–संहार शक्ति काल का ख़वास है, यानी हर एक चीज़ को सूरत को बदल देना, या बिगाड़ देना, और स्वरूप उसका भयानक है। असल में सुरत को काल कुछ नुक़सान नहीं पहुँचा सकता, पर उसके खोल यानी देह को खा जाता है, क्योंकि वह उसी मसाले का बना हुआ है। इस सबब से सुरत हमेशा काल से डरती रहती है और यह आम बात है कि अँधेरे में सब को डर लगता है। इस सबब से, जब तक कि सुरत अँधेरे के स्थान से, यानी काल की हद्द से बाहर न होगी, और संतों के हमेशा के नूरानी

देश में नहीं पहुँचेगी, तब तक काल से निर्भय नहीं होगी, यानी जनम-मरन को ख़ौफ, काल की हद्द में, बराबर लगा रहेगा।

१७–संतों ने, और ख़ास कर परम पुरुष राधास्वामी दयाल ने, मुफ़स्सिल भेद काल और दयाल का मय उसकी हद्द के बयान किया है। काल की हद्द में जितने स्थान हैं, वे सब प्रलय या महा प्रलय के समय जरूर सिमट जावेंगे, यानी उनकी रचना को अभाव हो जावेगा। इस वास्ते लाज़िम हुआ कि काल की हद्द के पार, ज़रूर जैसे बनें तैसे, हर एक जीव को जाना चाहिए, नहीं तो जनम-मरन नहीं छूटेगा, और नीचे के देश में सुरत सर-गरदाँ और परेशान भरमती रहेगी, और कहीं विश्राम या सच्चा चैन नहीं मिलेगा।

१७–इस वास्ते, राधास्वामी दयाल के मत में शामिल होकर, भेद काल और दयाल देश का लेकर, जिस कदर स्थान कि काल देश में हैं, वहाँ से अभ्यास करके, पार होकर, दयाल देश में पहुँचना, और वहाँ राधास्वामी धाम में विश्राम करना चाहिए। तब कारज पूरा बनेगा, यानी तब सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ति हासिल होगी।

शब्द १२, बचन ४१, सार बचन छंद बंद

निरखो री कोई उठ कर पिछली रतियाँ ॥टेक॥

माया छलन तरंग मन रोकन, घट में कँवल खिलतियाँ ॥ १ ॥

अर्थ--पिछली चार घड़ी पहिले सूरज के निकलने से, सुबह तक, रात के वक़्त, अभ्यास करने से, माया को छलने, और मन की तरंग रोकने की किसी क़द्र ताक़त आवेगी, और घट में कँवल का भी दर्शन होगा।

सीतल सागर मीन मरम जस, न्हावत मल मल गतियाँ ॥ २ ॥

अर्थ--तब सुरत मछली की तरह सीतल सागर में स्नान करके सफ़ाई हासिल करेगी।

सिला उठाय कँवल दल फोड़त, तोड़त द्वार सुनत जहाँ बतियाँ ॥ ३ ॥

अर्थ--पहिले परदे को उठा कर और श्याम कँवल का दल फोड़ कर, यानी तीसरे तिल के अंदर सुरत ने धंस कर शब्द की आवाज़ सुनो।

चमक जोत धारा धुन झकियाँ, मन माया कूटत जहाँ छतियाँ ॥ ४ ॥

अर्थ--जोत की चमक और वहाँ की धुन की धार मालूम हुई, और मन और माया वहाँ पर छाती कूटने लगे कि यह अभ्यासी सुरत, हमारी हद्द से निकल गई।

हरख हरख धावत पद उत्तम, तम संसार सकल बिनसतियां ॥ ५ ॥

अर्थ--और खुश होकर सुरत वहाँ से आगे को बढ़ती चली और संसार यानी तिलोकी की माया का अँधेरा दूर हुआ।

मौज निहार पुरुष घर पावत, धावत सुरत निरतियाँ ॥ ६ ॥

अर्थ–राधास्वामी दयाल की मौज के अनुसार, सुरत और निरत, सत्तलोक की तरफ़ को दौड़ने लगीं ।

पीवत अमी झकोल कँवल पद, केल करत सत मतियां ॥ ७ ॥

अर्थ–सुरत, ऊपर को चढ़ कर और दसवें द्वार में अमी का रस लेती हुई, और वहाँ से आगे बढ़ कर, सत्त शब्द के साथ बिलास करती हुई चलती है ।

को कह सके नाम की महिमा, संत बतावत जो गत पतियाँ ॥ ८ ॥

अर्थ–संत के नाम की महिमा कोई नहीं कर सकता है। वे आपही उसकी गत और पत वर्णन करते हैं ।

राधास्वामी कहत सुनाई, मूल मिलो चढ़ हटियां ॥ ९ ॥

अर्थ–राधास्वामी दयाल समझा कर फ़रमाते हैं कि मूल पद से मिलना चाहिए, रास्ते के मुक़ामात तै करके ।

बचन २२

चैतन्य को विशेश चैतन्य और महा चैतन्य से मेल करना चाहिए, न कि सामान्य चैतन्य और जड़ से

कड़ी नम्बर ४, शब्द १०, बचन नम्बर १४
पोथी सार बचन छंद बंद

"तू चेतन यह जड़ सब मिथ्या क्यों कर मेल मिलानी"

१–इस लोक की रचना में मनुष्य सबसे श्रेष्ठ और विशेष चैतन्य है, और हरचंद थोड़े फ़ायदे या कुछ काम लेने के लिए, अपने से कम चैतन्य वालों से व्यवहार या बर्ताव करता है, पर चाह उसकी हमेशा यही रहती है कि अपने से बढ़ कर या बराबर वालों से व्यवहार और बर्ताव करे। बल्कि जो कोई सबसे बढ़ कर है, उससे मिलने और वर्ताव करने की चाह सब के मन में बहुत ज़बर बनी रहती है।

२–कुल्ल मनुष्य अपने से कम के साथ मिलना और बर्ताव करना सिर्फ़ कोई काम लेने या कुछ धन और पदार्थ के फ़ायदे के लिये करते हैं, जैसे चौपायों के साथ, दूध पीने और सवारी लेने या बोझा लादने या और कोई मेहनत और मशक़्क़त का काम लेने की नज़र से, बर्तावा किया जाता है। और इसी तरह परिन्दों को उनकी ख़ूबसूरती देखने या ख़ुश आवाज़ सुनने या और कोई क़िस्म का खेल या उनकी आपस में लड़ाई का तमाशा देखने के लिये पालते हैं, और ऐसे ही कीड़े-मकोड़े वग़ैरा भी, वास्ते तमाशा दिखाने या उनकी ख़ूबसूरती देखने और दिखाने की नज़र से पकड़ कर रक्खे जाते हैं और फल

और फूल वाले और उम्दा लकड़ी के दरख़्तों की परवरिश और निगहबानी, फल खाने, और ख़ुशबू लेने, और ख़ूबसूरती देखने, और लकड़ी काम में लाने के लिए की जाती है, और अनेक जड़-पदार्थों की और उनके खानों की निगहबानी और हिफ़ाज़त यानी रक्षा, उनकी पैदावार को अपने काम में लाने और बेच कर उससे धन पैदा करने की नज़र से की जाती है।

३–ख़ुलासा यह है कि जितने चैतन्य यानी जानदारों और जड़ पदार्थों से, जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया, जो कोई मनुष्य मेल करता है, वह सिर्फ़ कुछ काम लेने या धन पैदा करने के निमित्त है। और जितना जिससे फ़ायदा होता है, उसी क़दर उसके पालन या निगहदाश्त में तवज्जह और धन ख़र्च करता है। इससे ज़्यादा मेल करने की ख़्वाहिश या और किसी किस्म की आसा उन जानवरों या जड़-पदार्थों से नाहीं रखता।

४–लेकिन जो कोई आदमी, कोई खास गुन या जौहर रखता है, या किसी गुन में सबसे ज़बर है, या विशेष धनवान या हुकूमतवान या अमीर या राजा है, या विशेष ख़ूबसूरत है, तो उसके देखने और उससे मिलने की चाह सब मनुष्यों के दिलों में पैदा होती है, और ऐसों से मिल कर निहायत ख़ुशी दिल

में पैदा होती है और अपनी ख़ुश-नसीबी समझी जाती है, और ख़ास कर राजों और अमीरों से मिल कर अपने तईं बड़ा आदमी ख़्याल करते हैं, और इस मेल के हासिल करने के वास्ते तन, मन, धन उमंग के साथ ख़र्च करते हैं।

५—जो कुछ कि ऊपर लिखा गया है, यह सब दुनियवी कार्रवाई में दाख़िल है और जो कुछ कि इस में फ़ायदा या ख़ुशी हासिल होती है, वह भी दुनियवी है। और मालूम होवे कि दुनिया के दुनिया के जितने फ़ायदे या ख़ुशी के काम हैं, वे सब परमार्थ के मुक़ाबले में तुच्छ और नाशमान हैं।

६—परमार्थी लाभ, यानी फ़ायदा, और परमार्थी ख़ुशी का इस क़दर भारी दरजा है कि जिस किसी को यह सच्चा २ और पूरा हासिल होवे, तो फिर उसको किसी चीज़ की चाह बाक़ी नहीं रहेगी, और सब रस और ख़ुशी और सुख दुनिया के, उसकी नज़र में, फीके मालूम होंगे। और वह मर्तबा और दरजा सच्चे और पूरे परमार्थी को हासिल होता है कि जिसकी बराबरी कुल्ल रचना में कोई नहीं कर सकता, यानी न तो इस लोक के भोग, बिलास और पदार्थ और राज और हुकुमत वग़ैरा सच्चे परमार्थी को लुभा सकते हैं और न ऊँचे लोकों के भोग और राज उसकी तवज्जह को अपनी तरफ़ खींच सकते हैं।

७—सच्चा और पूरा परमार्थी नाम, सच्चे और कुल्ल

मालिक के आशिक़ यानी भक्त का है। सो उसकी नज़र में सिवाय अपने प्रीतम कुल्ल मालिक के दूसरा नहीं ठहर सकता। वह भक्त अपने माशूक़ सच्चे मालिक के सिवाय, दूसरे से मिलना या प्रीत-भाव का बर्ताव करना भी नहीं चाहता, क्यों कि इस लायक उसकी नज़र में सिवाय सच्चे गुरू के, जिनकी मेहर और मदद से अपने प्रीतम का भेद और निशान और उससे मिलने का रास्ता और तरीक़ा मालूम हुआ है, और कोई नहीं मालूम होता। इस वास्ते उसकी प्रीत पहले सतगुरू में, और फिर, सच्चे मालिक में, जो सतगुरु का निज रूप है, क़ायम होती है, और दिन २ बढ़ती जाती है, जब तक कि निज धाम में पहुँच कर सच्चे मालिक का दर्शन न पावे, और वहाँ पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होता है, और जहाँ किसी क़िस्म का कष्ट और क्लेश और दुख और धन्धा और चिन्ता और फ़िकर का नाम और निशान भी नहीं है, ऐसा भारी फल सच्चे परमार्थी को सच्चे परमार्थ की कमाई से मिलता है।

८—अब ख़्याल करो कि दुनिया में कोई मनुष्य किसी से नहीं मिलता है, जब तक कि थोड़ा-बहुत अपना फ़ायदा और काम निकलता न देखे और न अपना तन, मन, धन वहाँ खर्च करता है। तो फिर किस क़द्र अचरज और अफ़सोस की बात है कि परमार्थ के हासिल करने के वास्ते जीव, जड़ पदार्थों के सन्मुख दीन होवें, या वहाँ तन, मन, धन

लगावें, जैसे धातु या पाषाण की बनी हुई मूर्त्ति या पिछले महात्माओं के किसी निशान या पोथी और ग्रन्थ या मकान या दरिया वग़ैरा की यात्रा और पूजा करना या कोई दरख़्त या किसी और जानदार को (जो कि मनुष्य से बहुत नीचे दरजे पर हैं) परमार्थी फ़ायदा उठाने की नज़र से बड़ा मान कर उसकी पूजा या यात्रा करना ?

९–जब कि कुल्ल दुनिया में लोग अपने से बड़े के मिलने की चाह रखते हैं, और उसके लिये मेहनत और जतन बल्कि रुपये ख़र्च करते हैं, फिर परमार्थ में कुल्ल मालिक से मिलने और उसको प्रसन्न करने की चाह ज़बर मन में होनी चाहिये। किस तरह लोग जड़ यानी बेजान चीज़ों या जानवरों की पूजा करना पसन्द करते हैं कि जहाँ से कोई क़िस्म का जवाब रज़ामन्दी या ग़ैर-रज़ामन्दी का नहीं मिल सकता है, और न किसी तरह की हिदायत या उपदेश निस्बत कार्रवाई के होना मुमकिन है ?

१०–यह चाल आम तौर पर सब क़ौमों और मुल्कों में जारी है, और कोई भी इस चाल को ना-पसंद नहीं करता या यह कि उसको ना-मुनासिब नहीं कहता, बल्कि और उसके जारी रहने में मदद देते हैं।

११–इससे मालूम होता है कि आम तौर पर जीवों के दिल में सच्चे और कुल्ल मालिक के मिलने की सच्ची

चाह नहीं है और जो कुछ कि लोग कारवाई करते नज़र आते हैं, वे या तो पैरवी ख़ानदानी रसम की है या यह कि ऐसा ख़ौफ़ दिल में पैदा हुआ है कि पुरानी रसम के मौक़ूफ़ करने में दुनियावी नुक़सान या किसी तरह का हर्ज न हो जावे।

१२–बल्कि बहुत सी क़ौमों और मुल्कों में ऐसा ख़्याल जम गया है कि सच्चे मालिक को कोई जान और पहिचान नहीं सकता, और न उसके चरनों तक किसी की पहुँच हो सकती है। इस वास्ते सब की तवज्जह का झुकाव कर्म और धर्म की तरफ़ या जीवों के उपकार के कामों में हो गया है, और मालिक का खोज और उसके मिलने के रास्ते की तलाश किसी क़दर बंद हो गई।

१३–और जो किसी क़ौम में भेद और मुक़ाम मालिक का ज़ाहिर किया है, तो उसके मिलने का रास्ता और जुगत ऐसी कठिन और ख़तरनाक बयान की है कि जिसकी कारवाई गृहस्थियों से ना-मुमकिन और विरक्तों से निहायत मुश्किल नज़र आती है–जैसे प्राणों का रोकना और चढ़ाना वग़ैरा। इस सबब से भी आम तौर पर खोज और तलाश सच्चे मालिक और उसके मिलने के तरीक़े का बंद हो गया।

१४–इस वास्ते, बजाय सच्चे मालिक के, औतारों

और महात्माओं और पैग़म्बरों और वलियों के निशान और मकान और तसवीरों और नक़ल वग़ैरा की पूजा सब देशों में जारी हो गई, और आम लोग उतनी ही ज़ाहिरी कार्रवाई करके तृप्त हो गये ।

१५-पर जो कोई कि सच्चा खोजी है, और दर्द परमार्थ का, यानी शौक़ मिलने अपने मालिक का मन में रखता है, और इस दुनिया के हाल और चाल को देख कर, चित्त उसका उदास हुआ है, वह कभी इस क़िस्म की पूजाओं में, जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया, राज़ी नहीं होगा, और जो कुछ कि कार्रवाई परमार्थ की, उसको करनी मंजूर होगी, वह चैतन्य पुरुष की, जो परमार्थ में अपने से बढ़कर होगा, करेगा और वहाँ से उपदेश और हिदायत लेता हुआ, अपना काम बनावेगा, यानी रास्ता तै करके, एक दिन, सच्चे मालिक के दरबार में पहुँच कर अपना जनम सुफल करेगा ।

१६-जो इस क़िस्म के सच्चे परमार्थी जीव हैं, उन्हीं के वास्ते यह बचन कहा गया है । और जो कि भूल या भर्म या अनजानता के सबब से आम लोगों के साथ परमार्थी कार्रवाई में शामिल हो गये हैं, पर जिनके मन में सच्चा दर्द है, वे भी सच्चे अधिकारी हैं, वे इस बचन को सुन कर, ग़फ़लत की नींद से जाग उठेंगे, और सच्चे परमार्थ

का तरीक़ा और चाल दरियाफ़्त करके, उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई शुरू करेंगे। इन्हीं जीवों से यह कहा जाता है कि अपने से बढ़ कर चैतन्य-पुरुष ढूँढो, और वह चैतन्य-पुरुष, वक़्त के सच्चे गुरु हैं। उनका सतसंग करके महा चैतन्य पुरुष का जो कि कुल्ल मालिक है, पता और भेद लेकर उसकी प्राप्ति का जतन शुरू कर दो, और कुल्ल मालिक और सतगुरु की मेहर और दया को, अपने अन्तर और बाहर परखते हुए, और प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ाते हुए, रास्ता तै करते जाओ रफ़्ता २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा

१७–और उन्हीं सच्चे परमार्थी जीवों को यह समझाया जाता है कि तुम चैतन्य हो, और महा चैतन्य पुरुष अविनाशी की अंस हो, यानी उसका और तुम्हारा जौहर एक ही है, और माया के रचे हुए भोग और परमार्थ, जिनका रस इन्द्रियों के वसीले से लेते हो, सब जड़ हैं और नाशमान, फिर तुम्हारा उनसे असली मेल नहीं है। इस वास्ते उनमें अपना बर्ताव होशियारी के साथ रक्खो।

१८–उन भोगों से देह और इन्द्रिय और किसी क़दर मन को अहार यानी ताक़त मिलती है, पर सुरत यानी रूह को उनसे कुछ मदद या फ़ायदा हासिल नहीं होता, बल्कि जो कोई ज़्यादातर बर्ताव इन भोगों में करेगा,

तो उसकी सुरत और मन शिथिल और गदले हो जावेंगे, यानी उनकी सफ़ाई में बहुत खलल पड़ जावेगा, और सुस्ती और तमोगुण यानी माया का नशा दिन-दिन बढ़ता जावेगा, और नतीजा उसका यह होगा कि वह शख़्स नीचे के दरजे की रचना में गिरता जावेगा।

१६–इस वास्ते, कुल्ल मालिक दयाल और संत सतगुरु अपने सच्चे परमार्थी जीवों को, यानी प्रेमी जन और भक्तों को होशियार करते हैं कि तुम चैतन्य हो, और महा चैतन्य कुल्ल मालिक की अंस हो, सो तुमको चाहिये कि अपने माता-पिता महा चैतन्य से नाता जोड़ो, और गहरा मेल पैदा करो, यहाँ तक कि उसके धाम यानी निर्मल चैतन्य और निर्माया देश में पहुँच कर, उसके दर्शनों का बिलास और आनन्द हासिल करो।

२०–और जड़-पदार्थों यानी माया-रचित भोगों से दिन २ अपनी तवज्जह हटाते जाओ, और सिर्फ़ ज़रूरत-मात्र उनमें बर्ताव रक्खो, यानी इस क़दर कि जिसमें औसत दरजे पर देह का गुज़ारा हो जावे, और फ़ज़ूलियों को जिस क़दर बन सके, कम और दूर करते जाओ।

२१–सिवाय सच्चे परमार्थी जीवों के, बाक़ी कुल्ल जीवों को जो थोड़ा-बहुत भी सोच और विचार करके अपने नफ़े और नुक़सान की कार्रवाई की जाँच कर सकते हैं,

कहा जाता है कि जब कि तुम सब कामों में अपना नफ़ा और फ़ायदा सरीह देख कर कार्रवाई करते हो, और हमेशा अपने से बढ़कर, बल्कि सबसे बढ़कर लोगों से मेल और बर्ताव करना चाहते हो, तो फिर परमार्थी कामों में क्यों ऐसी बे-परवाही और ढीलम-ढाल के तौर पर कार्रवाई करते हो कि ज़रा भी अपना नफ़ा, हाल या आइन्दा का, नहीं देखते, और अन्धाधुन्ध नादानों साथ के शामिल होकर अपना तन, मन, धन फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा खर्च करते हो ?

२२–तुम को मुनासिब है कि ऐसे का संग करो कि जिस के दर्शन और बचन से तुम्हारे मन और बुद्धि साफ़ होवें, और हिरदे की आँख दिन २ खुलती जावे, कि जिससे असली हाल और कैफ़ियत इस दुनिया की, और भी बड़ाई और भारी नफ़ा सच्चे परमार्थ का, नज़र में आता जावे, और सत्य वस्तु को ग्रहण करते जाओ, और धोखा देने वाले और नाशमान पदार्थों से हटते जाओ, कि जिससे अख़ीर वक़्त पर पछताना न पड़े, क्योंकि उस वक़्त का अफ़सोस कुछ फ़ायदा न देगा। जो कुछ बने, इसी जिंदगी में बनाओ, बल्कि जवानी के वक़्त से, कार्रवाई सच्चे परमार्थ की, शुरू कर दो, और बुढ़ापे के वक़्त, इसी जिंदगी में उसका फल थोड़ा-बहुत देख लो, जिससे अपने मरने

के पीछे के फ़ायदे का हाल जीते-जी मालूम हो जावे और कोई संदेह बाक़ी न रहे।

२३—यह बचन संत सतगुरु दया करके सुनाते हैं। जिनका जल्द उद्धार होने वाला है, वे इसको शौक़ और ख़ुशी के साथ मानेंगे, और जिनका अभी चक्कर जनम-मरन का बाक़ी है, वे नहीं मानेंगे। पर उनके हिरदे में भी बीजा सच्चे परमार्थ का पड़ जावेगा और आइंदा किसी वक़्त पर, शाख़ और बर्ग, यानी डाल-पत्ते पैदा करके रफ़्ता २ फूल और फल देगा, यानी वे जीव भी एक दिन सँतों के परमार्थ के भागी हो जावेंगे।

बचन २३

ध्यान में आसानी अभ्यास की, और भजन में किसी क़दर कठिनता का वर्णन

१—अकसर अभ्यासी लोग शिकायत इस बात की करते हैं कि भजन में मन कम लगता है, और गुनावन और ख़्यालात तरह २ के, बहुत उठा करते हैं। सबब इसका यह है कि मन अभी, जैसा चाहिये, साफ़ नहीं हुआ है, यानी उसमें दुनिया की ख़्वाहिशें, अनेक तरह के भोगों

की, धरी हुई हैं। जब भजन में बैठ कर तवज्जह शब्द की धार की तरफ़, जो ऊपर से नीचे को उतरती है, की जाती है, उस वक़्त जो ख़्यालात या चाहें ज़बर हैं, उन्हीं की गुनावन पैदा होती है, और उस गुनावन के साथ, सुरत की धार, बजाय आवाज़ को पकड़ कर ऊपर की तरफ़ चढ़ने के, ज़बर तरंग के साथ, नीचे को उतर आती है, और उस ख़्याल में इस क़दर लिपट जाती है कि अभ्यासी को अक्सर ख़बर भी नहीं रहती कि मैं क्या कर रहा हूँ।

२–इलाज उसका यह है कि सतसंग चेत कर करे, और बचनों को विचार कर सोचे, और समझे, और मन में से फ़िज़ूल ख़्वाहिशें भोग-बिलास की घटाता और हटाता जावे, और सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों की प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाता जावे। जिस क़दर शौक़ तरक़्क़ी अभ्यास और प्राप्ति दर्शन का, बढ़ता जावेगा, और संसार और भोगों की तरफ़ से तबीयत किसी क़दर हटती जावेगी, उसी क़दर सफ़ाई मन और सुरत की होती जावेगी, और जब वक़्त अभ्यास के, माया और काल, मन और सुरत को अपनी तरफ़, भोगों का ललचाव देकर खींचेंगे, तो निर्मल मन और निर्मल सुरत उस वक़्त होशियार होकर भोगों की तरंग और ख़्यालों को हटा कर, ब-दस्तूर अपनी तवज्जह शब्द की धुन में रख कर, चढ़ते रहेंगे।

३–जो कि ऐसी सफ़ाई के हासिल होने के लिये, यानी मन से ख़्वाहिश भोगों की घटने या दूर होने के वास्ते, निरन्तर यानी बराबर अभ्यास शौक़ के साथ, कुछ अर्से तक, करना ज़रूर है और फिर भी कोई न कोई इन्द्रिय या पाँचों में से कोई न कोई दूत थोड़ा-बहुत ज़बर बना रहता है, और ज़ोर उसका आहिस्ता २ बहुत देर में घटता है। इस वास्ते मुनासिब और बेहतर मालूम होता है कि अभ्यासी, ऐसी हालत में कि जब भजन के वक़्त तरंगें काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार वग़ैरा, या किसी इन्द्रिय के विषय की ज़बर, उठती होवें, तब अभ्यासी ध्यान पर ज़्यादा ज़ोर देवे, यानी उसको ज़्यादा अर्से तक करे, और भजन थोड़ी देर। यानी जिस क़दर थोड़ी-बहुत सफ़ाई के साथ बन पड़े, उतना ही करे, और बाक़ी वक़्त अपने अभ्यास का, सुमिरन और ध्यान में लगावे।

४–भजन के अभ्यास में मन और सुरत को, शब्द की धार के आसरे, जो ऊपर से नीचे को आती है, चढ़ाना पड़ता है। और इस सबब से जब कोई तरंग उठती है, और उसका रुख़ नीचे की तरफ़ को है, तो शब्द की धार, ज़बर तरंग के साथ, मन और सुरत को नीचे की तरफ़ रुजू होने में मदद देती है, और इस सबब से अभ्यासी को अपनी सम्हाल रखना कठिन हो जाता है।

५–लेकिन, ध्यान के अभ्यास में, जिस क़द्र कि शौक़ और प्रेम है, उसी मुवाफ़िक़ मन और सुरत की धार हिरदे के मुक़ाम से उठ कर, अपने प्रीतम से मिलने, या उसका दर्शन करने, या उनके चरनों को स्पर्श करने के लिए, ऊपर को, उस मुक़ाम की तरफ़ जहाँ कि ध्यान जमाया गया है, चढ़ती है। इस हालत में दूसरी क़िस्म की तरंग का पैदा होना, और नीचे की तरफ़ को उसका झुकाव बन नहीं सकता, जब तक कि अभ्यासी आप ही ध्यान को छोड़ कर दूसरा ख़्याल न उठावे, और जो ऐसा करेगा तो उसका ध्यान और शौक़ प्रीतम से मिलने का, ग़लत हो जावेगा।

६–ख़ुलासा यह कि भजन के समय जो कोई ज़बर ख़्वाहिश मन में धरी हुई है, उसको शब्द की धार जगा देती है और ध्यान के समय शौक़ और प्रेम की धार, जो अभ्यासी के हिरदे से उठती है, वह और ख़्वाहिशों की तरंग को नहीं उठने देती, यानी दबाये और सुलाये रखती है। और जिस क़द्र कि प्रेम ज़्यादा होगा, उसी क़द्र और तरंगें ज़ईफ़ और कमज़ोर होती जावेंगी। इस सबब से ध्यान में, अभ्यासी को आसानी से कार्रवाई करने का मौक़ा मिलता है, और भजन में बग़ैर तीव्र यानी ज़बर बैराग के, भोगों की ज़बर ख़्वाहिश का रोकना और हटना मुश्किल हो जाता है।

७–मतलब यह है कि ध्यान में अभ्यासी जिस क़दर कि प्रेम और शौक़ उसके दिल में है, उसी से थोड़ी-बहुत कार्रवाई, बग़ैर मुक़ाबला बिरोधी ख़्वाहिशों के, कर सकता है, और भजन में विरोधी ख़्वाहिशें जल्द जाग उठती हैं, और ताक़त पैदा करके अभ्यासी के मन और सुरत की धार को जल्द नीचे की तरफ़ गिरा देती हैं।

८–सबब इसका यह है कि शब्द ज़्यादा सफ़ाई चाहता है, और जब तक कि अभ्यासी के मन और सुरत में, भोगों की चाह की मलीनता धरी हुई है, वह उसको फ़ौरन प्रकट करके, मन और सुरत की मलीन धार को नीचे को गिरा देता है, यानी अपने सन्मुख से हटा देता है।

९–और ध्यान में इस क़दर फ़ायदा है कि शौक़ और प्रेम की धार, जो अभ्यासी के हिरदे से उठ कर ऊपर को रवाँ होती है, वह अभ्यासी के मन और सुरत की धार को, जो प्रेम की धार के संग चलती है, निर्मल और साफ़ करती हुई, ऊपर की तरफ़ को खींचती है, और स्वरूप उस प्रेम की धार को ताक़त देता है, और मिलने के शौक़ की धार ऊपर को चढ़ती जाती है, उसी क़दर ऊँचे देश का रस और आनन्द मिलता जाता है। और शान्ति और शीतलता आती-जाती है कि जिसके

सबब से मलीन ख़्वाहिशें कमज़ोर होती जाती हैं, और अभ्यास दिन २ बढ़ता जाता है, यानी एक धाम से दूसरे और दूसरे से तीसरे और इसी तरह सत्तलोक तक ध्यान के वसीले से अभ्यासी अपनी सुरत की धार को गौन अंग करके पहुँचा सकता है।

१०—हरचन्द कि ध्यान में किसी क़द्र आसानी है, पर जो शौक़ चढ़ाई का और स्वरूप में थोड़ा-बहुत प्रेम नहीं है, या सुरत और मन किसी क़द्र ऊँचे चढ़ कर रस और आनन्द नहीं लेते, तो इस अभ्यास में भी गुनावन और ख़्यालात तरह २ के उठते हैं, और जब तक कि अभ्यासी के चित्त में किसी क़द्र सच्चा बैराग दुनिया की तरफ़ से, और सच्चा अनुराग सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और सतगुरु के चरनों में, न होगा, तब तक, उसके सुरत और मन, गुनावन और ख़्यालात के संग लिपट कर नीचे उतर आवेंगे, और ध्यान दुरुस्त नहीं बनेगा और न कुछ रस और आनन्द आवेगा। इस वास्ते हर हालत में थोड़ा-बहुत बैराग भोगों से, और अनुराग चरनों में, ज़रूर दरकार है, तब अभ्यास दुरुस्त बन पड़ेगा और कुछ आनन्द भी प्राप्त होगा और तब आहिस्ता २ तरक़्क़ी भी होती जावेगी, और यह बैराग और अनुराग सतगुरु या साध के संग से आवेगा, और साध से मुराद सच्चे और प्रेमी अभ्यासी से है।

११–ध्यान में इस क़द्र आसानी है कि यह अभ्यास स्वरूप के आसरे किया जाता है, और स्वरूप में प्रेम जल्द आ सकता है, चाहे स्वरूप मुक़ामी है या गुरु का, और ज़ाहिर है कि जिस स्वरूप या जिस चीज़ में प्यार होता है, तो उसकी तरफ़ मन और सुरत की धार जल्द उठ कर रवाँ होती है और भजन में शब्द की धार को पकड़ के शब्दी की तरफ़ चलना बग़ैर सफ़ाई और गहरे प्रेम के, मुश्किल है।

१२–अंतरी यानी मुक़ामी स्वरूप का जब कभी मौज से अभ्यास के वक़्त दर्शन हो जाता है, तो फिर चाहे वह हर रोज़ प्रकट न होवे, उसका ख़्याल करके थोड़ा-बहुत प्यार हिरदे में पैदा हो सकता है, और गुरु स्वरूप का तो साक्षात दर्शन बाहर होता है, तो जो कोई उसका तसव्वुर यानी ध्यान अंतर में करे, और वह कभी २ प्रकट हो जावे, तो उसमें विशेष प्यार जल्द आ सकता है, और जब कभी प्रकट न होवे तो उसका ख़्याल करने से भी (अगर मन में सच्चा प्यार और भाव है) किसी क़द्र प्रेम हिरदे में पैदा हो सकता है। और मालूम होवे कि जो स्वरूप गुरू का अंतर में प्रकट होता है, वह हाड़-माँस का नहीं है, बल्कि ऐन चैतन्य है, क्योंकि चैतन्य मंडल में अंतरजामी पुरुष, अपने प्रेमी और भक्त जन के निमित्त, गुरु स्वरूप का आकार धारन करता है, और वह चैतन्य

आकारी स्वरूप बराबर अभ्यासी के संग, अगुवे के तौर पर, मदद् देता जावेगा, और जिस क़द्र कि अभ्यासी ऊँचे मुक़ाम पर ध्यान करेगा उसी क़द्र वह स्वरूप भी ऊँचे देश में ज़्यादा निर्मल यानी सूक्ष्म और लतीफ़ और ज़्यादा नूरानी होता जावेगा।

१३–खुलासा यह है कि गुरू का आकारी स्वरूप अभ्यासी के संग बराबर सत्तलोक तक रहेगा और रास्ते में मन और सुरत के सिमटाव और चढ़ाई में बराबर मदद् देता जावेगा।

१४–यह गुरू स्वरूप चैतन्य और अविनाशी और देखने में आकार सहित, पर असल में निराकार है, और जो अभ्यासी सेवक का, गुरू स्वरूप में, सच्चा प्यार और भाव है, तो यह स्वरूप हमेशा उसके संग रहेगा, और ज़ाहिर है कि इस स्वरूप के सामने कोई विघ्न मन और माया का ठहर नहीं सकता, बल्कि जब तक कि अभ्यासी के मन और सुरत, इस स्वरूप के ध्यान या ख़्याल में लगे रहेंगे, तब तक दूसरा ख्याल और किसी क़िस्म का पैदा नहीं हो सकता। इस तौर से माया और मन और काल और कर्म के विघ्न ध्यानी अभ्यासी से दूर रहते हैं।

१५–जो सच्चा परमार्थी है, वह जिस वक़्त कि सतसंग में गुरु के सन्मुख जाता है, फ़ौरन उसकी हालत

बदल जाती है यानी दर्शन करते ही प्रेम हिरदे में उमँगता है। और दुनिया के ख्याल उसी वक्त दूर हट जाते हैं। और जिस क़दम देर तक कि गुरू के सन्मुख हाज़िरी रहती है, मन और सुरत दर्शन और बचन में सिमट कर लगे रहते हैं, और अन्तर में आहिस्ता २ उनका खिचाव ऊँची तरफ़ को होता रहता है। फिर जब ऐसा अभ्यासी अपने अन्तर में ध्यान या भजन के समय गुरु स्वरूप का ध्यान या ख़्याल करेगा, तब वही हालत उसकी जो बाहर गुरू के सन्मुख होती है, अन्तर में हो जावेगा, यानी प्रेम उमँगेगा और संसारी ख्याल और चाहें दूर हो जावेंगी। फिर ऐसी हालत में ध्यान का रस और आनन्द निर्विघ्न मिलेगा, और शब्द भी जो कि अन्तर में हर वक़्त मौजूद है, आसानी से प्रकट होकर गुन्जारने लगेगा और उस वक़्त अभ्यासी को इख़्तियार होगा कि चाहे धुन में लग जावे या स्वरूप का रस लेवे, या दोनों कामों, यानी भजन और ध्यान को मिला कर उनका रस लेवे।

१६-संतों के और राधास्वामी दयाल ने ख़ास कर, अपनी बानी में प्रेम पर ज़्यादा जोर दिया है। मतलब उसका यह है कि प्रेम की मदद से काम जल्द और आसानी से बन सकता है, और निरे बैराग से इस क़दर फ़ायदा हासिल नहीं हो सकता और न निरी समझ-बूझ मत की, ऐसा फ़ायदा दे सकती है।

१७–कुल्ल काम दुनिया के शौक़ और मुहब्बत से चल रहे हैं, और जहाँ किसी का शौक़ और प्यार नहीं है, वहाँ उससे कुछ कार्रवाई नहीं हो सकती। इस वास्ते सब जीवों को चाहिए कि सच्चे और पूरे परमार्थ के हासिल करने के लिए, सच्चे मालिक के चरनों में सच्चा प्रेम लावें, और जो कि कुल्ल मालिक अरूप है, और किसी को दर्शन उसका पहले नहीं हो सकता, इस सबब से उसमें प्रेम करना मुश्किल है, लेकिन जो कोई पहले गुरु स्वरूप में प्यार लावे और फिर गुरू के निज स्वरूप से मिलने का जतन करनो शुरू करे, तो उसका प्यार अरूप पद में, आहिस्ता २ पैदा होता और बढ़ता जावेगा, और सच्चे गुरू, उपदेश के वक़्त, उस निज रूप का भेद देंगे, जो कि अकह और अपार और रूप, रंग, रेखा से न्यारा है, और उसका और सेवक का और कुल्ल रचना का वही निज रूप है। तब इस तौर पर भेद को समझ कर, और रास्ते की मंज़िलें और ठेके दरियाफ़्त करके, अभ्यासी चलना शुरू करेगा, और जो प्रेम उसे गुरु स्वरूप में आया है, वही उलट कर, उनके निज स्वरूप में लगता और बढ़ता जावेगा, और इस तरह एक दिन कारज उसका पूरा बन जावेगा।

१८–कुल्ल मतों में जो कि दुनिया में जारी हैं, यही कसर नज़र आती है कि या तो नक़ली और जड़ रूप में मिसल मूरत और तसवीर और निशान और

ग्रन्थ वग़ैरा के अटक गये, और असल का ख़ोज न किया, और या अरूप का थोड़ा-बहुत भेद सुन कर और बुद्धि से समझ कर और आप को वही लक्ष स्वरूप मान कर, तृप्त हो गये, और उस अरूप के देश की ख़बर और मिलने की जुगत न पाकर, इस मायो देश के सामान्य चैतन्य को व्यापक ठहरा कर, उसके साथ एकता कर बैठे, और इस तरह दोनों गिरोह ने भारी धोखा खाया, कि न इधर के हुए, न उधर के। यानी सच्चे मालिक का पता और भेद न पाकर उससे मिलने का जतन न करके परम और अमर आनन्द को प्राप्त न हुए और इस दुनियाँ में भी अपनी मनमुखी करतूत के सबब से सुख और चैन न पाया यानो चौरासी की भरमना न मिटी।

१६—यह लोग गुरु की महिमा ज़बानी करते हैं, और पुराने आचार्य्यों ने अपने ग्रन्थों में साफ़ २ और खोल कर, ज़ोर के साथ लिखी है, पर यह लोग ब-सबब न मिलने सच्चे गुरु के, उस महिमा के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं करते, और इसी सबब से प्रेम से ख़ाली फिरते हैं और सिद्धान्त पद की पहुँच और प्राप्ति नहीं होती।

२०—इख़लाक़ और धर्म और परोपकार और सच बोलने वग़ैरा की चाहे जिस क़दर बड़ाई बयान की जावे, पर उसके मुवाफ़िक़ बर्ताव करना और रहना, बग़ैर अंतरमुख अभ्यास के, कि जिस से मन और सुरत इन्द्रियों

के घाट से हट कर प्रेम और ज्ञान के स्थान पर अन्तर में पहुँचे, किसी सूरत और किसी शख्स से, ज्यों का त्यों मुमकिन नहीं है। एक वक़्त में चाहे जैसा त्याग और बैराग कोई दिखला देवे, पर वह हालत जब तक अंतर में घाट नहीं बदलेगा, कभी एक रस क़ायम नहीं रह सकती। इस वास्ते बजाय धरम और इख़लाक़ और पर-उपकार वग़ैरा पर जोर देने के, मुनासिब है कि वह जतन किया जावे कि जिससे मालिक के चरनों में प्रेम पैदा होवे, और उससे मिलने की चाह, निर्माया देश में, कुल्ल रचना के परे, प्रकट होकर, उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई शुरू की जावे, तो आहिस्ता २ यह गुन भी यानी धरम और इख़लाक़ वग़ैरा, ऐसे अभ्यासी में, आप ही आप बरतने लगेंगे, और प्रेम जो कि कुल्ल रचना की जान है, और महा निर्मल देश में जिसका असली बासा है, प्रकट होकर, कुल्ल सफ़ाई कर देगा, और सब विकारों को हटा देगा और ऐसा प्रेमी निज देश में जो कुल्ल मालिक का धाम है, बासा पाकर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

२१—इस बचन से ऐसा नहीं समझना चाहिए कि भजन करना मने है या ओछा काम है, बल्कि उस को दुरुस्ती से करने के वास्ते, मन में सफ़ाई और प्रेम पैदा करना चाहिये। इस क़दर समझ, इस बचन से, लेनी चाहिये कि जब कभी भजन में नापाक गुनावन और बुरे

ख़्याल या अपवित्र और पाप की भरी हुई तरंगें बारम्बार उठें, तो ऐसी हालत में भजन कम कर देना चाहिए और बजाय उसके, ध्यान का अभ्यास ज़्यादा करना चाहिये, और संत संग्रह भाग पहिले में से काम, क्रोध, और मन-माया और साध और मृतक का अंग पढ़ कर, और उसके मतलब को विचार कर, अपने मन को धिक्कार देकर समझना चाहिए, कि आइन्दा अपवित्र और ना-मुनासिब तरंगें न उठावे, और राधास्वामी दयाल और सतगुरु की अप्रसन्नता और पाप कर्मों के दुखदाई फल का डर दिला कर, मन को होशियार और सफ़ाई की तरफ़ रुजू करना चाहिये। जब मन सफ़ाई और प्रेम के साथ कार्रवाई करने लगे, तब भजन का वक़्त जिस क़दर मुनासिब हो बढ़ा दिया जावे, नहीं तो ध्यान का अभ्यास ब-दस्तूर ज़्यादा किया जावे, और उसके बाद, थोड़ी देर के वास्ते भजन का अभ्यास भी जारी रहे।

२२–जिस किसी की ऐसी हालत है कि जब भजन में बैठे तब ही नाक़िस और ना-मुनासिब तरंगें उसके मन में प्रकट होकर उसके भजन को ख़राब करती हैं, और शब्द का रस नहीं लेने देती, और वह शख़्स उन तरंगों को अपने बल से नहीं रोक सकता या विषयों के ख़्याल के आधीन होकर उन तरंगों को रोकना नहीं चाहता, तो उसको चाहिये कि भजन बिलकुल मौक़ूफ़ कर दे, या सिर्फ़

दस मिनट करे और मन और माया और काम क्रोध वग़ैरा के अंगों का पाठ, समझ २ कर संत संग्रह भाग पहिले में से रोज़मर्रा करे, और भी शब्द हुक्मनामे को "चेतो मेरे प्यारे तेरे भले की कहूँ", रोज दो मर्तबा पढ़े, और सिर्फ़ सुमिरन और ध्यान करता रहे, और जब तक इस अभ्यास से मन और सुरत उसके किसी क़द्र निर्मल और साफ़ न होवें, तब तक शब्द का अभ्यास यानी भजन मुल्तवी रक्खे, और संसार में और परमार्थ में बहुत होशियारी और डर के साथ बर्ताव करे, कि जिसमें पाप कर्म उससे न बनें, और न उनके ख़्याल अन्तर में उठें, नहीं तो भारी हर्ज उसके परमार्थ की कमाई में होगा।

बचन २४

वर्णन निर्मल और कपट या लपेट की भक्ति का

१–निर्मल भक्ति उस सच्चे प्रेम को कहते हैं, जो सच्चे मालिक के चरनों में, उसके दर्शन की प्राप्ति के निमित्त, सच्चे दर्दी परमार्थी के मन में पैदा होवे, और सतगुरु और साध यानी प्रेमी जन का संग करके दिन २ बढ़ता जावे।

२–कपट और लपेट की भक्ति उसको कहते हैं, कि जो किसी दुनिया के मतलब के हासिल होने के निमित्त, या सिद्धि और शक्ति की प्राप्ति की आस धर कर, या किसी के दबाव से, या किसी की नाराजगी, या किसी क़िस्म के

नुक़सान के डर से, या किसी की ख़ातिरदारी और ख़ुशामद, या उसको अपनी तरफ़ मुतवज्जह करने की ग़रज से, संत सतगुरु या मालिक के चरनों में की जावे। ऐसी भक्ति जब कोई मतलब पूरा हो जावेगा या जब कि दबाव और डर नहीं रहेगा, तब घट जावेगी, या बिलकुल जाती रहेगी।

३–निर्मल भक्ति चाहे थोड़ी हो या कच्ची हो, वह सतगुरु और प्रेमी जन के सतसंग और अन्तर अभ्यास की मदद से दिन २ बढ़ती और पकती जावेगी, और सच्चे मालिक और सतगुरु की दया, उस भक्त पर, दिन २ विशेष होती जावेगी, और उसका असर अन्तर और बाहर वह सच्चा भक्त देखता जावेगा, यानी अभ्यास में रस और आनन्द और परचे मिलते जावेंगे और अन्तर और बाहर रक्षा और सम्हाल होती हुई उसको मालूम होती जावेगी।

४–कपट और लपेट की भक्ति करने वाला अन्तर अभ्यास बहुत कम करेगा, लेकिन बाहर की कार्रवाई में बड़े शौक़ और जोश के साथ शामिल होवेगा और अपने मतलब के, थोड़ा-बहुत हासिल हो जाने को ही दया समझ कर, आइन्दा को कार्रवाई ढीली या बन्द कर देगा।

५—संतों के सतसंग में सिर्फ़ कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की महिमा और उनके दर्शन और धाम

की प्राप्ति के निमित्त जो जतन कि मुक़र्रर किया गया है, उसी का वर्णन किया जाता है और उस सतसंग की रक्षा कुल्ल मालिक आप करते हैं। इस सबब से, जो जीव कि सच्ची और निर्मल भक्ति करते हैं, उनको, मदद और तरक़्क़ी दिन २ मिलती जाती है और जो कि कपट और लपेट की भक्ति करते हैं, उनको, सतसंग में बराबर ठहराने की मौज नहीं होती है, क्योंकि सतसंग को गदला करना मंजूर नहीं है। लेकिन ऐसे जीवों के हिरदे में सच्चे परमार्थ का बीजा डालना मंजूर है और इस वास्ते जब तक कि वे लपेट की भक्ति के आसरे सतसंग में शामिल रहें, तब तक उनको बचन सुना कर, बहुत कुछ गढ़त उनके मन और बुद्धि की, की जाती है और जो थोड़ा-बहुत भी भाग्यवान परमार्थ का है, तो जहाँ तक मुमकिन होता है, संत सतगुरु अपनी मेहर और दया से, कपट और लपेट को हटा कर उसकी भक्ति निर्मल कर देते हैं। और फिर वह भी सच्चे और निर्मल प्रेमियों में शामिल होकर, अपने घट में अभ्यास का रस और आनन्द लेकर, और निर्मल परमार्थ की क़दर और महिमा जान कर, और अपनी पिछली हालत पर शरमा कर, और पछता कर, सच्ची भक्ति में दिल और जान से क़दम रखता है, और अपने सच्चे मालिक और सतगुरु को रिझाने, और अपने ऊपर मुतवज्जह करने का शौक़, दिन २ उसके दिल में बढ़ता जाता है।

६—इस वास्ते भक्तों की चार क़िस्में मुक़र्रर करी हैं—पहिला, गुरुमुख, कि जिसको सतगुरु की किसी क़दर पहिचान और परख आई, और तन, मन, धन से पूरी भक्ति कर रहा है। दूसरा, खोजी परमार्थी, कि जो सच्ची और निर्मल चाह परमार्थ की लेकर सतगुरु के चरनों में आया और सतसंग करके दिन २ अपनी समझ-बूझ और प्रेम और अभ्यास को बढ़ाता जाता है। तीसरा, आरथी जो कोई तकलीफ़ या बीमारी या किसी क़िस्म के दुख और कलेश से निहायत दुखी होकर, चरनो में आया और वास्ते दूर होने दुख के दया माँगता है, और हित-चित से सतगुरु का दर्शन करता है और बचन सुनता है, और जब मौज से उसकी तकलीफ़ या रोग दूर हो गया, तब परमार्थ की महिमा समझ कर निर्मल भक्ति करने लगा, और फिर वह भी सच्चे परमार्थियों के गोल में दाखिल हो गया। और चौथा, स्वार्थी, जो कि दुनिया के कोई मतलब या काम बनाने के इरादे से संतों के सतसंग में आया, और होशियारी से बचन सुनता रहा, और सच्चे भक्तों के साथ भक्ति के सर्व-अंगों में शौक़ के साथ बर्ताव करता रहा, और जब मेहर और दया से वह काम उसका थोड़ा-बहुत बन गया, तब उमँग के साथ सच्चा और निर्मल परमार्थ कमाने लगा और दुनिया के मतलब और कामों को तुच्छ और ओछा देख कर, अपनी पिछली सकाम

भक्ति की हालत पर अफ़सोस करके, आइंदा को निर्मल भक्ति करने लगा और सच्चे प्रेमी और भक्तों के ग़ोल में दाख़िल हो गया।

७–आरथी और स्वार्थी जीवों को, भक्तों की जैल में इस सबब से दाख़िल किया कि इन में से बाज़े, सच्ची और निर्मल भक्ति में शामिल हो जाते हैं, और बहुतेरे अपनी आसा पूरन होने पर सतसंग छोड़ कर चले जाते हैं। जो सतसंग से अलेहदा हो गये, उनके भी बीजा पड़ जाता है, और कुछ अर्से बाद इसी जनम में, उनको सच्चा परमार्थी बना कर, सतसंग में मिला देता है, और नहीं तो दूसरे जनम में ज़रूर सच्चे परमार्थी बन कर, और सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर कमाई करेंगे।

८–जीवों को मुनासिब है कि अपने मन की हालत दरियाफ़्त करके जहाँ तक मुमकिन होवे, सच्ची और निर्मल भक्ति, कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में करें, यानी दाता से दाता ही को माँगें और दात पर सिवाय इस क़दर कि जो वास्ते औसत दरजे के गुज़रान के ज़रूरी है, ज़्यादा तवज्जह न करें, तो मन और सुरत उनके निर्मल होते हुए, अंतर में चरनों की तरफ़ चलेंगे, और एक दिन माया के घेर से निकल कर निर्मल चैतन्य यानी निर्माया पद में पहुँच कर, परम आनंद को प्राप्त होंगे। और जो आसा सिर्फ़ दात की रही

और वह दात माया के पदार्थ हैं, और हमेशा क़ायम नहीं रह सकते, तो जो थोड़ी-बहुत दात मिली भी, तो वह ठहराऊ न होगी, और न उसका भोग सदा एक-रस प्राप्त होगा, और आख़िर को नतीजा यह होगा कि जिस ने दात चाही और दाता का निरादर किया, तो उसको न दाता मिला और न दात का पूरा २ सुख मिला, और लपेट की भक्ति की कमाई मुफ़्त बरबाद गई।

६—अब समझना चाहिए कि जितने भोग, मन और इन्द्रियों के हैं, वह सब जड़ और नाशमान हैं, और माया देश की रचना में शामिल हैं। फिर जो कोई उनकी प्राप्ति के लिए जतन करेगा या तरंग उठावेगा, वह भी माया देश में रहेगा। इस सबब से देहियों के दुख-सुख और जनम-मरन की तकलीफ़ से उसकी रिहाई हरगिज़ नहीं होगी। इस वास्ते कुल्ल जीवों को मुनासिब और लाज़िम है, कि संसार के भोगों की चाह, ज़रूरत के मुवाफ़िक़, उठावें, और ज़रूरत के मुवाफ़िक़, उनकी सम्हाल और रक्षा करें, और उनकी असली हालत और क़ैफ़ियत को समझ कर, उनमें ऐसा भरोसा, और चित्त का बंधन, पैदा न करें कि जिससे उन्हीं की प्राप्ति के निमित्त चाह उठाना और जतन करना फ़र्ज़ समझें, और वही आसा, सतसंग में और मालिक के चरनों में, हर दम पेश करें, क्योंकि जो उनके मन और बुद्धि की ऐसी हालत रही, तो उनकी सुरत, माया

के संग लिपटी रहेगी और भूल और भरम दिन २ बढ़ते जावेंगे, और परमार्थ की महिमा और उसकी क़दर उनके चित्त में कभी नही समावेगी, और इस में बहुत भारी हर्ज और नुक़सान उनके परमार्थ का होगा।

१०--जो जीव कि इस बचन को मान कर उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई शुरू कर देंगे, वे अलबत्ता सच्चे परमार्थ की दौलत पावेंगे, और उन्हीं को सच्चा परमार्थी समझना चाहिए। और बाक़ी के जीव, जो जगत की आसा नहीं छोड़ना चाहते हैं, और संसारी पदार्थों और भोगों में आसक्त रहते हैं, उन्हीं का नाम दुनियादार है, और जब तक वे, संतों के बचन के मुवाफ़िक़, कार्रवाई नहीं करेंगे, तब तक वे, मन और माया के जाल में फँसे रहेंगे और उद्धार नहीं होगा।

बचन २५

सच्चे परमार्थ की कमाई के वास्ते, सच्ची और निर्मल चाह, और प्यार ख़ौफ़ ज़रूर है, और जो यह बातें न होंगी, तो जो कुछ कार्रवाई परमार्थ की की जावेगी, वह कर्म में दाख़िल होगी, प्रेम और भक्ति की तरक़्क़ी नहीं होगी

१–दुनिया में, विचित्र रचना हर एक खान की, यानी क़िस्म २ के जीव और बनस्पति वग़ैरा को देख कर, सोच और ग़ौर करने वाले मनुष्य को, बहुत भारी तमाशा कुल्ल मालिक की क़ुदरत का नज़र आवेगा, और ऐसे ही आसमानी रचना सूरज और चाँद और तारागण की, और उनका दौरा कि जो सैकड़ों और हज़ारों वर्षों में ख़तम होता है, और चाल जो कि क़ायदा मुक़र्रर पर बराबर बे-शुमार वर्षों से चली आई है, और जारी रहेगी, देख कर, भारी अचरज और रोब और दबदबा कुल्ल मालिक की महा बड़ाई और महा कारीगरी और महा शक्ति का, दिल में पैदा होगा। ऐसी भारी क़ुदरत और ताक़त, और ऐसे ऊँचे दरजे की रोशनी नज़र आवेगी कि उसको देख कर अक़्ल हैरान होगी, और दृष्टि की ताक़त नहीं कि अदना दरजे के नूर और रोशनी को भी बरदाश्त कर सके। ऐसी क़ैफ़ियत और हालत रंग-बरंग रचना की देख कर, दिल बहुत जोश और शौक़ के साथ चाहेगा कि उस क़ुदरत का तमाशा नज़दीक से नज़दीक पहुँच कर देखे, और रात-दिन उसी की सैर करता रहे और उस सच्चे कुल्ल करतार यानी मालिक के सन्मुख पहुँच कर, दर्शन का बिलास और आनन्द हासिल करे।

२–और जब ऐसा सोच और विचार वाला मनुष्य दुनिया के समान की नाशमानता, और दूसरे हाल पर

नजर करेगा, तो उसका दिल एकाएक ख़ौफ़ लाकर ठंडा होकर भिच जावेगा, और यहाँ के सामान और कारख़ाने को दिल लगाने के लायक़ न देख कर, खोज और तलाश इस बात की शुरू करेगा, कि उस कुल्ल मालिक का देश कहाँ है, और वह मालिक कैसा है, और कैसे मिले, और जनम-मरन और दुख-सुख के घेरे से निकल कर, कैसे पार पहुँचे, और अमर और परम आनन्द देश को कैसे प्राप्त होवे।

३—जब ऐसा शौक़ देखने, सैर मालिक की क़ुदरत का, और भी उसके दर्शनों का, और ऐसा ख़ौफ़ इस संसार की हालत और कार्रवाई दुख-सुख और जनम-मरन की कैफ़ियत का देखकर, मन में पैदा होवे, उस को सच्चा खोज और दर्द परमार्थ का कहते हैं। ऐसे सच्चे खोजी को, अबेर-सबेर, यानी जल्द या थोड़े अर्से के बाद, ज़रूर संत सतगुरु जो कुल्ल मालिक और उसके भेद से वाक़िफ़ हैं, और नित्त उसके धाम में जाकर दर्शन का रस और आनन्द लेते हैं, मिलेंगे, और भेद रास्ते का, और जुगत चलने की, बता कर अपनी मेहर और दया से उसको सब कैफ़ियत क़ुदरत की दिखलाते हुए, एक दिन निज घर में पहुँचा देंगे। जिसके दिल में ख़ौफ़ और शौक़ इस क़िस्म का, जैसा कि ऊपर ज़िकर हुआ, पैदा हुआ है, वही सच्चा खोज, सच्चे मालिक का, करेगा और कुल्ल मालिक की दया और सतगुरु की मदद से रास्ता उसका जारी हो जावेगा।

४—ऐसे खोजी को, जिस वक़्त संत सतगुरु भेद के बचन सुनावेंगे, और जुगत चलने की समझावेंगे, तब उस खोजी को ज़रूर अंतर और बाहर एक क़िस्म का रस और आनन्द प्राप्त होगा, और उस रस और आनन्द की चाट पाकर, दिन २ वही ख़ौफ़ और शौक़ बढ़ता जावेगा, और उस खोजी से कमाई यानी अभ्यास ज़्यादा कराता जावेगा, और थोड़े अर्से में, वह अभ्यासी, अपनी हालत अंतर और बाहर बदलती हुई देख कर, मगन होता जावेगा।

५—जब तक इस क़िस्म का ख़ौफ़ और शौक़ या दोनों में से एक, किसी के दिल में पैदा न होगा, तब तक उसको सतसंग में रस नहीं आवेगा, और न उस का मन अभ्यास की तरफ़ तवज्जह करेगा, बल्कि इस संसार को ही अपना देश, और देह-ख़ाकी को अपना स्वरूप समझ कर, भोगों में उसका झुकाव रहेगा, और दुनिया प्यारी लगेगी, और इस सबब से देह के सम्बन्धी दुख-सुख और जनम-मरन की तकलीफ़ उसको हमेशा भोगनी पड़ेगी।

६—अब समझना चाहिये कि यह संसार और उसके सब पदार्थ और भोग, और यह देह और इन्द्रियाँ वग़ैरा, सब नाशमान हैं, यानी हमेशा इनका रंग और रूप बदलता रहता है, और इसमें दुख और कलेश विशेष और सुख थोड़ा है, और चाहे किसी राजा और महाराजा और सेठ या साहूकार को सर्व-भोग और सर्व-पदार्थ, इस संसार में,

हासिल भी हो जावें, तो भी वक़्त मौत के, एक दम ज़बर-दस्ती छोड़ने पड़ेंगे, और उस वक़्त भारी दुख उनके वियोग का सहना पड़ेगा, और आइन्दा कर्मों के मुवाफ़िक़, नीच-ऊँच जोनों में भरमना और नाक़िस करनी का फल भोगना पड़ेगा, और वहाँ ऐसी हालत में कोई उसका सहाई और मददगार न होगा।

७–इस वास्ते कुल्ल जीवों को चाहे औरत होवें या मर्द, मुनासिब और लाज़िम है कि थोड़ा-बहुत ख़ौफ़ और शौक़, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों का, अपने जीव के कल्यान के निमित्त, अपने दिल में पैदा करें, और संत मत के मुवाफ़िक़ प्यार और डर के साथ थोड़ी-बहुत कार्रवाई, सुरत और मन को आकाश में और उसके परे चढ़ाने की, करें। इससे उन जीवों पर सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया आवेगी, और आहिस्ता २ उनके जीव का कारज बनना शुरू हो जावेगा, और एक दिन धुर धाम में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त हो जायँगे।

८–जिस-किसी के मन में थोड़ा भी प्रेम और भाव सतगुरु और मालिक के चरनों में, आवेगा, तो सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल उसको आहिस्ता २ अपनी दया से बढ़ाते जावेंगे, और जब वह प्रेम और भक्ति

गहरे हो जावेंगे, तब वह जीव विशेष दया का अधिकारी हो कर, रफ़्ता २ एक दिन परम पद में पहुँच जावेगा।

९–ऐसा प्यार और भाव और ख़ौफ़, कुल्ल मालिक और सतगुरु और सतसंग की महिमा सुन कर, और उस सतसंग में शामिल होकर, आवेगा, क्योंकि वहाँ पर हर क़िस्म के बचन सुनने और समझने में आवेंगे, और उनके असर से मन और चित्त की मलीनता दूर होती जावेगी, और घट में सफ़ाई और रोशनी बढ़ती जावेगी, और ना-मुनासिब जगह या पदार्थों में उसकी प्रीत दिन २ घटती जावेगी।

१०–जो सच्चा ख़ौफ़ या सच्चा प्रेम मालिक के चरनों में, या सतगुरु की तरफ़ दिल में नहीं पैदा हुआ है, तो न सतसंग दुरुस्ती से बनेगा और न अभ्यास में मन लगेगा, और इस वास्ते जो यह करतूत की भी जावेगी, तो वह नेम-मात्र या दिखलावे के लिए, या कोई और मतलब से की जावेगी, और उसमें परमार्थी फ़ायदा बहुत कम मिलेगा, क्योंकि वह करम में दाख़िल होगी, भक्ति और प्रेम में नहीं शुमार हो सकती है।

११–भक्ति और प्रेम-अंग के साथ जो काम किया जावे, और उसमें कोई वासना या आसा संसारी मतलब की, न होवे तो वह करतूत मालिक के दरबार में क़बूल और मंजूर होती है, और उसके एवज़ में दया और मेहर

आती है कि जो दिन २ प्रेम और भक्ति को बढ़ाती है और संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से सहज में चित्त उदास होता जाता है।

१२–लेकिन जो करतूत परमार्थी, संसारी कामना लेकर या दिखावे या नेम के तौर पर की जावे, तो उस में सुरत और मन शामिल नहीं होंगे या यह कि वह करतूत भक्ति-अंग से ख़ाली होगी और इस वास्ते सिर्फ़ कर्म का फल उसमें मिलेगा।

१३–हर एक परमार्थी को मुनासिब है कि अपनी चाह और प्यार की जाँच करता रहे कि यह कोई संसारी मतलब के सबब से तो पैदा नहीं हुए हैं, या उसकी वजह से इन में कमी और ज़्यादती तो नहीं हुई है।

१४–जब कभी ऐसा शक गुज़रे या थोड़ी-बहुत मिलौनी मालुम पड़े, तो फ़ौरन अपने मन की सफ़ाई करे, यानी संसारी अंग को, परमार्थ की चाह और प्यार से निकाल देवे, नहीं तो उसका परमार्थ गदला रहेगा और जैसी चाहिये तरक़्क़ी नहीं होगी, यानी सच्चे मालिक और सतगुरु को ख़ास प्यार और दया उस पर नहीं आवेगी और यह भारी नुक़सान की बात है।

१५–ख़ौफ़ चाहे किसी सबब से पैदा हुआ होवे, जो वह जीव को परमार्थ की तरफ़ मुतवज्जह करे, तो उस

हालत में जो परमार्थी करतूत, जैसे सतसंग और सेवा और ध्यान और भजन और सुमरन और पाठ वग़ैरा बन पड़ेगा, वह सच्ची भक्ति में दाख़िल होगा, यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और सतगुरु उस करतूत को सच्ची परमार्थी कार्रवाई में दाख़िल फ़रमा कर, उसके एवज़ में, प्रीत और प्रतीत की दात बख़्शेंगे, और यह दात जीव को सच्चा परमार्थी बनावेगी, और उसकी परमार्थी कार्रवाई को दिन २ बढ़ावेगी, और कुल्ल मालिक और सतगुरु के चरनों में सच्चो प्यार और भाव उसके हिरदे में पैदा कर देगी। इस वास्ते जो ख़ौफ़ कि जीव को परमार्थ में लगावे, चाहे वह किसी क़िस्म का है, हमेशा मुबारक है, और जिस किसी के दिल में वह पैदा होवे, वही बड़भागी जीव है, और उसी का परमार्थी कारज एक दिन दुरुस्त बन जावेगा।

१६–यह कड़ी इस जगह मुनासिब और ज़रूर मालूम होती है।

डर करनी डर परम गुरु, डर पारस डर सार।
डरत रहे सो ऊबरे, ग़ाफ़िल खाई मार॥

इस कड़ी के अर्थ यह हैं कि डर जिस किसी के दिल में आया, वह करनी का फल देगा, यानी ज़रूर जीव से परमार्थी करनी करावेगा, और नाक़िस कामों से बचावेगा। इस वास्ते, वह डर ऐन करनी रूप है और वही डर गुरु स्वरूप है कि हिरदे में जीव के, बैठ कर उससे भलाई और बुराई का तमीज़ कराके, भलाई के कामों में लगावेगा

और कुल्ल मालिक के चरनों में दिल-ओ-जान से सेवा करावेगा, और दिन २ प्यार और भाव पैदा करके बढ़ावेगा। और फिर वही डर हिरदे की सफ़ाई करता हुआ उसको लोहे से कंचन बनावेगा। और फिर वही डर सार, यानी कुल्ल का, खुलासा और जौहर है। जिसके हिरदे में वह बैठा, उस को सर्व-अंग से निर्मल करके, जौहर-कुल्ल से मिला देगा।

१७—जिस किसी के दिल में ऐसा डर पैदा हुआ, वही माया के घेर के पार जावेगा और उसी का सच्चा उबार समझना चाहिये कि निर्मल चैतन्य यानी निर्माया देश में पहुंच कर अपने सच्चे माता-पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

१८—और जिस किसी के दिल में किसी क़िस्म का ख़ौफ़ नहीं पैदा हुआ, वह बेहोश और ग़ाफ़िल रहेगा, यानी जो करतूत कि अपने फ़ायदे के वास्ते उसको करना चाहिये, वह नहीं करेगा, और इस सबब से नुक़सान उठावेगा और अपने पाप कर्मों का फल दंड भोगेगा।

१९—ख़ौफ़ में भी दरजे हैं। पहिले, बालकपन में माता-पिता का डर जीव को फ़ायदे की तरफ़ मुतवज्जह करेगा और नुक़सान से बचावेगा। इससे ज़्यादा उमर में, उस्ताद का डर जीव के हक़ में मुफ़ीद होगा, यानी उसकी बुद्धि को रोशन करेगा, और समझ-बूझ और नेक और बद की तमीज़ को जगावेगा, और जब विद्या और बुद्धि

हासिल हो गई, तब हाकिम और बिरादरी का डर जीव को संसार और व्यवहार में सीधे रास्ते पर चलावेगा, यानी वाजिबी तौर पर कार्रवाई करना सिखावेगा, और जब दुनिया का हाल और उसकी ना-पायदारी (नाशमानता) और पदार्थों की तुच्छ कैफ़ियत की थोड़ी-बहुत ख़बर हुई, तब सतगुरु का उपदेश और ख़ौफ़ जीव को परमार्थ की तरफ़ लगावेगा, और संसार और भोगों की तरफ़ से हटाता जावेगा, और जब थोड़ा-बहुत अंतरी अभ्यास बन आवेगा तब कुल्ल मालिक का ख़ौफ़ इसकी तवज्जह को चरनों की तरफ़ खींचेगा, और संसार और उसके सामान की तरफ़ से (जो कि एक दिन ज़रूर छोड़ना पड़ेगा) इसके चित्त को उदासीन और बे-परवाह कर देगा, और तब इस का परमार्थी काम सब तरह दुरुस्त हो जावेगा, और तब वह कुल्ल से सच्चा निडर हो जावेगा।

२०—जो कोई दरजे-बदरजे इन ख़ौफ़ों में, जिनका ज़िक्र ऊपर हुआ, नहीं बरता और जिसकी चाल-ढाल निडर के तौर पर रही है, वह गुरू और मालिक का भी ख़ौफ़ नहीं मानेगा, और इन दोनों जगह निडरताई के साथ बर्ताव करने में उसका सरासर नुक़सान होगा। नहीं तो जिस किसी के दिल में सच्चा ख़ौफ़ गुरू और मालिक का आया, वह उनकी दया के प्रताप से एक दिन तमाम रचना से निडर हो जावेगा।

२१–माँ, बाप और उस्ताद् और हाकिम और बिरादरी का डर संसारी है, और दुनिया की कार्रवाई दुरुस्ती के साथ कराने के वास्ते ज़रूर दरकार है। लेकिन परमार्थ में सिर्फ़ गुरू और मालिक का डर काफ़ी है। वह सब काम बना देगा और उसके मुक़ाबले में संसारी डर को पेश करना, या उसके सबब से परमार्थी कार्रवाई में या गुरू और मालिक के हुक्म के बर्ताव में कसर करना, या उनको छोड़ देना, निहायत ना-मुनासिब और ना-दुरुस्त है। और ऐसे संसारी डर के मानने वाले का भारी नुक़सान परमार्थ का होता है।

२२–इस जगह पर इस क़द्र बयान करना ज़रूर है कि इस बचन में जहाँ-कहीं लफ़्ज़ परमार्थ और गुरू का आया है, वहाँ मतलब सच्चे और पूरे परमार्थ और सच्चे और पूरे गुरू से है, और ऐसा परमार्थ और ऐसे गुरू सिर्फ़ सत मत में कि वही कुल्ल रचना में सत्त मत है, मिल सकते हैं।

बचन २६

सतसंग, अंतर और बाहर, सम्हाल कर करना चाहिये, तब फल और फ़ायदा उसका प्रकट होगा

१–सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि सतसंग होशियारी से करे, तब उसका फ़ायदा उसको प्रत्यक्ष मालूम होगा।

२–जब बाहर के सतसंग में शामिल होवे, तब चाहिये कि अपने नेत्रों से गुरु या साधके नेत्रों को (जो सतसंग के अधिष्ठाता यानी अफ़सर हैं) दृष्टि जोड़ कर ताकता रहे, चाहे वे उसकी तरफ़ देखें या नहीं, और फिर चंद मिनट बाद, मध्य में दोनों आँखों के, यानी तीसरे तिल का ख़्याल करके, दृष्टि को जमावे। जो इस तरह अभ्यास करने में आँखें पूरी २ खुली न रहें तो कुछ हर्ज नहीं।

३–इस तरह दृष्टि जोड़ के बैठने में दर्शन का भी रस आवेगा और बचन भी कुछ कैफ़ियत के साथ सुनने में आवेंगे यानी उनके अर्थ साफ़ और गहरे समझ में आवेंगे, या यह कि उनके अर्थ का असर दिल पर ज़्यादा होगा और वे प्यारे लगेंगे।

४–इस तरह की बैठक, ध्यान के अभ्यास में शुमार की जाती है, और इस क़दर एहतियात चाहिये कि कोई दूसरा ख़्याल, किसी क़िस्म का, दिल में न आवे, बल्कि जैसा कि बचन सुनता जावे, उसको उसी वक़्त अपने ऊपर घटा कर, अपने मन की हालत की जाँच करता जावे यानी विचार करे कि कौन अंग ना-मुनासिब उसके मन में धरा है, या बर्ताव में आता है, और उसका नुक़सान उसी वक़्त समझ कर, उसको सच्चे मन से त्याग करे, और जो अँग बेहतर और माक़ूल बचनों के मालूम होवे, उसकी बड़ाई अपने अंतर में उसी वक़्त तौल कर सच्ची ख़्वाहिश के साथ ग्रहण करता जावे।

५–इस तौर पर इस अभ्यास की हालत में नाक़िस अंग के छोड़ने की ख़्वाहिश और माक़ूल यानी बेहतर अंग के ग्रहण करने की सच्ची चाह का असर दिल पर बहुत मज़बूत होता है। पर शर्त यह है कि इसी तरह पर मनन और विचार बचनों का, जो वक़्त सतसंग के सुनने में आवें, हर रोज़ जारी रहे, तो कोई दिन में बहुत सफ़ाई मन की हासिल होवेगी, और अपने हाल की निरख और परख की ताक़त बचन सुनते २ आती जावेगी, और उसका यह फ़ायदा होगा कि सिवाय सतसंग के, और वक़्तों में भी, अपने मन की चाल की ख़बर और उसकी सम्हाल थोड़ी-बहुत होती रहेगी, और रफ़्ता २ इस अभ्यास से होशियारी और सम्हाल की ताक़त बढ़ती जावेगी, और ग़फ़लत और भूल घटती जावेगी।

६–जब कोई दिन इस तौर पर बाहर का सतसंग जारी रहेगा, तो अंतर का सतसंग भी किसी क़दर दुरुस्त हो जावेगा, यानी ध्यान के वक़्त, मन और सुरत चंचलता छोड़ कर, स्वरूप और नाम में, और वक़्त भजन के, शब्द में एकाग्र होकर थोड़ी देर को जमने लगेंगे, और जब कोई गुनावन या किसी क़िस्म के ख़्यालात पैदा होंगे, तो अभ्यासी को जल्द उनकी ख़बर हो जावेगी, और अपनी सम्हाल थोड़ी सी कोशिश से कर सकेगा, यानी उन ख़्यालों को आसानी से दूर कर सकेगा। इसी तरह रफ़्ता २ ध्यान और

भजन का रस थोड़ा २ मिलना शुरू हो जावेगा और आइंदा को तरक़्क़ी होती जावेगी ।

७–और जो कि ऐसे अभ्यासी को घंटे-दो-घंटे बाहर के सतसंग में बैठा कर, मन और सुरत के सिमटाव और जमाव का रस लेने की आदत हो जावेगी, तो जब सतसंग से अलेहदा होगा, तब उसी वक़्त जो वह ध्यान और भजन करेगा, तो ज़रूर उसके मन और सुरत, आदत के मुवाफ़िक़, अंतर में थोड़े-बहुत निश्चल होकर अभ्यास का रस हासिल करेंगे, और यही अभ्यास और आदत, रस और आनन्द के आसरे, आहिस्ता २ बढ़ती जावेगी, और दिन २ हालत भी बदलती जावेगी ।

८–मालूम होवे कि अंतर के सतसंग में अभ्यासी को इस क़दर एहतियात और होशियारी दरकार है कि भजन के वक़्त, मन और सुरत, जिस क़दर मुमकिन होवे, धुन का रस लेते रहें, और ध्यान के वक़्त नाम और स्वरूप में स्थिर होकर सिमट जावें, और थोड़ा-बहुत सिमटाव और जमाव का रस पावें, लेकिन यह हालत अंतर के सतसंग की, उस वक़्त हासिल होगी कि जब अभ्यासी, गुनावन और ख़्यालों को छोड़ कर, धुन और रूप में लगेगा ।

९–जो शौक़ तेज़ है और भोगों की तरफ़ से किसी क़दर चित्त में बैराग है, तो मन और सुरत जल्द सिमट कर काम में लग जावेंगे । नहीं तो बाहर का सतसंग जो

इस तरकीब से कि जो ऊपर लिखी गई, किया जावेगा, उससे बहुत मदद् अंतर के सतसंग में, वास्ते एकाग्र करने मन और सुरत के, मिलेगी यानी अंतर का सतसंग या अभ्यास किसी क़दर दुरुस्ती से बन पड़ेगा, और आइन्दा आहिस्ता २ तरक़्क़ी भी होती जावेगी।

१०–और जो सच्चे परमार्थी जीव शौक़ भी तेज़ रखते हैं, और किसी क़दर दुनिया से बैराग भी उन के चित्त में है, और मौक़ा पाकर, बाहर का सतसंग, ऊपर की लिखी हुई तरकीब के मुवाफ़िक़ करेंगे, तो उनको, दोनों सतसंग में यानी अंतर और बाहर, ज़्यादा रस मिलेगा और मन और सुरत उनके, जल्द उमंग के साथ अभ्यास में लगेंगे और तरक़्क़ी भी ज़्यादा होती जावेगी।

११–ऊपर की तरकीब के मुवाफ़िक़ जो कोई परमार्थी जीव सतसंग करेंगे, उनकी हालत ज़रूर बदलती जावेगी, यानी उन पर सतसंग का रंग चढ़ता जावेगा, और नतीजा उसका यह होगा कि दिन २ सतगुरु और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और दुनिया और उसके सामान और उसका कारखाना, दिन २ उनकी नज़र में फीका पड़ता जावेगा, और उस तरफ़ से तवज्जह हटती जावेगी, यानी ज़रूरत के मुवाफ़िक़ कि जिसमें दुनिया में गुज़ारा, औसत दरजे पर हो जावे, तवज्जह दुनिया के कारोबार में रहेगी, और फ़िज़ूल

चाह और फ़िज़ूल कोशिश उसके कामों में दूर हो जावेगी।

१२–इसी तरह दिन २ ऐसे परमार्थियों की मालिक के चरनों में नज़दीकी, और मन और इन्द्रियों के घाट से (यानी दुनिया से) अंतर में किसी क़दर दूरी होती जावेगी।

१३–यही मतलब सतसंग या परमार्थ की कमाई का है, और सच्चे परमार्थियों को यह कैफ़ियत सच्चे मालिक की दया से ज़रूर हासिल होती जावेगी। इसकी परख वे आप ब-ख़ूबी कर सकेंगे, और कुछ थोड़ी सी उन लोगों को भी, जो रात दिन शुरू से उनके संग रहते हैं, ख़बर पड़ेगा।

१४–मालिक के चरनों में प्रेम की तरक़्क़ी का हाल निकटवर्ती लोगों को ठीक नहीं मालूम हो सकेगा, लेकिन दुनिया और उनकी तरफ़ से अभ्यासी के चित्त के हटाव का हाल, उनको थोड़ा-बहुत ज़रूर मालूम हो जावेगा।

१५–जो वे भी थोड़े-बहुत परमार्थी हैं, तो ऐसी हालत अपने प्यारे रिश्तेदार की देख कर ख़ुश होंगे और उस में प्यार और भाव ज़्यादा लावेंगे, और जो वे संसारी हैं तो ऐसी हालत देख कर, अपने रिश्तेदार से नाराज़ होवेंगे, और उसके परमार्थ की शिकायत करेंगे, और आप उसके साथी न होंगे।

१६–जो लोग कि सतसंग करते हैं, पर न तो दर्शन में चित्त लगाते हैं, और न बचन चेत कर सुनते हैं, उनकी हालत, बहुत सुस्ती के साथ, देर में बदलेगा। जब २ कोई

बचन सुनने में आ जावेगा और उसका थोड़ा-बहुत असर दिल पर होवेगा, सो थोड़े अर्से के लिए, तवज्जह और मेहनत के साथ अभ्यास करेंगे, और कुछ फ़ायदा भी हासिल होगा, लेकिन जब उस बचन का असर कम हो जावेगा, तब करनी में भी ढीले होते जावेंगे। फिर कोई दिन बाद, जब [illegible] बुज़ुर्ग (गुरु) और शामिल होने बड़े आदमियों के सतसंग में कोई बचन चित्त देकर सुनेंगे, फिर शौक़ के साथ करनी शुरू करेंगे, और थोड़े दिन बाद फिर ढीले हो जावेंगे, लेकिन जो रोज़ से सतसंग कभी २ ज़ोर-शोर के साथ होता रहा, तो यह लोग भी होशियार होते रहेंगे, और रफ़्ता २ अपनी कार्रवाई दुरुस्ती से करने लगेंगे, और तब उनकी भी हालत बदल जावेगी यानी परमार्थ का रंग चढ़ता जावेगा।

१५७—कोई २ ऐसे जीव भी सतसंग में आते हैं कि वे बचनों के वक़्त या तो गुनावन करते रहते हैं, या दूसरे से आहिस्ता २ बातें करते रहते हैं, और जो यह काम न करें तो सो जाते हैं। इन जीवों की हालत ज़्यादा देर के बाद बदलेगी यानी पहले, उनका चित्त कोई दिन में दर्शन और बचन में लगना शुरू होगा, और फिर आहिस्ता २ शौक़ और प्रेम बढ़ता जावेगा, और करनी दुरुस्त होती जावेगी, तब हालत भी सच्ची बदलती जावेगी।

१५८—खुलासा यह है कि जब तक जीव सच्चा होकर

तवज्जह के साथ सतसंग नहीं करेगा, तब तक उसके मन और बुद्धि और इंद्रियों की गढ़त दुरुस्ती से नहीं होगी और न अंतर सतसंग यानी अभ्यास उससे दुरुस्ती से बन पड़ेगा, और इस वास्ते उसकी पुरानी चाल-ढाल भी नहीं बदलेगी। लेकिन इस क़िस्म के जीव भी कि जो हर रोज़ सतसंग में नेम से शामिल होते हैं, पर अभी पूरी तवज्जह के साथ बचन नहीं सुनते दुनियादारों से बेहतर हैं, कि यह रफ़्ता २ एक दिन प्रेमी हो जावेंगे, और फिर दुरुस्ती के साथ करनी करके, अपना काम सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से बनवा लेंगे, और संसारी लोग जो कभी सतसंग का दर्शन भी नहीं करते, दिन २ माया के चक्कर में फँस कर, नीचे के दरजों में गिरते चले जावेंगे।

१६–सच्चे और पूरे गुरू, यानी संत सतगुरू, और उनके सतसंग की महिमा बहुत भारी है। जो कोई थोड़े-बहुत भाव के साथ, कोई दिन भी, उनके सतसंग में जैसे-तैसे शामिल होगा, उसके भी उद्धार का रास्ता दया से जारी हो जावेगा। बल्कि जो कोई, भाव से एक दिन भी सतसंग में शामिल होकर बचन सुनेगा, उसके भी किसी क़दर कर्म कटेंगे, और सच्चे परमार्थ का बीजा उसके हिरदे में बो दिया जावेगा और वह आइन्दा किसी न किसी वक़्त पर फले-फूलेगा यानी संत सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर भक्ति करके, अपने जीव का कारज करा लेगा।

२०–इस वास्ते कुल्ल जीवों को मुनासिब और लाज़िम है कि जहाँ-कहीं संत सतगुरु का सतसंग जारी होवे, वहाँ, जैसे बने, तैसे शामिल होकर अपने परमार्थ का भाग बढ़ावें। जो जीव कि थोड़े-बहुत संस्कारी या अधिकारी परमार्थ के होंगे, उनको फ़ौरन असर उसका मालूम होगा, और शौक़ के साथ भक्ति में शामिल हो जावेंगे, और जो अधिकारी नहीं हैं, उनके हिरदे में संत सतगुरु अपनी दया से, बीजा परमार्थ का, डाल देंगे कि वह आइन्दा उन जीवों को भक्ति में शामिल करके उनका कारज बनावेंगे।

२१–संतों की महिमा और दया का क्या वर्णन किया जावे कि अपने निंदकों को भी दया से भक्ति दान बख़्शते हैं, और अबेर-सबेर यानी इसी जन्म में, ख़्वाह आइन्दा के जनम में, उनको भी सतसंग में शामिल करके और भक्ति और अभ्यास कराके, मुक्ति-पद या परम धाम में पहुँचाते हैं।

२२–सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की ऐसी दया है कि जो कोई सच्चे मन से, उनकी सरन में आया, और भक्ति और अभ्यास सुरत-शब्द मार्ग का करने लगा, और प्रीत और प्रतीत चरनों में दिन २ बढ़ाता जाता है, तो सिर्फ़ उसी का नहीं, बल्कि उसके निज रिश्तेदार और प्यार वालों का, जैसे माता, पिता, स्त्री, पुत्र, भाई और भतीजों का भी उद्धार अपनी दया से फ़रमावेंगे। जो इनमें से कोई

भक्ति में शामिल हो गया तो वह अपने वास्ते, आप कमाई करने लगा, और ख़ास दया का अधिकारी हो गया, और जो कोई शामिल नहीं हुआ, तो उसके ऊपर राधास्वामी दयाल इस वजह करके कि वह उनके सच्चे प्रेमी भक्त की सेवा और दर्शन करता रहा, और बाक़ी २ परमार्थी काम में मदद भी देता रहा है, अपनी तरफ़ से दया करके उसके उद्धार का रास्ता जारी फ़रमावेंगे।

२३—जिस क़दर, जिस-किसी की राधास्वामी दयाल के चरनों में भक्ति ज़बर है, और सच्ची पक्की और मज़बूत है, उसी क़दर उसके कुटुम्बी और रिश्तेदारों पर बल्कि नौकरों पर भी दरजे-ब-दरजे दया, वास्ते उनके उद्धार के, राधास्वामी दयाल फ़रमावेंगे।

२४—और जिस-किसी की भक्ति बहुत ज़बर है, उसके दूर तक के रिश्तेदारों पर भी दया का असर, वास्ते उनके जीव के सुख और कल्यान के, पहुँचेगा. और जो कोई उसके ख़ास रिश्तेदारों में से, जैसे माता, पिता, स्त्री, पुत्र, बहन-भाई और दादा और नाना-नानी और सास-ससुर में किसी का भी चोला छूट गया है, तो जहाँ-कहीं उसकी सुरत होगी, वहीं, उसको दया का असर और फ़ायदा पहुँचेगा।

२५—और जिस-किसी की भक्ति सर्व-अंग करके पूरी और निहायत ज़बर है, तो आप तरन-तारन हो जावेगा

यानी उसको साध या संग गति जीते-जी, हासिल हो जावेगी और वह आप राधास्वामी दयाल की दया से जिस क़दर जीवों को चाहेगा, उनका उद्धार कर देगा।

बचन २७

जीवों को वास्ते बचाव तकलीफ़ और दुक्खों से, और प्राप्ति सच्चे और अमर सुख और आनन्द के, अपने घट में, संतों की जुगत के मुवाफ़िक़, स्वरूप का ध्यान, और शब्द के सुनने का थोड़ा-बहुत अभ्यास ज़रूर करना चाहिए

१—कुल्ल जीव सुख और आराम चाहते हैं और दुक्खों से डरते और घबराते हैं, और जो कोई, किसी क़िस्म का जतन, वास्ते प्राप्ति सुख, और घटने और दूर होने दुख के, बताता है, तो उसको ख़ुशी से करने को तैयार होते हैं।

२—दुनिया में अनेक तरह के सुख हैं, लेकिन वे या तो इन्द्रियों के भोग हैं या मन को ताक़त और ख़ुशी देने वाले हैं, जैसे धन और मान-बड़ाई और हुकूमत वग़ैरा, और ये सब नाशमान हैं, और हमेशा कम और ज़्यादा होते रहते हैं, और जीव का इनमें से कोई संगी और सच्चा

मददगार नहीं है। यानी तकलीफ और भारी दुख और कलेश और मौत के वक़्त में, इनसे बहुत कम मदद और सहारा मिलता है। पर जीव मन और इन्द्रियों के रस लेने में ऐसे ग़ाफ़िल हो जाते हैं कि उन सुक्खों को, अपनी जिन्दगी भर का संगी और आराम देने वाला समझ कर सच्चे और अविनाशी सुख की तलाश और क़द्र नहीं करते, और बारम्बार धोखा खाकर आख़िर को हाथ मलते और पछताते रह जाते हैं।

३–इसी तरह दुख और कलेश और मुसीबत भी, तरह २ की, जीवों को सताती है। किसी-किसी का थोड़ा-बहुत उपाय या इलाज बन जाता है, पर बहुत से दुख और आफ़तें ऐसी हैं कि उनमें कोई जतन या तदबीर काम नहीं देती, और आदमी निहायत लाचार होकर उनको भोगता है, और बे-इख़्तियारी में रोता और चिल्लाता है।

४–संत दयाल ऐसी हालत जीवों की देख कर, निहायत दया करके, समझाते हैं कि यह दुनिया धोखे की जगह है, और यहाँ के भोग और सुख तुच्छ और नाशमान, और जीव को लुभा कर, जड़ पदार्थों में फँसाने वाले हैं। इन से होशियार रह कर सच्चे और परम-आनन्द का खोज करके, उसकी प्राप्ति के निमित्त थोड़ा-बहुत जतन इस जिन्दगी में, अपने जीव के सच्चे कल्यान के वास्ते, ज़रूर करना चाहिए। उस का फ़ायदा इसी जिन्दगी में इस क़दर

मालूम हो सकता है कि जब वह आनन्द (जो कि घट-घट में भर-पूर है) अपने इख़्तियार से, कोई दिन के अभ्यास के बाद, एक छिन में अपने अंतर में मिल सकता है, तो उसके रूबरू कुल्ल भोग संसार के (जो कि मन और इन्द्रियों के विषय यानी रस देने वाले हैं) किसी क़द्र फीके और तुच्छ नज़र आवेंगे, और उनकी तरफ़ तबीयत कम तवज्जह करेगी और दिन २ उस सच्चे और परम आनन्द के बढ़ाने के वास्ते ज़्यादा कोशिश करेगी, और भारी तकलीफ़ और दुख के वक़्त, वह आनन्द बहुत सहारा देगा, और मौत के वक़्त, ज़्यादा से ज़्यादा या पूरा हासिल होकर, जीव को निहाल कर देगा कि उसकी बराबर कोई ख़ुशी इस दुनिया में नहीं है और न हो सकती है।

५–इस आनन्द का भंडार, हर एक जीव के घट में मौजूद है, और उसकी धारा भी पिंड की तरफ़ जारी है, पर जीव उससे बिलकुल बे-ख़बर हैं। इस सबब से वे निर्मल और गहरा रस नहीं ले सकते, और तुच्छ और नाशमान रस के वास्ते, जो कि भोगों और अनेक जड़ पदार्थों से इन्द्रिय द्वारे किसी क़द्र हासिल होता है, निहायत मेहनत और कोशिश करते हैं।

६–ज़ाहिर है कि जिस क़द्र सुख और रस और आनन्द जीव को हासिल होता है, वह असल में सुरत-चैतन्य की धार में है। तो उस भंडार में जहाँ से यह धारें

निकली हैं, किस क़दर गहरा और विशेष रस और आनन्द होना चाहिए? और उसके थोड़ा-बहुत हासिल करने के वास्ते, हर एक जीव को, औरत होवे या मर्द, किसी क़दर तवज्जह और कोशिश करना ज़रूर और उसके हक़ में मुफ़ीद, मालूम होता है।

७–और जो कोई अपने घट में, वास्ते प्राप्ति परम आनन्द के, जतन नहीं करेंगे, या संतों के बचन की प्रतीत न करके, सारी तवज्जह अपनी, संसार के सुख और आराम की प्राप्ति में लगावेंगे, तो उन जीवों को भारी तकलीफ़ और मौत के वक़्त अपनी कारवाई की ख़बर पड़ेगी कि कैसा धोखा खाया, और जमदूतों के हाथ से अनेक तरह के कष्ट और कलेश सहने पड़ेंगे।

८–ऐसी भारी भूल इस दुनिया में पड़ी हुई है कि जीव इसी ज़िन्दगी में, अपने प्यारों और भरोसे वालों के हाथ से धोखा खाते हैं, और ख़ूब उनको जाँच हो जाती है कि कोई उनका सच्चा मददगार नहीं है कि जो आराम और तकलीफ़ के वक़्त एकसाँ बरते, फिर भी उनका झुकाव और खिंचाव उन्हीं लोगों की तरफ़ रहता है, और इस सबब से बारम्बार अपनी कारवाई का फल भोगते हैं, और उस में दुखी-सुखी होते हैं और अपनी कारवाई पर पछताते हैं और अफ़सोस करते हैं।

९–जो किसी को, अंतर में, विशेष सुख और आनन्द

के जीव [illegible] होने का [illegible] न आवे, और उसके लिए जतन करने को [illegible] नहीं चाहिए [illegible] इसी मतलब से कि दुख और कलेश के वक्त [illegible] और मदद मिले और अखीर यानी [illegible] न व्यापे, यह जुगत कि [illegible] भाग के, और पहले मन और [illegible] यानी कुल मालिक के चरनों [illegible] बतलाई है, उसका अभ्यास शौक और प्रीति के साथ जरूर करें, क्योंकि दुःखों से सब जीव डरते हैं, और [illegible] मुश्किल होवे, उनसे बचना या उनको दूर हटाना चाहते हैं

१८—जो [illegible] कार्रवाई [illegible] अभ्यास की, थोड़ी-बहुत [illegible], सो फिर सुरत और मन अभ्यास करते २ [illegible] और आनन्द जरूर पावेंगे, और इस आनन्द को [illegible] ज्यादा [illegible] और ज्यादा से ज्यादा आनन्द पाकर पूरी पूरी [illegible] के चरनों में जा आवेगी। तब वे जीव अपने भागों की सराहना और संतों की दया और मेहर का शुकराना करेंगे

१९—संतों ने जो जुगत कि बताई है, वह यह है कि शब्द यानी आवाज़ को (जो घट २ में भरपूर है) सुनते हुए, और स्वरूप का ध्यान करते हुए, अपने सुरत और मन को निज घट में, ऊपर की तरफ थोड़ा-बहुत चढ़ाना चाहिए

और यह अभ्यास नित्त जारी रखना चाहिए। इसकी बरकत से दिन २ सफाई होती जावेगी, और मालिक के चरनों में प्रीत बढ़ती जावेगी, और उसके साथ ही आनन्द भी दिन २ ज़्यादा मिलता जावेगा, और वह आनन्द सुरत को एक दिन उसके निज घर में पहुँचा कर छोड़ेगा। और वहाँ पहुँच कर सच्चे मालिक का जो कुल्ल रचना का माता-पिता है, दर्शन पावेगा और महा आनन्द को प्राप्त होवेगा, और तब अपनी नर देही और संतों की भारी दया की महिमा जान पड़ेगी।

१२–धुर मुक़ाम या दयाल देश में पहुँचना तो आहिस्ता २ ज़्यादा अर्से में होगा, पर जिस क़दर जिस किसी के मन और सुरत अंतर में चढ़ेंगे, उसी क़दर वह संसार और उसके सामान से अलेहदा होता जावेगा, और मालिक के से ख़वास उसमें आते जावेंगे, और रस और आनन्द मिलता जावेगा, और चिंता-फ़िक्र और ख़ौफ़ और तकलीफ़ और दुख वग़ैरा का असर दिन २ कम और दूर होता जावेगा और एक दिन सच्चा निरभय और अचिन्त कर देगा, कि जहाँ संसारी दुख-सुख का असर नहीं पहुँचता है।

१३–यह संतों का अभ्यास इस क़िस्म का है कि जब जो कोई संसार के दुक्खों से डर कर अपने अंतर में ऊपर की तरफ़ को चलेगा, तो फ़ौरन उसको थोड़ा-बहुत सहारा

मिलेगा, यानी जैसे कि बालक डर कर, या कोई चोट खाकर अपने माता-पिता की गोद की तरफ़ भागता है, और वहाँ पहुँचते ही उसको सच्ची पनाह और सहारा मिल जाता है, इसी तरह कुल्ल मालिक के चरनों से, अन्तर में सुरत मिल कर, ताक़त और रस और सहारा और पनाह पा सकती है। इस वास्ते हर एक जीव को, अपने आराम और कल्यान के वास्ते मुनासिब और लाज़िम है कि इस आसरे और मदद के ठिकाने को, अपने अंतर में नित्त खोजते और उसका रास्ता काटते रहें, तो एक दिन संसार की तकलीफ़ और दुक्खों और जनम-मरन की आफ़त से बच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होंगे।

१४–जो किसी हालत में मन और सुरत, शब्द में दुरुस्ती से न लग सकें, तो चित्त से स्वरूप का ध्यान ऊँचे स्थान पर करना चाहिए, या अपने ख़्याल को उस मुक़ाम पर पहुँचा कर जमाना चाहिए। इस तरह तवज्जह ऊँचे की तरफ़ करने से ज़रूर थोड़ा-बहुत सहारा अन्तर में दया का, मिलेगा।

बचन २८

साध के संग की महिमा और उसका फ़ायदा, जो सच्ची दीनता और प्रेम के साथ संग किया जावे

१–ऐसा कहा है कि साध के संग से कोटि जनम के पाप, एक छिन में, कट जाते हैं। यह बात ज़ाहिरा मुश्किल

मालूम होती है, लेकिन [illegible] किया जाये तब मालूम होगा कि यह कुछ [illegible] नहीं है, क्योंकि [illegible] ने मामला [illegible] और पाया है और उसके [illegible] बहुत है। जो कोई [illegible] के [illegible] उसके [illegible] उसको [illegible] थोड़ी [illegible] में यह खुमार [illegible] है कि [illegible] दिल के अभ्यास से [illegible] मालूम पड़ता है। [illegible] और यह [illegible] [illegible] रहा है, [illegible] के [illegible] उसको [illegible] का [illegible] और [illegible] यह [illegible] होने का कारण हुआ [illegible] है।

[illegible] उन्हीं का [illegible] अपना पूरा काम बनाया है जो कोई [illegible] और प्रेम के [illegible] उनको [illegible] खुमार बना सकते [illegible] भी दिन उनके मुवाफ़िक [illegible] आवे, पर [illegible]

निष्कपट और हित के साथ होना चाहिए। यानी जैसे साध हिदायत करें उसी के मुवाफ़िक़ कार्रवाई की जावे। और शक सन्देह और बे-परतीती को दख़ल न दिया जावे। जैसे सोना या चाँदी या राँगा पिघला कर जिस साँचे में ढाला जावे, वह उसी का रूप बन जाता है, इसी तरह जो जीव सच्ची दीनता और प्रेम के साथ निष्कपट होकर साध का संग करे, वह भी उनकी दया से साध बन जाता है।

३—सच्ची दीनता से मतलब यह है कि खोजी दर्दी, सच्चे परमार्थ का ऐसा ग़रज़मंद होवे, जैसे बीमार हकीम और दवाई का मुहताज है—जैसे हकीम कहता है उसी मुवाफ़िक़ दवा खाता-पीता है और परहेज़ करता है। या जैसे नौकरी का चाहने वाला हाकिम के सामने सच्चा दीन-अधीन होता है यानी, जो हाकिम हुक्म करे और काम सुपुर्द करे, उसको दिल और जान से दुरुस्ती के साथ अंजाम देता है, और हाकिम को राज़ी करने के वास्ते अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ पूरी मेहनत और कोशिश करता है। ऐसी सच्ची ग़रज़ जिस किसी के मन में पैदा हुई, वह सच्चे और पूरे परमार्थ के हासिल करने के लिए, सर्व अंग से साध या संत के बचन को सुनेगा और मानेगा, और तन-मन से उसकी कार्रवाई यानी अभ्यास दुरुस्ती से करेगा। तब उनकी मेहर और दया से उसकी

ताक़त बढ़ती जावेगी, और दिन २ उसको काम बनता जावेगा, और वे उसको एक दिन अपने मुवाफ़िक़ बना लेवेंगे।

४—इस वास्ते हर एक जीव को, जिसके मन में सच्ची और पूरी चाह, अपने जीव के कल्यान की, पैदा हुई है, मुनासिब है कि पहिले सच्चे और पूरे संत या साध का खोज करके, उनके सनमुख प्रेम-भाव और दीनता के साथ जावे, और चित्त देकर उनके बचन सुने, और सिर्फ़ बचन से उनकी परख करे, यानी जो उनके दर्शन और बचन से, इसके मन में सच्चे मालिक के चरनों में प्यार और भाव पैदा होवे, और संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से किसी क़दर नफ़रत यानी उदासीनता चित्त में आवे, और सच्चे मालिक के दर्शनों का चाव दिन-दिन बढ़ता जावे और जो जुगत कि वे बतावें, उसके अभ्यास से दिन २ मन और सुरत, पिंड और संसार की तरफ़ से हट कर, ऊँचे देश की तरफ़ घट में चलते और चढ़ते जावें, और थोड़ा-बहुत इस कारवाई का रस मिलता जावे, और मालिक के चरनों में अनुराग और संसार से बैराग बढ़ता जावे, तो यही निशान और सबूत इस बात का है कि जिनके संग से ऐसी हालत पैदा हुई, वे ज़रूर सच्चे और पूरे संत या साध हैं, और उनके संग और उनकी जुगत की कमाई से ज़रूर एक दिन काम पूरा बन

जावेगा इसी क़दर पहिचान शुरू में (जो एक, दो या तीन महीने के संग से थोड़ी-बहुत हासिल हो सकती है) काफ़ी है। फिर ज़्यादा संग और अन्तर में अभ्यास करने से यही पहिचान बढ़ती जावेगी, और उनकी गत-मत और दया और मेहर की थोड़ी-बहुत परख और प्रतीत होती जावेगी। और फिर यही परख और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावेगी, और उसके साथ प्रेम भी बढ़ता जावेगा, और उनके चरनों की सरन भी पकती जावेगी। इस तरह तरक़्क़ी होते २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

५—सच्चे परमार्थी को, जो ऊपर लिखे के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करता है, मुनासिब है, कि अपने परमार्थी और संसारी व्यवहार और चाल-चलन की अच्छी तरह सम्हाल रक्खे, कि जिससे उसकी परमार्थी कार्रवाई, और उसकी तरक़्क़ी में ख़लल न पड़े, यानी परमार्थी शुभ-कर्म की दिन २ कार्रवाई बढ़ती जावे, और परमार्थी अशुभ-कर्म में ज़रूरत के मुवाफ़िक़, और मुनासिब और वाजिबी तौर पर बर्ताव करे, और व्यवहारी शुभ-कर्म की कार्रवाई जहाँ तक बन सके, जारी रक्खे, लेकिन अशुभ-कर्म से बिलकुल परहेज़ करे।

६—परमार्थी शुभ-अशुभ कर्मों की तफ़सील यह है। परमार्थी शुभ-कर्म उसको कहते हैं कि जिससे मन और सुरत और इन्द्रियों की धार को, इधर यानी बाहर और नीचे की तरफ़ से

दूर हो सकता होवे, तो ऐसे ख़र्च करने या हक़ को छोड़ने में ताम्मुल न करे, और जहाँ तक बने आपस में मिल कर फ़ैसला कर लेवे, ताकि अदालत तक नौबत न पहुँचे, क्योंकि ऐसे झगड़ों में, पीछे करके, बहुत ख़र्च बे-फ़ायदा होता है और तकलीफ़ और चिंता बे-फ़ायदा उठानी पड़ती है कि जिससे परमार्थी के अभ्यास में बहुत ख़लल पड़ता है।

(६) परमार्थ और अपने मत के मुआमले में भी मुर्खों के साथ बहस और हुज्जत बे-फ़ायदा न करे। जो कोई न माने, तो उस पर किसी तरह का ज़ोर और दबाव न डाले और न लड़ाई और झगड़ा करे, बल्कि ऐसे लोगों से अपने मत और अभ्यास को गुप्त रक्खे।

(१०) बिरादरी और दोस्त और आश्ना और पड़ोसी लोगों की तान और मलामत का ख़्याल कर के अपनी परमार्थी कार्रवाई में ढीला न होवे। ये सब मूर्ख हैं और इनकी परमार्थी अक़्ल और समझ बालकों के मुवाफ़िक़ है। फिर इनकी बात-चीत पर ख़्याल करना, अक़्लमन्दों का (जो कि परमार्थ की समझ दुरुस्त रखते हैं) काम नहीं है। जहाँ तक बने, ऐसे लोगों से अपना बचाव करके दूर रहना या ज़्यादा हेल-मेल न करना मुनासिब है और उनके हक़ को, इस वजह से कि वे परमार्थ में विघ्न डालते हैं, रोकना

या बन्द करना मुनासिब नहीं है। परमार्थी शख़्स को क्षमा और बरदाश्त करना चाहिए।

(११) जो कोई परमार्थी कार्रवाई में ख़लल डाले या उल्टी सलाह बतलावे, उसकी बात नहीं माननी चाहिये, लेकिन उसके साथ हुज्जत या तकरार करना या अपनी समझौता देना ना-मुनासिब है।

७—व्यवहार या संसारी शुभ-अशुभ कर्म की तफ़सील यह है :-

(१) शुभ कर्म यह है कि जहाँ तक मुमकिन होवे, मन से, बचन से, और कर्म करके सब को सुख पहुँचाना और जो सुख न पहुँचा सके, तो दुख भी न देना। जो तन और धन थोड़ा बहुत इस काम में लगे, और अपने परमार्थ में किसी तरह का ख़लल न पड़ता होवे, तो उसके लगाने में दरेग़ (सोच) न करे।

(२) अशुभ कर्म यह है कि ख़ास अपने या किसी अपने अज़ीज़ के मतलब के लिए, किसी को मन से, बचन से, या कर्म करके दुख पहुँचाना। जहाँ तक मुमकिन होवे इस मुआमले में, परमार्थी को एहितयात और परहेज़ करना मुनासिब है।

(३) लेकिन जो लोग ब-सबब परमार्थी कार्रवाई के दुखी होवें यानी जो वे उल्टी सलाहें देवें और यह उनकी बात न

है। फिर जो कोई ऐसे गुरुओं का, सच्चे मन और सच्ची दीनता और भाव के साथ संग करेगा, वे उसको थोड़े अर्से में, वह छँटी हुई बातें और जुगती, जो कि कुल्ल का मक्खन है, अपनी मेहर और दया से समझा कर, और अंतर में अभ्यास करा कर, सब कारख़ाना क़ुद्-रत का दिखला देंगे। फिर विद्यावान की क्या ताक़त कि ऐसे परमार्थी अभ्यासी का मुक़ाबला करे, या उसके साथ परमार्थ की बात-चीत कर सके? क्योंकि वह लिखी-पढ़ी बातें, तोते की तरह बना सकता है, और अंतर के क़ुदरत के भेद से बिल्कुल बे ख़बर है, और अभ्यासी परमार्थी असल हाल क़ुदरत का, अंतर-दृष्टि के साथ देख कर, कहता है। इस वास्ते इन दोनों में ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ है, यानी विद्यावान मन और इन्द्रियों के घाट पर बैठा हुआ, अक़्ली बातें, अंधों के मुवाफ़िक़ करता है और अभ्यासी, रूहानी यानी सुरत की दृष्टि से देख कर, भेद कहता है। वह विद्यावान मंज़िल पर कभी नहीं पहुँचेगा, और जनम-मरन की फाँसी उसकी कभी नहीं काटी जावेगी, और यह प्रेमी परमार्थी, एक दिन, अपने निज घर में पहुँच कर, सच्चे मालिक का दर्शन पाकर, और जनम-मरन से रहित होकर, परम आनन्द को प्राप्त होगा।

———

बचन २९

वर्णन महिमा सुरत-शब्द मार्ग और संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का, कि जिससे, सहज में, जीवों का सच्चा उद्धार होता है

१–इस दुनिया में आम तौर पर, और ख़ास कर इस ज़माने में, दुख ज़्यादा है, और आराम कम, और सब जीव आराम की प्राप्ति और दुख की निवृत्ति के लिये, अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ जैसा कि दुनिया में दस्तूर है जतन करते हैं, पर निर्मल और ठहराऊ सुख और आनंद किसी को हासिल नहीं है। और जो कोई ज़्यादा सुखी नज़र आता है, वह भी दुख से ख़ाली नहीं है, क्योंकि रोग और सोग सब जीवों के साथ लगे हुए हैं, और उनके मुतलक़ दूर करने का जतन किसी के इख़्तियार में नहीं है।

२–ऐसा सुख और आनन्द कि जो हमेशा क़ायम रहे, और महा निर्मल होवे, सिर्फ़ संतों की जुगत की कमाई से हासिल हो सकता है, और वह अभ्यास रूहानी है, यानी सुरत को अन्तर में चढ़ाने से हासिल होता है।

देह धर कर, दुख-सुख सहता रहेगा, और जिस क़दर उसकी आसक्ति और बंधन, जीवों और पदार्थों में होगा, उसी क़दर कर्म करेगा, और उनका फल, दुख-सुख भोगेगा, और फिर, उसी स्वभाव और भोगों की आसा के सबब से, बारम्बार, ऊँचे-नीचे देश में देह धरता रहेगा, यानी जनम मरन के चक्कर से उसका बचाव नहीं होगा और सख़्त दुक्खों में, कोई उसकी सहायता नहीं कर सकेगा।

८—इस वास्ते, ब-नज़र बचाव जनम-मरन और दुक्खों के, जो कर्मों के सबब से भोगना पड़ता है, हर एक जीव को लाज़िम और मुनासिब है, कि राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत लाकर, अपने जीव के कल्यान के वास्ते, थोड़ा-बहुत अभ्यास, सुरत-शब्द मार्ग का, और ध्यान संत सतगुरु का करें।

९—दुनिया में सब जीव, सुख के कारण और दुख के निवारण के वास्ते, हर एक तरह का जतन और मेहनत कर रहे हैं, और यह सुख तुच्छ और नाशमान है, और चाहे जैसे भोग और पदार्थ हासिल हो जावें, लेकिन वह एक दिन मृत्यु के समय छोड़ने पड़ेंगे, और उनके छोड़ने का भारी दुख सहना पड़ेगा। फिर, किस क़दर जीवों पर फ़र्ज़ और लाज़िम है, कि वास्ते हासिल करने निर्मल और ठहराऊ आनंद, और दूर होने तकलीफ़ और दुक्खों के, थोड़ी मेहनत अभ्यास की, जो कि निहायत सहज है और

जिसमें थोड़ा सा वक़्त ख़र्च करने से भारी फ़ायदा मिल सकता है, गवारा करें ?

१०–कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का, और भी बड़ाई उनकी जुगत यानी सुरत-शब्द मार्ग का वर्णन किस तरह किया जावे, कि ऐसी दया जीवों पर, आज तक किसी ने नहीं की, और न ऐसी सहज जुक्ति कि जो गृहस्थ और विरक्त और औरत और मर्द और जवान और बूढ़ा, आसानी के साथ कमा सके, कभी प्रकट हुई। इस अभ्यास से जीवों का उद्धार सहज में होना मुमकिन है। और पिछले ज़माने में, महा कठिन अभ्यास ऋषीश्वर और मुनीश्वर और जोगी और जोगीश्वरों और औलियाओं ने जारी किये, कि जो विरक्तों से, मुश्किल से बन पड़ते थे। और फिर भी उनमें ख़तरे बहुत थे, और गृहस्थियों से और खास कर औरतों से तो बिल्कुल नहीं बन सकते थे। और इस सबब से ये सब, कोई कमाई, अपने जीव के कल्यान के वास्ते, न कर सके। अलबत्ता शुभ कर्म कोई-कोई जीवों से बन पड़े, और उसका फल उन्होंने कोई दिन के वास्ते दुनिया में, या स्वर्ग लोक में, पाया, यानी कुछ अर्से तक सुख भोगा, और फिर मृत्यु लोक में जनम लिया यानी उनका आवागमन न छूटा।

११–अब जो जुगत यानी अभ्यास कि राधास्वामी दयाल ने जारी फ़रमाया, उसकी ऐसी भारी महिमा है कि

जो वह किसी जीव से मत को समझ कर, शौक़ के साथ, तीन दिन भी बन पड़ा, तो भी उसके उद्धार का सिलसिला जारी हो गया, और चार-पाँच जनम में सतगुरू का संग पाकर, और उस जुगती की कमाई करके, सत्तलोक यानी संत देश में पहुँच कर, अजर-अमर हो गया, और परम आनन्द को प्राप्त हुआ कि जहाँ काल-कलेश और आवागमन का चक्कर नहीं है।

१२—सबूत इस बात का यह है कि जो कोई एक मर्तबा जुल्लाब लेता है, या फ़स्द खुलवाता है, या जोंक लगवाता है, तो उसी मौसम में, वर्ष या छः महीने बाद, मादा और ख़ून की रुजू उसी तरफ़ को, वास्ते निकलने के, होती है। जब कि मादा और ख़ून में, जो कि ब-मुक़ाबले सुरत यानी रूह के निहायत जड़ हैं, ऐसा ख़वास पाया जाता है, कि एक मर्तबा उनकी रुजू एक तरफ़ को हो जावे तो फिर बारम्बार वक़्त मुक़र्ररा पर, उसी तरफ़ को दौड़ते हैं, फिर सुरत-चैतन्य जिसका देश सब से ऊँचा है, जो शौक़ के साथ तीन दिन अपने घर की तरफ़ को रुजू करके चलने लगे, तो वह उसी खवास के मुवाफ़िक़, बारम्बार उसी तरफ़ को, वक़्त २ पर, दौड़ेगी और नीचे के देश की तरफ़ जो चौरासी का घर है, कमतर रुजू करेगी। और जब कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु, जिनकी सरन में आकर मत को अच्छी तरह समझा, और

उसकी प्रतीत लाकर अभ्यास शुरू किया, उसके सहाई हुए, तब उनकी मेहर और दया से, चौरासी का चक्कर ज़रूर बन्द हो जावेगा, और जब तक कि सत्तलोक में पहुँचना न होगा, तब तक, वे उसको, ऊँचे देश में बासा देते जावेंगे, और उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ा कर, और नर देही में जनम देकर, और हर जनम में आप मिल कर, उससे सतसंग और अभ्यास बराबर कराते जावेंगे, और एक दिन अपने धाम में पहुँचा कर, उसको अमर आनन्द बख़्श देंगे।

१३–सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास की ऐसी महिमा है कि जिस किसी ने इसकी कमाई शुरू कर दी और जिस क़द्र कि उससे, एक जनम में बन पड़ी, वह दूसरे जनम में संत सतगुरु का उपदेश लेते ही, और अभ्यास शुरू करते ही, फ़ौरन फुर आवेगी, यानी जिस क़द्र रास्ता तै करके, जिस मुक़ाम तक उसकी सुरत पहुँची है, उस मुक़ाम पर, फ़ौरन चढ़ जावेगी, और उसके आगे कमाई यानी चलना और चढ़ना शुरू कर देगी। इसी तरह से हर जनम में कमाई और चढ़ाई बढ़ती जावेगी, जब तक कि संत सतगुरु के देश में पहुँच कर, निःचिंत न होगी। और फिर जनम नहीं होगा और अपने सच्चे मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के दर्शनों का आनंद और बिलास पाकर हमेशा को मगन हो जावेगी।

१४–संत सतगुरु दयाल की मेहर और दया की क्या महिमा वर्णन की जावे कि जो जीव सच्ची दीनता और भाव के साथ, एक मर्तबा, उनकी सरन में आया और सतसंग करके, उनके मत और भेद को समझ कर, और उपदेश लेकर, चंद रोज़ भी उनके अभ्यास की कमाई करी, तो मृत्यु के समय (जब कि सुरत का, अंतर में, ऊपर की तरफ़ को खिंचाव, क़ुदरती तौर पर, शुरू होता है) उस वक़्त वे आप मेहर और दया से, उस को, तीसरे तिल के मुक़ाम पर, अपना दर्शन देकर और चरनों में उसकी सुरत को लपेट कर, ऊँचे देश में ले जाते हैं, और उसकी लगन और कमाई के मुवाफ़िक़, जहाँ मुनासिब समझते हैं, उसको बासा देकर और अपने अमृत-रूपी बचन सुनाकर, उसकी प्रीत और प्रतीत को बढ़ाते रहते हैं। और फिर जब संत सतगुरु संसार में आवें और सतसंग खड़ा करें, तब उस सुरत को नर देही में जनम देकर, और अपनी दया से खींच, कर, सतसंग में शामिल करते हैं, और दिन २ उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ा कर और सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास करा कर, उसको चढ़ाते चले जाते हैं। और जो कि मंज़िल दूर-दराज़ है, इसी तरह उसको, जब तक कि उनके धाम में न पहुँचे, जनम देकर, और कमाई करा कर, रास्ता तै कराते जाते हैं, और जब २ ह देछूटे, तब तब, उसको ऊँचे देश में, उसकी कमाई

के मुवाफ़िक़, पहुँचा कर बासा देते हैं, और जिस जनम में निज धाम में पहुँच गया, तब ही काम पूरा हो गया और फिर जनम लेने की ज़रूरत नहीं रही।

१५–खुलासा यह है कि संत सतगुरु ऐसे दयाल हैं कि जब तक उनका जीव, निज धाम में न पहुँचे, तब तक उसको जनम देकर, और हर जनम में कमाई करा कर, मृत्यु के समय, आप उसके अन्तर में प्रकट होकर, उसको अपने संग ऊँचे देश में लेजा कर बासा देते हैं, और वहाँ भी उसकी ख़बरगीरी और सम्हाल करते रहते हैं, यानी बचन सुना कर उसकी प्रीत और प्रतीत को बढ़ाते रहते हैं कि वही ताक़त लेकर जीव दूसरे जनम में ज़्यादा से ज़्यादा कमाई करता चला जाता है, और इस तरह एक दिन निज धाम में पहुँच कर निःचिंत हो जाता है।

१६–संत सतगुरु की दया ज़्यादा से ज़्यादा है। उसकी महिमा कहन-सुनन से ज़्यादा है। ऐसी दया कभी किसी ने नहीं करी और न कोई कर सकता है, यानी जो जीव कि उनकी सरन में आये और तन, मन, धन से उनकी भक्ति करी, तो सिर्फ़ उनका ही उद्धार नहीं, बल्कि उनके कुटुम्बियों तक का उद्धार फ़रमाते हैं, यानी जिस क़दर जिसकी भक्ति है, उसी क़दर उसकी, और उसके कुटुम्ब की रक्षा, और सम्हाल, और उद्धार करते हैं, यानी तीन कुल और सात कुल और जो सबसे बढ़कर भक्ति होवे

तो बे-शुमार जीवों का उद्धार उसके वसीले से हो जाता है।

१७–कुलों की तफ़सील यह है कि तीन कुल में एक अपने माँ-बाप का, एक नन्साल का, और एक ससुराल का, और सात कुल में, तीन पुश्त भक्त की, दो नन्साल और दो ससुराल की, यानी भक्त के (१) माँ-बाप और (२) दाद-दादी और (३) भक्त की औलाद और (४) नाना-नानी और (५) मामा-मामी और (६) सास-सुसर और (७) साला और सलहज का उद्धार होता है।

१८–अब ग़ौर करना चाहिये कि किस क़दर महिमा सुरत-शब्द मार्ग की है कि जिससे बढ़ कर अभ्यास कोई रचना भर में नहीं है, यानी शब्द की धार पर जो कि रूह और जान की धार है, अभ्यासी सवार होकर निज घर को जाता है। प्राण की धार, सुरत की धार से, चैतन्य है, और कुल्ल धारें (जो कि माया के घेर से निकली हैं) सुरत की धार से ताक़त लेती है। फिर सुरत यानी जान की धार से बढ़ कर कोई धार नहीं रची गई। इस वास्ते, सुरत-शब्द मार्ग से बढ़ कर कोई अभ्यास नहीं हो सकता। अब इसके आसान और निर्विघ्न होने की क्या सिफ़त की जावे कि लड़का और जवान और बूढ़ा इस अभ्यास को, बग़ैर किसी क़िस्म के ख़तरे के, अपने गृहस्थी में बैठे हुए और उद्यम करते हुए, थोड़े शौक़ के साथ, संत सतगुरु का बल लेकर कर सकते हैं। ऐसा मार्ग आज तक प्रकट नहीं

हुआ, नहीं तो पिछले वक़्त के लोग क्यों हठ-योग और प्राणायाम वग़ैरा के साधन में पचते और खपते और फिर भी पूरा फल यानी सच्चा उद्धार हासिल नहीं हुआ।

१६—सिवाय इसके, सुरत-शब्द मार्ग की एक और भारी सिफ़त यह है कि जो कोई इसका अभ्यास करता है, वह भारी से भारी कष्ट और क्लेश और ख़ौफ़ और चिंता में, थोड़ी तवज्जह अपने अन्तर में, ऊँचे के देश की तरफ़ करने से, फ़ौरन थोड़ा-बहुत बचाव यानी रफ़ाह हासिल कर सकता है। ऐसे वक़्त में, इस दुनिया में कोई किसी का मद्दगार नहीं हो सकता, लेकिन शब्द का अभ्यास फ़ौरन थोड़ी-बहुत उसकी कमाई के मुवाफ़िक़ मदद दे सकता है। यह बात इस दुनिया में नापैद है, मगर संत सतगुरु की दया से, अदना से अदना जीव को, जो उनकी सरन में आया, सहज में प्राप्त हो सकती है। यह महिमा इस अभ्यास की सब से भारी है।

२०—इसी तरह, संत सतगुरु की दया और मेहर की बड़ाई का ख़्याल करो कि जो जीव सच्चे मन से सरन में आया, उसका उद्धार और उसके कुटुम्ब का उद्धार, अपनी दया से आप करते हैं, यानी अपनी मेहर का बल देकर, और थोड़ा-बहुत अभ्यास करा कर, उसको ऊँचे देश में आप ले जाते हैं, और फिर तीन-चार जनम देकर और हर जनम में ज़्यादा कमाई करा कर, निज घर में पहुँचा कर, सच्चा और पूरा

उद्धार फ़रमाते हैं। ऐसी दया न कभी हुई और न सिवाय संत सतगुरु के, और कोई कर सकता है। पिछले ज़माने में, हज़ारों और सैकड़ों वर्ष, लोगों ने तप-जप वग़ैरा, बड़ी मेहनत और तकलीफ़ के साथ किये, पर सिवाय शुभ कर्म के, और फल नहीं मिला, और न उनका सच्चा उद्धार हुआ।

२१–अब, सुरत-शब्द मार्ग और संत सतगुरु की दया की ऐसी महिमा सुन कर, जो जीवों को प्रतीत न आवे, और उनके हिरदे में प्रीत और शौक़ न जागे, तो जानना चाहिए कि वे महा अभागी हैं, और काल और माया के साथ उनका संजोग लगा हुआ है कि जिसके सबब से, वे, उन्हीं के घेर और जाल में फँसे रह कर, बारम्बार जनमेंगे और मरेंगे, और ऊँची-नीची जोनों में भरम कर, दुख-सुख सहते रहेंगे, और कोई उनकी सहायता नहीं करेगा।

२२–संत सतगुरु, बचन से, जीवों को समझाते-बुझाते हैं। और जो कोई न माने तो उस पर किसी तरह का ज़ोर और दबाव नहीं डालते, यानी जीवों की आज़ादगी में, जो मौज से हर एक को दी गई है, दख़ल नहीं देते। जो उनके बचन की प्रतीत लाकर, उनकी जुक्ति का अभ्यास करेगा, वह परम पद को पावेगा और जो नहीं मानेगा वह काल-देश में भरमता रहेगा।

बचन ३०

क़ुदरती सबूत इस बात का कि सिर्फ़ राधास्वामी मत में, असल भेद सच्चे मालिक और उसकी क़ुदरत का, और सच्चा और पूरा तरीक़ा जीव यानी सुरत के सच्चे और पूरे उद्धार का, वर्णन किया है, और जिसके समझने और अभ्यास करने के वास्ते कुछ ख़ास ज़रूरत विद्या के पढ़ने की नहीं है, यानी राधास्वामी मत के भेद और जुगत को मर्द और औरत, पढ़े-लिखे और अनपढ़, सब आसानी से समझ सकते हैं, और उसका अभ्यास मेहर और दया से बे-ख़तरे और निर्विघ्न कर सकते हैं।

१—संत सतगुरु राधास्वामी दयाल फ़रमाते हैं कि कुल्ल रचना में तीन दरजे हैं—एक, निर्मल-चैतन्य देश, जहाँ चैतन्य ही चैतन्य है और माया की मिलौनी नहीं है, और यही देश, संत-देश और दयाल-देश कहलाता है, और इसी देश के ऊपर की तरफ़ कुल्ल मालिक का धाम है, और वह अपार और अनन्त है, और यहीं से आदि-

शब्द की धार प्रकट हुई, जिसने किसी क़द्र फ़ासले पर ठहर कर अगम लोक और अलख लोक और सत्तलोक की रचना करी।

२–दूसरा दर्जा, ब्रह्मांड कहलाता है। इसमें निर्मल-माया प्रकट हुई और चैतन्य से मिल कर इस देश में रचना हुई, और वह रचना जोत-निरंजन ने (जो कि दो कला सत्तलोक से निकस कर नीचे आई) करी।

३–तीसरा दर्जा, निर्मल-चैतन्य और मलीन-माया देश है, जहाँ देवता और मनुष्य और असुर और बाक़ी चारों खान के जीव, पशु और परिंद और कीड़े-मकोड़े और वनस्पति वग़ैरा पैदा हुए।

४–इसी देश में मनुष्य स्थूल देह में बैठ कर अनेक पदार्थों यानी इन्द्रियों के भोगों में और कुटुम्ब-परिवार के सँग बँध गये हैं। अब जो कोई कि आप छूटा हुआ है, या छूटे हुए का संग करके अपने छूटने का सच्चा होकर जतन कर रहा है, और थोड़े अर्से में जो धुर-मंज़िल पर पहुँचने वाला है, वह बँधे हुए जीवों के बंधन काट कर, निज घर में लेजा सकता है, लेकिन शर्त यह है कि जीव उसके बचन को मानें, यानी उसकी हिदायत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करें, और जो हालत कि सच्चे अभ्यासियों पर गुज़रती है, वह जीते-जी देखते जावें, और उस हालत के मुवाफ़िक़ उनकी रहनी दिन २ बदलती जावेगी।

५–संतों ने फ़रमाया है कि कुल्ल रचना धारों की है, और वे धारें सूक्ष्म देश में सूक्ष्म हैं, और स्थूल देश में, स्थूल हो गई हैं। इस वास्ते, जिस धार के साथ, सुरत नीचे उतर कर आई, वह उसी धार को पकड़ के, अपने निज देश को लौट सकती है। यही धार, नूर और जान और शब्द की धार है। सो शब्द की धुन को पकड़ के, स्थान २ पर चढ़ना और चलना चाहिये, क्योंकि शब्द की बराबर कोई सच्चा और पूरा गुरू नहीं है, और शब्द ही अँधेरे में प्रकाश करने वाला और रास्ता दिखा कर धुर-पद में पहुँचाने वाला है।

६–बच्चे की पैदायश और उसके जिस्म के बढ़ाव से, और भी मौत के वक़्त, रूह के खिंचाव की हालत को देख कर, साफ़ ज़ाहिर होता है कि सुरत रूह की धार मस्तक से उतर कर जा-ब-जा पिंड में फैली है, और जाग्रत के समय, निज बैठक उसकी आँख के तिल में है, क्योंकि जहाँ तिल ज़रा भी ऊपर की तरफ़ को खिंचा, फ़ौरन देह और इन्द्रियाँ वग़ैरा बेकार हो जाती हैं। फिर जो हालत कि सुरत के खिंचाव की, अपने भण्डार यानी मस्तक को तरफ़, जैसा कि मौत के वक़्त होती है, अपने जीते-जी, यानी इसी ज़िंदगी में अभ्यास की मदद से होती जावे, तो ऐसे अभ्यासी को फ़ौरन सबूत इस बात का मिल जाता है कि रूह के खिंचाव में, आसानी

से बंधन अंतर और बाहर के, ढीले हो जाते हैं, और दुख-सुख संसार की हानि और लोभ का, और देह और कुटुम्ब-परिवार का, बहुत कम व्यापता है, और अन्तर में आनन्द और सरूर थोड़ा-बहुत मिलता जाता है।

७-संत कहते हैं कि यह दुनिया नाशमान है और कोई चीज़ यहाँ थिर नहीं है, और भोग और विलास भी यहाँ के तुच्छ हैं, यानी पूरी शान्ति उनसे हासिल नहीं हो सकती। इस वास्ते इस संसार में बर्ताव ज़रूरत के मुवाफ़िक़ और मुनासिब तौर पर चाहिये कि जिसमें गहरा बंधन और ग़िरफ़्तारी न हो जावे, नहीं तो थोड़े से सुख के साथ दुख और तकलीफ़ भी सहनी पड़ेगी।

८-और हर एक आदमी को, चाहे मर्द होवे या औरत, लाज़िम है कि गहरे और ठहराऊ सुख की प्राप्ति के लिये, थोड़ा-बहुत जतन ज़रूर करें, और वह सुख, सिर्फ़ निर्मल चैतन्य देश में, जहाँ काल और माया नहीं हैं, प्राप्त हो सकता है। इस वास्ते, उस देश में पहुँचने की जुगत, संत सतगुरु से दरियाफ़्त करके, अपने घट में उसका अभ्यास करना चाहिये, तो थोड़ा-बहुत आनन्द अंतर में मिलना शुरू हो जावेगा और वही आनंद रफ़्ता-रफ़्ता अभ्यासी की प्रीत और प्रतीत को जगा कर बढ़ता जावेगा, और एक दिन निज घर में पहुँचा देगा।

९-अब हर एक आदमी को, चाहे औरत होवे या

मर्द, इन बातों पर, जो नीचे लिखी जाती हैं, और जो रोज़मर्रा उनकी नज़र से गुज़रती हैं, या जिन का बर्ताव रोज़मर्रा उनकी देह यानी उनके आपे में जारी है, ग़ौर करके, अपने जीव के कल्यान के वास्ते, और भी वास्ते फ़ायदे और आराम के, इस दुनिया में, ज़रूर कार्रवाई मुनासिब, मुवाफ़िक़ हिदायत संतों के, करना चाहिए, नहीं तो यहाँ भी और आइन्दा भी बहुत कष्ट और कलेश सहना पड़ेगा, और फिर उसके दूर करने का जतन बहुत मुश्किल हो जावेगा और फिर पछताने और अफ़सोस करने से कुछ हासिल नहीं होगा। और वे बातें ये हैं :—

(१) सुरत-रूह कुल मालिक राधास्वामी दयाल की अंस है, जैसे सूरज और सूरज की किरन, क्योंकि कुल्ल कार्रवाई रचना की सुरतों के द्वारे हो रही है और सम्हाल उसकी, कुल्ल मालिक, जो सब सुरतों का भंडार है, कर रहा है। यानी एक-एक सुरत एक-एक पिंड में बैठ कर, चाहे वह पिंड ज़मीन पर है या आसमान में, उसकी कार्रवाई कर रही है। और यह बात जिस वक़्त से कि पिंड का ज़हूर और बनाव शुरू होता है, और जब तक कि वह पिंड क़ायम रहता है, यानी जब तक कि सुरत उसमें ठहरती है, इस दुनिया में इन आँखों से दिखलाई देती है। देखो किसी दरख़्त के बीज को, जिस वक़्त कि उसमें से कुल्ला

फूटता है यानी सुरत की धार अपना ज़हूर करती है, उसी वक़्त से तमाम शक्तियाँ क़ुदरत की (खैंच-शक्ति, हटाव-शक्ति, बनाव-शक्ति, संहार-शक्ति, चुम्बक-शक्ति, बिजली की शक्ति और रोशनी की शक्ति वग़ैरा) और पाँच तत्त्व (आकाश, हवा, अग्नि, पानी और पृथ्वी) और तीन गुण (सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण) जिनका नमूना यहाँ पर आक्सीजन, हाईड्रोजन और नाइट्रोजन गैस हैं, हाज़िर होकर, सुरत-रूह की ताबेदारी में, आपस में रल-मिल कर, पिंड के बनाव और बढ़ाव और सम्हाल में मदद देते हैं। और जब तक रूह उस पिंड में ठहरी रहे, तब तक बराबर इसी तरह ख़िदमत और सेवा करते हैं। और जिस वक़्त कि रूह पिंड को छोड़ती है, उसी वक़्त आपस में लड़-भिड़ कर उसका रूप और रंग बिगाड़ कर सब हट जाते हैं। सिर्फ़ पृथ्वी तत्व का कारज यानी ख़ाक पड़ी रह जाती है। यही हाल कुल्ल जानदारों का, वक़्त पैदाइश से और अख़ीर दम तक, इन आँखों से, जिस क़दर कि मुमकिन है, नज़राई देता है। और यही सबूत इस बात का है कि यह सुरत उस कुल्ल मालिक की अंस है। क्योंकि जब इसकी ताक़त ऐसी बड़ी है कि जहाँ यह अपना ज़हूर करे यानी इसकी प्रथम धार प्रकट होवे, उसी जगह और उसी वक़्त से तमाम क़ुदरत की शक्तियाँ और मसाला इसकी ताबेदारी में हाज़िर होकर कार्रवाई करते हैं, फिर वह

भंडार, कि जिसकी यह सुरत एक ज़र्रा है, कुल्ल का कर्त्ता और कार-फ़रमा यानी सर्व-समर्थ हुआ, और उसी का नाम सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल है और यह सुरत उसकी अंस साबित हुई।

(२) माया एक पदार्थ ग़ुबार-रूप और जड़ है। सुरत-चैतन्य की धार के मिलने से, इसमें से पाँच तत्व और तीन गुन और अनेक शक्तियाँ, जो कि रचना का मसाला और कारकुन हैं, पैदा हुईं। यह माया, वक़्त उतार सुरत के, अपने घेर में, उसका ग़िलाफ़ होती चली आई, यानी तह पर तह उस पर चढ़ते गये। यहाँ तक कि इस लोक में सुरत निहायत स्थूल ग़िलाफ़ यानी पिंड में बैठ कर, उसके औज़ार यानी इन्द्रियों के द्वारे कार्रवाई करती है, और इसी तरह सूक्ष्म देह से सूक्ष्म रचना में, जिसको स्वप्न देश और आलम-ए-मलकूत कहते हैं, कार्रवाई करती है। अब, जब तक कि सुरत माया के घेर के, यानी रचना के तीसरे और दूसरे दरजे के पार न जावे, तब तक अपने निज देश में पहुँच कर परम सुख को प्राप्त नहीं होगी।

(३) माया के ग़िलाफ़ को देही कहते हैं। और इस का जड़ होना इस तरह पर साबित है कि जब आदमी सो जाता है, उस वक़्त, उसको अपनी देह और दुनिया की कुछ ख़बर नहीं रहती, या जब डाक्टर लोग क्लोरोफ़ार्म सुँघा देते हैं और उसके सूँघने से रूह की धार आँख के

मुक़ाम से (जहाँ कि उसकी जाग्रत अवस्था में बैठक है) हट जाती है, तब बदन काट डालते हैं, और उसका कुछ दर्द और दुख नहीं होता, या यह जाग्रत में कोई दुख या दर्द या तकलीफ़ हो रही है और जब नींद आ गई, फिर वह दुख नहीं व्यापता, बल्कि स्वप्न-अवस्था में सूक्ष्म शरीर से भोग-विलास और ऐश और आराम करता है, और स्थूल देह के रोग-सोग और चिन्ता का वहाँ ख़्याल भी नहीं रहता। इसी तरह जब गहरी नींद में सो जाता है, तब सूक्ष्म शरीर और उसकी कार्रवाई भी मौक़ूफ़ हो जाती है। इस बयान से इन दोनों शरीर का यानी, स्थूल और सूक्ष्म का, ग़िलाफ़ होना साबित हो गया, और यह कि सुरत-रूह का स्वरूप उनसे बिलकुल जुदा है और उसी की धार से ये चैतन्य हैं, और धार के खिंच जाने पर बेकार हो जाते हैं।

(४) जितने भोग बिलास हैं, उनका सुख और रस और स्वाद, सुरत की धार के वसीले से मालूम होता है। जो वह धार शामिल न होवे तो कोई स्वाद और रस नहीं आवें। और स्वप्न-अवस्था की कार्रवाई का विचार करने से साबित होगा कि सर्व सुख, रस और स्वाद सुरत चैतन्य की धार में हैं, क्योंकि स्वप्न अवस्था में कुल्ल इन्द्रियों के भोग करता है और उस वक़्त वहाँ कोई पदार्थ बाहर मौजूद नहीं होता, और न स्थूल इन्द्रियाँ कुछ काम

करती हैं। फिर सर्व रस और स्वाद् और उनके भोगने की शक्ति का, अंतर में, सुरत की धार में मौजूद होना साबित हो गया।

(५) अब ग़ौर करो कि जब सुरत की धार में सर्व-रस और सुख मौजूद हैं और यह सुरत एक ज़र्रा है उस कुल्ल मालिक का, जिसका रचना के पहिले दरजे में अथाह सिंध रूप करके बासा है, और जहाँ माया की मिलौनी का गद्लापन नहीं है, फिर वहाँ के सुख और रस और आनन्द का कौन और कैसे अन्दाज़ा कर सकता है? वह आनन्द बेअंत और अपार है।

(६) यह संसार माया का देश है और सुरत का निज घर, पहिले दरजे, यानी राधास्वामी धाम में है। यहाँ शुरू में जोत-निरंजन यानी माया-ब्रह्म, सुरत को, सत्तपुरुष से माँग कर, नीचे लाये और फिर इस को तन-मन में घेर कर, कर्म जाल में फँसाया, और तरह २ की आसा इस संसार की बँधवाई, जिसका नतीजा यह हुआ कि सुरत, कर्म और बासना के सबब से, देह में बारम्बार आती है, और उसके संग, यहाँ जड़ पदार्थों और दूसरे जीवों के संग बँध कर, दुख-सुख भोगती है, और जब देह को छोड़ जाती है और जो इसकी चाह भोगों में रही, और देही को अपना रूप और इस संसार को अपना देश जाना, तो बारम्बार उस ज़बर चाह और स्वभाव के मुवाफ़िक़, देह धारन करेगी

और फिर छोड़ेगी, यानी जनम-मरन का चक्कर नहीं हटेगा और जो दुख-सुख कि देह के साथ लाज़िमी हैं, ज़रूर भोगने पड़ेंगे। और उन सख़्त दुक्खों में कोई इसका सच्चा और पूरा सहाई और मददगार नहीं हो सकता।

(७)–जब तक कि सुरतें इस देश में, देहियों के साथ बँध कर, सुख भोगती रहीं तब तक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल ने ख़ास तवज्जह उनकी तरफ़ नहीं की। लेकिन जब से कि सुरतों को, इस संसार में दुख विशेष होने लगा, तब दया करके, राधास्वामी दयाल, संत सतगुरु रूप धारन करके, आप इस संसार में प्रकट हुए और अपने बचन से सुरतों को समझाया कि यह देश काल का है। रास्ते का भेद और जुगत चलने की, सुरत-शब्द मारग से बतला कर अपनी दया के बल से, उनको अन्तर में चढ़ाना और आहिस्ता २ पिंड से न्यारे करना शुरू किया, और ऐसी मौज, मेहर और दया से, फ़रमाई कि जो कोई उनके चरन की सरन लेकर, उस जुगत की कमाई सच्चे मन से प्रेम-अंग लेकर शुरू करे, उसको वे आप दया से मदद देते हुए, काल और कर्म और माया के विघ्नों से बचा कर, घट में एक मुक़ाम से दूसरे और दूसरे से तीसरे और इसी तरह धुर धाम में पहुँचा कर, चरनों में बासा देंगे, कि जहाँ हमेशा के वास्ते, परम-आनन्द को प्राप्त हो कर, दर्शन के बिलास का सुख और आनन्द लेता रहे। सुरत-शब्द

मार्ग से मतलब यह है कि जिस धार पर सुरत उतर कर आई, उसी धार को पकड़ कर लौट जावे, और वही धार रूह और जान और अमृत और नूर और शब्द की धार है, यानी आवाज़ आसमानी को सुनते हुए, जहाँ से कि वह आवाज़ आती है, उस मुक़ाम पर पहुँचना।

(८) जो जीव कि इस बचन को सुन कर और ऊपर की लिखी हुई बातों का अपने मन में ग़ौर और विचार करके समझेंगे कि जो कि इस देह और देश को छोड़ना ज़रूर पड़ेगा, और जो बासना देह और भोगों की रही तो फिर जन्म लेना भी ज़रूर होगा, इस वास्ते, जनम-मरन और देह के दुख-सुखों से बचने की नज़र से, और वास्ते हासिल करने परम आनंद के, सुरत के निज देश में, मुनासिब और ज़रूर है कि आँख के स्थान से, सुरत को, अन्तर में ऊँचे की तरफ़ (जहाँ कि सुरत का निज देश है) उल्टाने का जतन, जैसा कि राधास्वामी दयाल ने बताया है, किया जावे, तो उनको वक़्त तलाश, मौज से ज़रूर पता राधास्वामी दयाल के सतसंग का मिल जावेगा, और वहाँ से जुगत अभ्यास की भी मालूम हो जावेगी। और जब वे सच्चे मन से प्रेम के साथ अभ्यास शुरू करेंगे, तब उनको राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से, अंतर और बाहर, मदद करते जावेंगे कि

जिसमें उनका रास्ता आहिस्ता २ तै होता जावे और एक दिन धुर धाम में पहुँचा देंगे।

(९) और जो जीव कि इस बचन की प्रतीत न करके संसार और उसके भोग-बिलास में फँसे रहेंगे, वे ब-दस्तूर जनम-मरन और देहियों के साथ जो दुख-सुख लाज़िमी हैं भोगते रहेंगे, और काल के जाल से छुटकारा उनका नहीं होगा, क्योंकि सिवाय संत सतगुरु के और किसी की ताक़त नहीं है कि जीवों को, काल के जाल से निकाल कर निज घर में पहुँचावे। रास्ते के, यानी तीसरे और दूसरे दरजे के मुकामों में जोगी और जोगीश्वर और दूसरे महात्माओं की मदद से चाहे कोई पहुँच जावे, पर कुछ अर्से तक सुख भोग कर फिर नीचे उतारा जावेगा, यानी जनम-मरन की फाँसी चाहे जल्द होवे या देर करके, काटी नहीं जावेगी, और निज घर में, जो कि माया के घेर के पार है, बासा नहीं पावेगा।

(१०) तीर्थ, बृत और मूर्ति-पूजा, और जप, तप आदिक साधन करने वाले, और विद्या के पढ़ने वाले लोगों को, इन कामों को करने से सच्ची मुक्ति का फल नहीं मिल सकता, क्योंकि इन कामों का कुछ भी ताल्लुक सुरत-रूह का धार से, जो मस्तक से उतर कर आँखों के मुक़ाम में ठहरी है, नहीं है, और न इनका असर कुछ उस पर पहुँचता है। फिर ये काम मुक्ति के साधन कैसे हो सकते हैं? मुक्ति या

उद्धार, बंधनों से छूटने, और निज घर में (जहाँ माया नहीं है) पहुँचने का नाम है। और जब कि सुरत ब-दस्तूर आँखों के मुकाम पर तन, मन और इन्द्रिय और जगत में बँधी रही, और कुछ भी उसकी, इस स्थान से, तरफ़ अपने निज घर के, हरकत नहीं हुई, तो बन्धन कैसे छूट सकते हैं ? और सुरत और मन ऊपर की तरफ़ को कैसे चढ़ सकते हैं ? इस वास्ते, जिस क़दर बाहरमुख कार्रवाई कि कुल्ल मतों में, जो आज-कल जारी हैं, हो रही है, वह सब शुभ कर्म का फल, यानी थोड़े अर्से के वास्ते सुख दे सकती है, पर सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिए यह कार्रवाई कुछ काम नहीं दे सकती।

(११) इसी तरह जो लोग किसी मत में अन्तरमुख कार्रवाई करते हैं, यानी मुक़ाम नाफ़ या हिरदे या किसी और चक्र में (जो छः चक्र में शामिल है) अभ्यास नाम का, या ध्यान वग़ैरा, या पवन का रोकना, या ठहराने का जतन कर रहे हैं, और उस कार्रवाई का सिलसिला सुरत की धार से नहीं लगा हुआ है, तो वे भी संत मत के मुवाफ़िक बाहरमुखी हैं। क्योंकि घट दो हैं—एक, स्थूल ताल्लुक पिंड के, उस में छः चक्र हैं, और दूसरा, सूक्ष्म यानी निज घट, जो मस्तक में है। यह दोनों आपस में मुँह मिला कर गर्दन के मुक़ाम पर जमे हुए हैं। नीचे का घट सीधा और ऊपर का घट उल्टा रक्खा हुआ है।

कुल्ल शक्तियाँ और कुव्वतें, ऊँचे दरजे की, निज घट में हैं और कुल्ल मालिक और भी सुरत का बासा निज घट में है। फिर जो अभ्यास कि निज घट तक उसका सिलसिला या असर नहीं पहुँचता है, वह बाहरमुखी और ख़ारिज है। उससे रूह-सुरत पर कोई असर नहीं पहुँचता, और इस वास्ते वह सच्ची मुक्ति का साधन नहीं हो सकता।

(१२) जान की धार से बढ़कर रचना भर में कोई दूसरी धार नहीं है। कुल्ल धारें, सुरत यानी जान की धार के आधीन हैं यानी इसी धार से चैतन्य हैं। फिर सुरत-शब्द मार्ग से (जिसमें सुरत-रूह को, उसकी धार से जो ऊपर से आ रही है, मिला कर, ऊपर की तरफ़ चढ़ाया जाता है) बढ़कर कोई दूसरा रास्ता या जतन असल में पैदा नहीं हुआ और न हो सकता है। इस वास्ते, कुल्ल जीवों को चाहिए कि अपने जीव के कल्यान के वास्ते सिर्फ़ इसी रास्ते पर चलें, यानी सुरत-शब्द जोग की जुगती कमावें, और दूसरे झगड़ों और बखेड़ों में न पड़ें, नहीं तो मुफ़्त तन, मन, धन बरबाद करेंगे। और हासिल उसका, सिवाय थोड़े अर्से के सुख के, और कुछ नहीं होगा। और जब वह पुण्य कर्म, जिन से सुख हासिल हुआ, ख़तम हो जावेगा। फिर जनम-मरन के चक्कर में गिरफ़्तार होकर, नीची-ऊँची जोनों में चक्कर खावेगा, और अपने कर्म और वासना के मुवाफ़िक़ दुख-सुख भोग करेगा।

बचन ३१

वर्णन इस बात का कि संत-मत के मुवाफ़िक राधास्वामी पद कुल्ल का अख़ीर और सिद्धान्त है, और यही अपार और अनंत है। इसके परे और कोई पद नहीं है और न हो सकता है।

१—सब सतसंगियों को इस बात का पूरा निश्चय होना चाहिये कि राधास्वामी धाम कुल्ल आदि और का अंत पद है, और उसके परे कोई और पद नहीं है और न हो सकता है।

२–कुल्ल रचना में तीन दरजे हैं–एक, निर्मल चैतन्य देश, जहाँ सिवाय चैतन्य के दूसरा नहीं है। दूसरा, ब्रह्म और शुद्ध-माया देश, जिसको ब्रह्माण्ड कहते हैं, और जहाँ ब्रह्म (यानी ब्रह्माण्डी मन) प्रधान है। तीसरा, पिंड यानी जीव और मलीन-माया देश, जहाँ माया प्रधान है।

३–इन्हीं तीन देश और उन तीनों देश के प्रधानों के मुवाफ़िक कुल्ल रचना में तीन दरजे हो गये। कुल्ल जिस्मों में, चाहे वह ज़र्रे के मुवाफ़िक होवें या सूरज के, हर एक में, वे तीन दरजे मौजूद हैं। इन दरजों को मस्तक, काया और चरन कहते हैं। और उसी मुवाफ़िक

ये तीन दरजे यानी उत्तम, मध्यम और निकृष्ट यानी आला, औसत और अदना मुक़र्रर हुए।

४–रचना में मस्तक, यानी आला और ऊँचा दरजा, निर्मल और महा विशेष चैतन्य का भण्डार है, और मध्यम दरजा, यानी काया, विशेष चैतन्य यानी ब्रह्माण्डी मन का (जिसको ब्रह्म कहते हैं) देश है। इसी के यह फ़ुरना हुई कि मैं सत्तलोक यानी ऊंचे दरजे के मुवाफ़िक़ रचना करूँ, और एक से अनेक हो जाऊँ। और पिंडी मन इसी की अंश यानी कारज है। और तीसरा दरजा, जिसको चरन और निकृष्ट करके कहा है, माया का देश है। यहाँ जड़ता यानी तमोगुन विशेष है और देह और उसके औज़ार इन्द्रियाँ वग़ैरा उसका कारज हैं।

५–अब समझना चाहिये कि कुल्ल रचना में तीन प्रधान हैं, और हर एक का ख़ास या निज देश जुदा-जुदा है। यानी उस ख़ास देश में उसी की प्रधानता यानी विशेषता है। और वे तीनों प्रधान ये हैं—पहले, सुरत-चैतन्य जिसका निज देश पहिला दरजा है और वही सब से ऊँचा और उत्तम है। दूसरा, मन, जिसका निज देश दूसरा दरजा यानी ब्रह्मण्ड है। तीसरी, माया, जिसका निज देश तीसरा दरजा यानी पिंड (जो कि निकृष्ट है) समझना चाहिये। इन्हीं तीन से कुल्ल रचना, दूसरे और तीसरे दरजे में प्रकट हुई, और ठहरी हुई है। लेकिन पहिले दरजे, यानी

दयाल देश में निर्मल रूहानी रचना है और वहाँ मन और माया बिलकुल नहीं हैं। वहाँ की रचना का ग़िलाफ़ हुबाबी, निहायत लतीफ़ और रूहानी है। माया की मिलौनी वहाँ नहीं है। इसी सबब से वह देश महा उत्तम और महा आनंद का भंडार है।

६—अब मा'लूम होवे कि हर एक दरजे में दो-दो भाग हैं। एक ऊपर का, और एक नीचे का। और हर एक भाग में तीन २ दरजे हैं, यानी हर एक बड़े दरजे में छः छोटे दरजे हुए। चुनांचे पिण्ड में छः दरजे, यानो चक्र, हैं। इसी तरह ब्रह्माण्ड में भी तीन दरजे ऊँचे के भाग में, और तीन दरजे नीचे के भाग में (जहाँ कि तीनों गुण, ब्रह्म, विष्णु, महादेव का निज रूप है) हैं, और ऐसे ही अव्वल दरजे में भी छः स्थान का भेद किया है। सबमें ऊँचा दरजा, अपार और अनन्त और अथाह और अगाध है, और वही कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का निज धाम है।

७—अब ग़ौर करके समझना चाहिये कि जब कि इस रचना में तीन प्रधान का मौजूद होना साफ़ ज़ाहिर है, यानी हर एक जानदार में (१) सुरत रूह और (२) मन और (३) देह और इन्द्रिय वग़ैरा मौजूद मालूम होते हैं, और इन्हीं तीन के वसीले से कुल्ल कार्रवाई हो रही है, यानी सुरत-चैतन्य कुल्ल की कर्त्ता और प्रेरक है, और मन

उससे ताक़त लेकर अपनी कार्रवाई करता है यानी संकल्प-विकल्प उठाता है, या आँकि पहले उसमें गुप्त फुरना या हिलोर होती है (यानी तरंग उठती है) और फिर उसी मुवाफ़िक़, देह और उसके औज़ार इंद्रियाँ प्रकट कार्रवाई करती हैं, और सिवाय इन तीनों के और कोई कारज-कर्त्ता या कारज देने वाला नहीं है।

८—और जब कि इन तीनों यानी (१) सुरत, कारज-करता और (२) मन और (३) देह इन्द्रियाँ वग़ैरा के सिवाय और कोई नहीं है और इन तीनों का देश जुदा २ मुक़र्रर हो गया, तो इन तीन देशों के परे और कोई देश या दरजा नहीं हो सकता। इस वास्ते जो कोई ऐसा कहे कि राधास्वामी धाम के परे और भी मुक़ाम मुमकिन है, यह कहना उसका महज़ ग़लत और ना-दुरुस्त है, और इस वास्ते, राधास्वामी धाम ही, कुल्ल का अख़ीर और सिद्धान्त पद है, और इसके परे दूसरा पद हरगिज़ नहीं हो सकता। वही पद, अपार और अनंत और अथाह है। उसमें कोई दरजा या भाग का होना मुमकिन नहीं है।

९—इस वास्ते, कुल्ल जीवों को, जो राधास्वामी मत में शामिल होवें, इस बचन को अच्छी तरह समझ कर, पूरा निश्चय कुल्ल मालिक राधास्वामी का, हिरदे में धारन करके, उन्हीं के चरनों में पहुँचने की आसा दृढ़ करके, जतन में लगना चाहिये। और किसी तरह का भरम और

सन्देह अपने चित्त में इस क़िस्म का न लाना चाहिये कि जब वेद्-मत के सिद्धान्त के परे संत-मत का सिद्धान्त उससे ऊँचे देश में समझा गया, तो शायद आइन्दा इसके भी परे कोई दूसरा मत अपना सिद्धान्त पद ज़ाहिर करे, क्योंकि ऊपर के लिखे हुए बचन से साफ़ ज़ाहिर और साबित होता है कि राधास्वामी पद के परे और कोई देश का होना ना-मुमकिन है और जो कोई अपने मत की बड़ाई दिखाने को, कोई पद अपनी तरफ़ से नया नाम रख कर बयान करे, तो उसका कहना बिलकुल झूठ और ना-मुमकिन समझना चाहिये। और पहिले तो वह पिण्ड और ब्रह्माण्ड और उसके परे संत अथवा दयाल देश का भेद तफ़सील के साथ नहीं बयान कर सकेगा, क्योंकि किसी मत में यह भेद खोल कर, जैसा कि संतों ने दया करके फ़रमाया है, किसी दरजे तक का भी नहीं लिखा है। फिर जो कोई कि झूठा दावा करे और थोड़ा-बहुत भेद रास्ते का बयान भी करे, तो जानना चाहिये कि वह राधास्वामी मत की किताबों से चोरी करके कहता है। और जो उसकी कहन की, ब-ग़ौर जाँच की जावेगी, तो ज़रूर उसकी चोरी और नादानी, भेद के उल्टे-पल्टे या नीचे-ऊपर के बयान में निकल आवेगी।

१० इस वक़्त में, जो रास्ते का भेद इस क़दर खोल करके कहा गया है, यह कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल

ने, आप संत रूप धर कर, प्रकट किया है। किसी पिछले सँत ने भी इस तरह, सफ़ाई और आसानी के साथ नहीं खोला। फिर किसी जीव की क्या ताक़त कि जो इस क़िस्म का भेद कह सके, सिवाय उस हालत के कि उसने खुद संत सतगुरु से सीखा और समझा होवे ? अब संशय और भरम छोड़ कर, पूरा और पक्का निश्चय राधास्वामी के बचन का मन में धारन करके, सच्ची और पक्की आसा उनके चरनों में पहुँचने की, बाँध कर, सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास शुरू करना चाहिये, और उनकी दया का बल लेकर आहिस्ता २ रास्ता तै करना चाहिये। संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की मेहर से, एक दिन, धुर पद में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होगा, और वहीं विश्राम पावेगा और मालूम होवे कि राधास्वामी मत के अभ्यासी को कुल्ल मतों का सिद्धान्त और फिर वेद मत का सिद्धान्त पद रास्ते में मिलेगा। और वहाँ की सैर करके अभ्यासी की सुरत, ऊपर चढ़ कर, राधास्वामी के निज धाम में पहुँच कर, परम-आनंद को प्राप्त होवेगी।

बचन ३२

शब्द द्वारे सुरत अपने निज घर में (जो कि राधास्वामी धाम है) पहुँच सक्ती है। और

द्वारों से धुर मंज़िल तक नहीं पहुँचेगी। कहीं न कहीं रास्ते में अटक रहेगी और कारज पूरा नहीं बनेगा।

१—जितने द्वारे पिंड में हैं, उन सब पर रूह की धार उतर कर, भोग-बिलास और संसार का कारज करती है। सो इन सब द्वारों से, सुरत के सिमटाव का जतन मुमकिन है, यानी चाहे जिस द्वारे से कोई सुरत को उलटाना चाहे तो वह उलट सकती है।

२—कुल्ल द्वारे पिंड में नौ हैं—यानी दो द्वारे आँखों के, दो कानों के, दो नासिका के, एक मुख, एक लिंग यानी पेशाब की इन्द्रिय, और एक गुदा यानी पाख़ाने की इन्द्रिय।

३—जाग्रत अवस्था में, अगर्चे सुरत की धार सब इंद्रियों के द्वारे पर मौजूद हो कर कार्रवाई करती है, पर आँख के मुक़ाम पर, उसकी ख़ास बैठक समझी जाती है, क्योंकि पुतली के ज़रा से खिंचाव और चढ़ाव में फ़ौरन देह और कुल्ल इन्द्रियाँ बेकार हो जाती हैं।

४—सुरत के चढ़ाने के वास्ते, चाहे जिस द्वारे से शुरू किया जावे, कोई आसरा यानी सवारी ज़रूर दरकार है। बग़ैर इसके, तनाव और खिंचाव और चढ़ाव मुमकिन नहीं है।

५–जिस किसी ने गुदा चक्र से खिंचाव और चढ़ाई शुरू की, वे प्राणों के आसरे चले। यह सवारी बहुत कठिन है। और इसके संजम और परहेज़ भी बहुत मुश्किल हैं। गृहस्थी जीवों से इस अभ्यास का बन आना ना-मुमकिन है, और ख़ौफ़नाक है। यानी ज़रा सी बद-परहेजी और बे-तरतीबी से सख़्त बीमारी या जान के जाने का ख़ौफ़ है। और इसी तरह विरक्तों से भी यह अभ्यास दुरुस्ती से पूरा २ नहीं बन सकता। इस द्वारे पर, यानी गुदा चक्र में, गनेश का बासा है। और बहुतेरे, इस देवता के ध्यान और पूजा में अटक कर यहाँ के यहीं रह गये, और जो किसी बिरले विरक्त से, यह अभ्यास प्राणों की चढ़ाई का, थोड़ा-बहुत दुरुस्ती से बन पड़ा, तो नाभी या हिरदे या कंठ चक्र में पहुँच कर थक गये, और वहीं थोड़ी-बहुत सिद्धि और शक्ति हासिल करके रह गये। कोई बिरला अभ्यासी छठे चक्र तक पहुँचा, और भक्त-राज कहलाया, कोई २ उसके परे चिदाकाश में समाये और जोगी और ज्ञानी कहलाये।

६–किसी २ ने इन्द्री द्वारे से अभ्यास शुरू किया और काम की धार के आसरे चढ़ने का इरादा किया। और किसी क़दर प्राणों के रोकने का अभ्यास भी उसके संग किया। लेकिन यह आसरा या सवारी ऐसी सख़्त और अज़ीत है कि कोई चलने वाला इस रास्ते से, सिवाय किसी

बिरले के, छठे चक्र तक या उसके परे नहीं पहुँचा, और इसी द्वारे यानी इंद्री चक्र में थक कर रह गये। इस मुक़ाम के अभ्यासी यानी उपासना वाले, बाम-मार्गी और भैरवी-चक्र वाले कहलाते हैं और आज-कल के वक़्त में, ये लोग निपट बाहरमुखी चाल-ढाल और ना-मुनासिब खान-पान में बर्ताव कर रहे हैं, कि जिससे कोई परमार्थी फ़ायदा हासिल नहीं होता, बल्कि और घाटा होता है।

७—कोई २ मुख के द्वारे, जिभ्या को, और उसके साथ सुरत-चैतन्य की धार को उल्टा कर, और तालु के मुक़ाम पर जमा कर, अमृत-रस, जो ऊँचे से टपकता है, पीकर तृप्त हो गये। और इतने ही को मुक्ति का साधन समझ कर आगे न चले और इसी आनंद को आत्मानंद समझा।

८—कोई २ नासिका के द्वारे, पवन खींच कर, और भृकुटी तक लेजा कर, और वहाँ चंद मिनट ठहरा कर, फिर दूसरे द्वारे से, नासिका की पवन को निकालने का अभ्यास करने लगे, और इतने ही ठहराव को कुम्भक समझ कर, और कुछ रोशनी जो नज़र आई, उसको आत्मा का प्रकाश मान कर, इतने ही आनंद में तृप्त हो गये। इस अभ्यास को पूरक, रेचक, और कुम्भक कहते हैं। इनकी भी रसोई इससे ज़्यादा नहीं हुई।

९—कोई-कोई कानों को बंद करके, और उन द्वारों से चैतन्य-धार को समेट कर, मजमुआ का शब्द यानी अन-

हद घोर (जो मुताबिक़ पातंजलि शास्त्र के दस प्रकार की आवाज़ है) सुन कर मगन हो गये। और जब मन और इन्द्रियाँ उनकी आवाज़ का रस पाकर, निश्चल हो गईं, तब चित्त के एकाग्र होने से उनको विशेष रस प्राप्त हुआ, और समाधि की सी हालत हो गई। वे, इसी आनंद को आत्मानंद और समाधि की हालत को अपना सिद्धान्त समझ कर, इतनी ही कार्रवाई करके तृप्त हो गये। और शब्द का खोज, कि कौन धुन कहाँ से आती है, न किया। और इसी सबब से पिंड के परे, उनके मन और सुरत नहीं गये, यानी अंतरगत छः चक्र के रहे।

१०–किसी २ ने दृष्टि की साधना इस तौर पर करी कि अपनी नज़र को, दोनों आँखें खुली रख कर, नाक की नोक पर जमाया, या श्याम बिन्दी सफ़ेद दीवार पर लगा कर, या चिराग़ की लौ पर ठहराया, और तरह २ की रोशनी देख कर, और कुछ थोड़ी सी शक्ति दूर-नज़री की हासिल करके तृप्त हो गये, या किसी ने आँखें बन्द करके अपनी नज़र को दोनों भवों के मध्य में, या उससे ऊपर की तरफ़ जमाया, और पाँच रंग की रोशनी को (जो तत्वों का सूक्ष्म और नूरानी स्वरूप है) या सफ़ेद रोशनी ज़्यादा से ज़्यादा चमक के साथ चारों तरफ़ मिस्ल चाँदनी के छाई हुई देख कर, और उसी को आत्मानन्द और आतम दर्शन समझ कर मगन और तृप्त हो गये, और इससे आगे न बढ़े।

११-ये सब अभ्यास वाले सत्त पद से बे-ख़बर थे, क्योंकि इनको सतगुरु, धुर पद के भेदी और पहुँचे हुए, नहीं मिले, और इसी सबब से यह थोड़ी दूर चल कर रास्ते में रह गये। हरचंद कि यह सब जुक्तियाँ ओछी हैं, यानी माया के मंडल में ख़तम हो जाती हैं, पर यह अभ्यासी लोग इन जुक्तियों की भी पहुँच यानी रसाई के मुक़ाम तक नहीं पहुँचे, और उनका आनन्द भी कच्चा और और ओछा रहा, यानी जब माया का भारी चक्कर आया, उस वक़्त उसी की तरफ़ झोका खा गये। सिवाय इसके, इनके अभ्यास में बड़ी भारी कसर भक्ति की रही, यानी इन्होंने किसी को अपना भगवंत क़रार न दिया, और न उसके नाम और धाम का भेद पाया। सिर्फ़ आत्मा को सर्व-व्यापक मान कर, और उसको रोशनी रूप समझ कर, उसी में लै होने का इरादा करके, अभ्यास करते रहे, और हाल यह है कि जो रोशनी उनको नज़र आई, वह या तो तत्वों की थी या आत्मा का भास नीचे के दरजे में था। सिर्फ़ जोगी-ज्ञानी, आत्मा के मुक़ाम तक पहुँच कर चिदाकाश में, जो कि छः चक्र के परे है, लै हुए, और जोगेश्वर ज्ञानी, त्रिकुटी में पहुँच कर, उसके परे महा आकाश में लै हुए, लेकिन ये दोनों प्राणों के चढ़ाने का अभ्यास करके अपने २ सिद्धान्त पद में पहुँचे।

१२-लेकिन जो कि प्राणों की चढ़ाई का अभ्यास

महा कठिन और ख़तरनाक था, इस सबब से कोई बिरले अभ्यासियों को जोगी और जोगेश्वर पदवी हासिल हुई। और बाक़ी अभ्यासी छः चक्र के अंतरगत किसी न किसी स्थान पर रह गये। ऐसी हालत अभ्यासियों की, और बाक़ी लोगों का झुकाव बाहरमुखी कार्रवाई में मिसल तीर्थ, ब्रत और मूर्ति-पूजा वग़ैरा के, और वाचक ज्ञानी और वेदान्तियों का फँसाव विद्या और ग्रन्थों के पढ़ने और पढ़ाने में मुलाहिज़ा करके, कुल्ल-मालिक, सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल आप, संत सतगुरु रूप धर कर, प्रकट हुए, और अति दया करके सीधा और सहज और धुर पद में पहुँचाने वाला मार्ग सुरत-शब्द और ध्यान का, प्रकट फ़रमाया, कि जिसका अभ्यास हर कोई औरत और मर्द, लड़का, जवान और बूढ़ा और पढ़ा-लिखा और अनपढ़, चाहे गृहस्थ होवे या विरक्त, आसानी से, बग़ैर किसी ख़तरे और विघ्न के, कर सकता है।

१३—शरह उस अभ्यास की, जो कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने दया करके प्रकट किया, यह है कि पहिले तो भेद धुर धाम का मय मंजिलों यानी स्थानों के, जो कि रास्ते में जीव यानी सुरत की पिंड में बैठक के मुक़ाम से धुर पद तक वाक़े हैं, बतलाया। और फिर हर एक स्थान का रूप और वहाँ के शब्द का भेद, जो कि जुदा २ है, समझाया, और हुक्म दिया कि मन और सुरत

और दृष्टि को आहिस्ता २ उल्टा कर, धुन और रूप के संग, घट में ऊपर की तरफ़ चढ़ाना शुरू करो। जिस क़दर मन और सुरत सिमट कर, ऊपर की तरफ़ सरकते जावेंगे, उसी क़दर, रस और आनन्द मिलता और बढ़ता जावेगा और सतगुरु की दया और राधास्वामी दयाल की मेहर से आहिस्ता २ और सहज २ सुरत और मन, पिंड से न्यारे होकर, ब्रह्माण्ड में चढ़ते जावेंगे और फिर मन का संग छोड़ कर, सुरत, उसके परे, सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के देश में चढ़ कर पहुँचेगी और वही इसका निज घर है। जहाँ से आदि में उतरी थी, सो वहीं पहुँच कर, महा आनन्द को प्राप्त होगी। वहाँ किसी तरह का कष्ट और कलेश और जनम-मरन और काल और करम का चक्कर नहीं है।

१४—सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यासी को, दिन २ अपने बंधन, जो कि पिंड और कुटुम्ब-परिवार और भोगों और संसारी पदार्थों के साथ लगे हुए हैं, ढीले होते और छूटते हुए मालूम होंगे, और उसी क़दर दिन २ कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रेम और विश्वास, और भी सतगुरु के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, यानी अपनी इसी ज़िन्दगी में अपना उद्धार होता हुआ दिखलाई देता जावेगा।

१५—बड़ी महिमा इस अभ्यास की यह है कि इसके कराने वाले, और हर दम रक्षक, आप राधास्वामी दयाल

हैं। सच्चे अभ्यासी को, इस करनी के करने में किसी क़िस्म की तकलीफ़ या कलेश अंतर में नहीं होता, बल्कि दिन २ उमंग और शौक़ इस अभ्यास के करने और मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया और हर तरह की रक्षा, अन्तर और बाहर, प्रत्यक्ष मालूम होकर प्रेम और निश्चय को बढ़ाती और पकाती जाती है कि जिससे दिन २ आनन्द बढ़ता जाता है और अपने सच्चे और पूरे उद्धार के होने में किसी तरह का शक़ और शुभा बाक़ी नहीं रहता।

१६–राधास्वामी मत के अभ्यासी की सुरत, अपनी यानी जान की धार पर सवार होकर, निज घर की तरफ उलट कर चढ़ती है। और बाक़ी जितने अभ्यास कि और मतों में जारी हैं, उन में चढ़ाई किसी न किसी मायक धार पर सवार होकर की जाती है। और इस सबब से वे माया के घेर में (कि जहाँ जनम-मरन का चक्कर देर-सवेर जारी है) ख़तम हो जाते हैं, यानी ऐसे अभ्यासियों का, चाहे वे अपने मत के सिद्धान्त पद तक भी पहुँच जावें, सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होता।

१७––और मालूम होवे कि किसी मत का कोई अभ्यास, चढ़ाई का, इस वक़्त में बग़ैरा कमाई संतों की जुगत यानी सुरत-शब्द मार्ग के, कतई नहीं बन सकता

और इस मार्ग का भेद सिर्फ़ संत सतगुरु या साधगुरु या उनके सच्चे और प्रेमी अभ्यासी सतसंगी से मिल सकता है। और किसी तरह, कोई, वह भेद और जुगत अभ्यास की, मालूम नहीं कर सकता और जो कोई किताबों को देख कर या थोड़ा-बहुत हाल ज़बानी लोगों से सुन कर, अपनी तजवीज़ पर अभ्यास शुरू करेगा, उसका रास्ता हरगिज़ नहीं चलेगा, बल्कि धोखा और झटका और ख़ौफ़ खाकर, उस अभ्यास को थोड़े अर्से में छोड़ देगा।

१८–इस वास्ते, अब आम तौर पर पुकार के कहा जाता है कि जो कोई अपना सच्चा और पूरा उद्धार सहज और सुखाला चाहता है, और दुनिया और उसके कारोबार को देख कर, जिसका दिल इस तरफ़ से उदास हुआ है, उसको, बल्कि कुल्ल जीवों को, मुनासिब और लाज़िम है कि अपने जीव के कल्यान के निमित्त, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सरन में आवें, यानी दीन-अधीन होकर, उनकी मेहर और दया के आसरे और भरोसे पर, उनकी सहज जुगत की कमाई, थोड़ी-बहुत (जिस क़दर बन सके) शुरू कर दें, तो उनकी मेहर और दया से थोड़ा-बहुत रस मिलता जावेगा, और अभ्यास दिन २ आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ता जावेगा, और इसी तरह एक दिन धुर पद में पहुँच कर निर्भय और निःचिंत हो जावेंगे।

१९–सुरत-शब्द मार्ग की ऐसी महिमा है कि जिसने

प्यार और शौक़ के साथ थोड़े दिन भी इस अभ्यास को किया, और जो उसका चोला छूट गया, तो वह किसी नीचे की जोन में नहीं जावेगा और फिर नर देही, पिछले जनम से उत्तम और विशेष सुखदाई, धारन करके, सतगुरु के सतसंग में शामिल होवेगा, और जहाँ से कि अभ्यास छोड़ा है, वहाँ से शुरू करके ऊपर की तरफ़ चढ़ाई की तरक़्क़ी करेगा, और जब तक कि धुर पद यानी राधास्वामी धाम में नहीं पहुँचेगा, तब तक बराबर मनुष्य स्वरूप धारन करके, तीन, चार या पाँच जन्म में, संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से, अपना अभ्यास पूरन करेगा।

२०—एक और सिफ़त राधास्वामी मत के अभ्यास की यह है कि जो कोई सच्चा होकर, शौक़ के साथ, इस काम में लगेगा, वह नित्त जितना अभ्यास दुरुस्ती से करेगा, उसी क़दर उसको रस और आनंद मिलता जावेगा, यानी अपनी कमाई का, जिस क़दर बन सके, रोज़मर्रा फल लेता जावेगा। और दिन २ वह रस और आनन्द बढ़ता जावेगा कि जिससे अभ्यासी के शौक़ और प्रीत-प्रतीत की तरक़्क़ी होती जावेगी, और नई २ उमंग, प्रेम और भक्ति की, सतगुरु और कुल्ल मालिक दयाल के चरनों में, जागती जावेगी, और उसी क़दर संसार और उसके भोगों और पदार्थों से, चित्त में, उदासीनता पैदा होती और बढ़ती जावेगी। इस तरह, राधास्वामी मत के अभ्यासी को पूरा और सच्चा

सहज-बैराग और सहज-अनुराग हासिल होकर, उसका काम पूरा हो जावेगा और संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से कोई विघ्न, काल और माया का, उसके काम में हर्ज नहीं डाल सकेगा।

२१—एक और भारी सिफ़त राधास्वामी मत के अभ्यास की यह है कि इसमें रोज़गार और गृहस्थ-आश्रम के छोड़ने की ज़रूरत नहीं। सुरत-शब्द अभ्यासी का चित्त सहज-स्वभाव, जैसा कि उसका अभ्यास बढ़ता जावेगा, दुनिया और उसके भागों और बंधनों से उपराम होता जावेगा यानी मन से पदार्थों का भाव और चाव जाता रहेगा। फिर चाहे वह गृहस्थ में रहे और चाहे विरक्त में, कोई भोग और संसारी चाह उसको बाँध नहीं सकेगी, यानी इनमें उसकी आसक्ति न होवेगी। बर-ख़िलाफ़ इसके, और मतों में जो अभ्यास जारी हैं, उनके संजम ऐसे कठिन हैं कि शुरू करते ही अभ्यासी को गृहस्थ और उद्यम का छोड़ना लाज़िम और जरूर होता है। इसी सबब से गृहस्थियों में किसी क़िस्म के अभ्यास का करना या उसका खोज और दरयाफ़्त करना मौक़ूफ़ हो गया, यानी उनके उद्धार का रास्ता ही बिल्कुल बन्द हो गया। और वे संजम ऐसे कठिन हैं कि विरक्तों से भी दुरुस्ती से नहीं बन पड़ते। इस वास्ते उनमें से कोई बिरला उस रास्ते पर, कुछ दूर तक, चला और फिर मन और माया के चक्कर

में आकर वहीं थक गया या उल्टा गिरा और किसी का काम दुरुस्त नहीं बना। यानी ब-सबब न मिलने संत सतगुरु और उनकी जुगती के, ये सब ख़ाली रह गये और सच्चा और पूरा उद्धार किसी का नहीं हुआ।

२२–राधास्वामी मत के अभ्यासी को सिर्फ़ इस क़द्र संजम दरकार हैं:–(१) सच्चा शौक़ राधास्वामी दयाल के दर्शनों का, और उनके धाम में पहुँच कर परम आनंद और बिलास का, प्राप्त होना, और (२) दुनिया के सामान की चाह, औसत दरजे के गुज़ारे के लायक़, उठाना और फ़िज़ूल और ना-मुनासिब या ग़ैर-वाजिब चाहों को घटाना और दूर करना, और (३) नशे की चीज़ों और माँस अहार से परहेज़ करना, और (४) अपने मन रंजन के लिये किसी को बे-सबब और बे-फ़ायदा और ना-मुनासिब तौर पर अंतर या बाहर दुख या तकलीफ़ न देना। जो शौक़ थोड़ा सा है, तो वह सतसंग या अभ्यास करके, दिन २ बढ़ता जायगा, और ये संजम भी सहज बनते जावेंगे, और रफ़्ता २ पुष्ट हो जावेंगे। और इस तरह राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से एक दिन पूरा शौक़ और पूरा प्रेम हासिल हो कर, धुर घर में पहुँचा देगा।

२३–राधास्वामी मत के अभ्यासी को सब मतों के सिद्धान्त-पद रास्ते में पड़ेंगे, यानी वह कुल्ल मुक़ाम की सैर करता हुआ, एक दिन कुल्ल मालिक के चरनों में

पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होगा, और वे रास्ते के मुक़ाम ये हैं :-शिवलोक, ब्रह्मलोक, विष्णुलोक, राम लोक, कृष्णलोक, शक्ति का लोक, और आत्मा और परमात्मा, और ईश्वर और परमेश्वर, और ब्रह्म और पारब्रह्म पद, और जैनियों और सरावगियों का निर्वाण पद और शुद्ध सिला, और बौद्ध मत वालों का सिद्धान्त पद और मुसलमानों के मुक़ामात-मलूकत, जबरूत और लाहूत और अर्श और कुरसी वग़ैरा, और ईसाइयों का मुक़ाम हज़रत ईसा और ख़ुदा, और पिछले संतों का सत्तलोक और सत्तनाम और अनामी वग़ैरा।

२४-इस क़दर बड़ा दरजा जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुआ, सुरत चलने वाली, यानी अभ्यासी, को, संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से हासिल होना मुमकिन है।

२५-अब मालूम होवे कि जितने अभ्यासों का ज़िक्र ऊपर हुआ है, और वे नौ द्वारों के मुक़ाम से शुरू किये जाते हैं, उनमें सुरत की एक-एक धार का सिमटाव और फिर खिंचाव होता है, और जो जुगत कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने जारी फ़रमाई, उसमें संतों के प्रथम स्थान सहसदल-कँवल के (जो कि कुल्ल मतों का सिद्धान्त और आख़िरी मुक़ाम है) रूप और शब्द के आसरे से, सुरत की पूरी धार के सिमटाव और खिंचाव और चढ़ाई

का अभ्यास किया जाता है, यानी सुरत की असली बैठक का मुक़ाम, जो तीसरा तिल है, वहाँ से उसकी चढ़ाई शुरू की जाती है। और इस अभ्यास के करते ही अंग २ से, और भी नौ द्वारों से, सिमटाव और खिंचाव सुरत का, शुरू हो जाता है, और वह तीसरे तिल में भरती जाती है, और वहाँ ऊँचे की तरफ़, सहस दल कंवल और त्रिकुटी वग़ैरा पर चढ़ती जाती है, और यही अभ्यास करने से रफ़्ता २ एक दिन धुर मुक़ाम में पहुँच कर पूरा काम बन जाता है।

२६–यह तीसरा तिल, जोगियों का दसवाँ द्वार है, और संतों के बचन के मुवाफ़िक़ यह पिंड का नाका है, यानी इसके नीचे, पिंड, और ऊपर की तरफ़, ब्रह्माण्ड की हद है। राधास्वामी मत का अभ्यास इसी मुक़ाम और द्वारे से शुरू होता है।

२७–जिसका शौक़ सच्चा है, और जो बिरह और प्रेम अंग लेकर अभ्यास शुरू करता है, उस पर यह हालत, सुरत के सिमटाव और खिंचाव और चढ़ाई की, गुज़रती है, और वही अभ्यासी निज कर देखता है और जाँच करता है कि इस जुगत की कमाई से (जो दुरुस्ती से बन आवे) बहुत जल्द मन और सुरत का खिंचाव और सिमटाव होता है, और उस वक़्त तमाम बदन सुन्न होता जाता है।

२८–अब बुज़ुर्गी और बड़ाई राधास्वामी मत की जुगत की, कुल्ल अभ्यासों पर, ऊपर के लिखे हुए हाल

से, साफ़ ज़ाहिर है, और उसका असर भी मन और इन्द्रिय और देह पर, बहुत जल्द और पूरा २ होता है। और ब-सबब लेने सरन और ओट संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के, इस मत के अभ्यासी को, कोई विघ्न काल और माया का नहीं सताता है। यह बड़ाई और आसानी और रक्षा और किसी अभ्यास में नहीं पाई जाती है। हरचंद कि मन और इंद्रियाँ, और पाँचों दूत (काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार) थोड़ा-बहुत अपनी पुरानी आदत और चाल के मुवाफ़िक़, किसी क़दर, अपना ज़ोर दिखाते हैं, पर संत सतगुरु के सतसंग की मदद और राधास्वामी दयाल की दया से, वे दिन २ ढीले और कमज़ोर होते जाते हैं, यानी अभ्यासी के चित्त में, दिन २ संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से उदासीनता बढ़ती जाती है, और उसके साथ ही चरनों में प्रेम और दीनता बढ़ती जाती है, और रास्ता आहिस्ता २ तै होता जाता है, कि जिसके सबब से दिन २ सुरत का, माया के मंडल से, उबार यानी निकास होता जाता है, और उसी क़द्र संसार के बंधन ढीले और हलके होते जाते हैं। और जिस क़द्र इस तरह चढ़ाई होती जाती है, उसी क़द्र निर्मल रस और आनन्द मिलता और बढ़ता जाता है।

२६—जैसी भारी दया कि कुल्ल मालिक राधास्वामी

दयाल ने, इस वक़्त के जीवों को दुखी और बलहीन देख कर, इस आसान और पूरी जुक्ति के प्रकट करने में फ़रमाई है, ऐसी किसी वक़्त में जीवों पर नहीं हुई । इसका पूरा २ शुकर, किसी की ताक़त नहीं कि अदा कर सके। जिस-किसी की समझ में यह बात अच्छी तरह से आ गई, उसके मुवाफ़िक़ दुरुस्ती से अमल-दरामद यानी कार्रवाई शुरू करना, यही राधास्वामी दयाल की उस गहरी और पूरी दया की क़दरदानी यानी महिमा जाननी है । फिर वही जीव दया-पात्र और बड़-भागी समझना चाहिये, क्योंकि वह राधास्वामी दयाल की चरन-सरन दृढ़ करके, और नित्त अभ्यास करके, दिन २ विशेष दया हासिल करता हुआ, एक दिन धुर पद में पहुँच कर, अपना काम पूरा बनवा लेगा, और परम आनन्द को प्राप्त होकर, काल के कष्ट और कलेश और जनम-मरन के दुक्खों से हमेशा को बच जावेगा ।

३०—ऐसी बड़ी महिमा राधास्वामी मत और उसके अभ्यास और जुक्ति की है कि जिसकी बराबरी कोई अभ्यास किसी क़िस्म का, जो दुनिया भर में जारी हैं, नहीं कर सकता । सबब यह है कि राधास्वामी मत के अभ्यास का रक्षक कुल्ल मालिक आप है, और संत सतगुरु जो उस मालिक के निज-अंस यानी निज-पुत्र या उसका निज-रूप हैं, इस संसार में प्रकट होकर उस अभ्यास को जारी फ़रमाते

हैं और अपने सरन आए हुए जीवों यानी अभ्यासियों की आप रक्षा और ख़बरगीरी करते हैं, और दिन-दिन उनके मन और सुरत को निर्मल करके, आप अपनी दया से उबारते और चढ़ाते जाते हैं। और जब २ उनके इस क़िस्म के जीव, संसार में, वास्ते पूरे करने अपने अभ्यास के, भेजे जाते हैं, तब आप भी अति दया करके, वास्ते उनकी सम्हाल और तरक़्क़ी के, प्रकट होकर, सतसंग खड़ा करते हैं।

३१–और मतों के अभ्यास में न तो ऐसी सहज जुगत चलने की है, और न पूरा भेद धुर घर और उसके रास्ते का है, और न किसी बड़े का, अंतर और बाहर, सहारा और आसरा लेकर चाल चलती है, बल्कि ये सब जीव अपने बल और पुरुषार्थ का अहंकार लेकर कार्रवाई करते हैं। इस सबब से, रास्ते में धोखा और ठोकरें खाते हैं, और कहीं न कहीं थक कर, या ख़ौफ़ खाकर, या थोड़ी-बहुत सिद्धि और शक्ति में आसक्त होकर ठहर जाते हैं, और आगे चलने का रास्ता उनका बन्द हो जाता है, यानी माया के घेर के पार कोई नहीं गया और न जा सकता है।

३२–कुल्ल रचना प्रेम की धार से प्रकट हुई, और प्रेम ही के आसरे ठहरी हुई है, और कुल्ल कार्रवाई रचना और जीवों की, प्रेम के वसीले से हो रही है, यानी जहाँ

जिसका शौक़ है, वहीं वह तन, मन, धन और इन्द्रियों को लगाता है यानी काम में लाता है। फिर राधास्वामी मत में सिर्फ़ प्रेम की महिमा है यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में पहिले प्रीत और प्रतीत करना ज़रूर है, और फिर सतसंग और अभ्यास करके, वही प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाई जाती है यानी दर्शनों का शौक़ और प्रेम रोज़-ब-रोज़ तेज़ होता जाता है, जिस क़दर कि अभ्यास में चरनों का रस और आनन्द मिलता जाता है।

३३–जिस मत में कि प्रेम नहीं है, वह मत और उसका अभ्यास ख़ाली और थोथा है। इसी सबब से और मतों के अभ्यासी, जो कि अपने बल से चले, या अपने को ब्रह्म मान कर ख़ुश हो गये, रास्ते में थक कर रह गये, बल्कि उनको सीधा और सच्चा रास्ता भी मालूम न हुआ और माया और काल के जाल में फँस रहे, और उन्हीं के मार्ग होकर के चले कि जिससे उस जाल से बाहर न निकले।

३४–यह बड़ी भारी कसर कुल्ल मतों में है कि पहले तो प्रेम का कुछ जिक्र ही नहीं, और जो कहीं है, तो वह मूर्तों और ग्रन्थों और और नक़्लों में लगाया, या व्यापक चैतन्य में ख़र्च किया कि जहाँ से उलट

कर कोई फ़ायदा या मदद नहीं मिली और न आइंदा को तरक़्क़ी हुई, और फल उसका यह हुआ कि यह प्रेम रास्ते के तै करने के वास्ते कुछ मदद न दे सका, क्योंकि सच्चे कुल्ल मालिक का भेद न पाया, और न उसका रास्ता जाना, और जिनको मालिक क़रार दिया, उनका कोई ठिकाना, सिवाय मंदिर और मूर्ति या तीर्थ या ग्रन्थ या और किसी नक़ल के, मुक़र्रर न किया, और व्यापक चैतन्य को हर जगह मौजूद समझ कर चलना और चढ़ना सुरत का फ़िज़ूल समझा। इस सबब से, सब के सब पिंड ही में रहे, और उसकी हद्द के बाहर नहीं गये, और इस वास्ते मन के आकाश में समाये, और अपने कर्म और बासना के अनुसार बारम्बार देह धर कर जगत में भरमे। यह हालत उनकी, सिर्फ़ न जानने भेद कुल्ल मालिक और न करने प्रेम उसके चरनों में, और न मिलने पूरे सतगुरु से हुई। बर-ख़िलाफ़ इसके राधास्वामी मत में अव्वल खोज सतगुरु का और प्रीत उनके चरनों में करना पड़ता है, और फिर प्रेम और दीनता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरन कँवल में, जिनका भेद संत सतगुरु समझा कर मिलने का जतन बतलाते हैं, किया जाता है, और नित्त सतसंग और अभ्यास करके यही प्रेम बढ़ाया जाता है कि जिसकी मदद से रास्ता आसानी से तै होता है। और राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया से सब विघ्न

हटा कर अभ्यासी एक दिन निज चरनों में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होता है।

३५–हरचंद कि सब मतों में थोड़ी-बहुत महिमा और ज़रूरत गुरु की वर्णन की है, पर गुरु भक्ति का बर्तावा, प्रेम के साथ, सच्चे तौर पर, इस ज़माने में कहीं जारी नहीं है। बल्कि इस वक़्त में जो विद्या और बुद्धिवानों ने समाज खड़े किये है, उन में तो कुछ गुरू की ज़रूरत और क़दर बिलकुल नहीं रक्खी है, क्योंकि इन समाजों में, सिर्फ़ किताबों का पढ़ना और पढ़ाना और भजन वग़ैरा का गाना-बजाना, जिनमें अंतरी अभ्यास का, सिवाय ध्यान (बे-ठिकाने) व्यापक चैतन्य के, कुछ ज़िकर नहीं है, जारी है, और यह कार्रवाई सब आदमी, जिन्होंने थोड़ी-बहुत विद्या, क़ाबिल पढ़ने उन किताबों के, हासिल की है, बग़ैर मदद अभ्यासी गुरू के कर सकते हैं, और ऐसी आसानी और आज़ादी देख कर, नये, विद्या पढ़े हुए लोग, कसरत से शामिल हो गये हैं। यह लोग सच्चे मालिक के भेद और निशान से बे-ख़बर हैं और न उनको उसकी खोज और तलाश है और इस वास्ते वे सच्चे और पूरे गुरू की, (जिन से यह भेद पूरा २ मिल सकता है और भी हाल रास्ते का और जुगत चलने की मालूम हो सकती है) क़दर नहीं जान सकते और न उनकी पहिचान कर सकते हैं।

३६–राधास्वामी अथवा संत-मत में सच्चे और पूरे गुरू की तलाश, और वक़्त प्राप्ति के उनके चरनों में सच्ची भक्ति और प्रेम करने के वास्ते निहायत ताकीद है, क्योंकि इस मत में सच्चे मालिक से मिलने और उसके धाम में चलकर और चढ़ कर पहुँचने की कार्रवाई की जाती है, और इसी के दुरुस्ती से बन आने के लिए भेदी और पहुँचा हुआ या चलता हुआ और पहुँचनहार गुरू दरकार है। बग़ैर उसकी मदद के, इस मत और उसके अभ्यास की कार्रवाई क़तई नहीं बन सकती है, और कुल्ल मालिक और भी ब्रह्म यानी त्रिलोकी नाथ का हुक्म है कि मेरे धाम में कोई बग़ैर वसीले पूरे गुरू के, नहीं दख़ल पा सकता है, और न वहाँ ठहर सकता है, यानी जब तक कि पूरे गुरू से मिल कर, योग-अभ्यास (यानी मिलने का जतन) न करेगा, और जो लक्षण और सफ़ाई या जिस क़िस्म की रहनी दरकार है, वह पूरे गुरू की दया, और जो अभ्यास वह बतावें, उसकी मदद से हासिल न होंगे, तब तक कोई जीव मालिक के धाम में यानी ब्रह्म-पद और धुर-पद में नहीं पहुँच सकता है और न वहाँ ठहर सकता है।

३७–जब हक़ीक़त-ए-हाल यह है, जैसा कि ऊपर लिखा गया, तब समझवार और निर्पक्ष सच्चा दर्दी परमार्थी ज़रा ग़ौर करके आप समझ सकता है कि जिन मतों में अंतरी भेद और अभ्यास, चढ़ाने मन और सुरत

का, जारी नहीं है और न उसके भेदी और सिखाने वाले गुरू की ज़रूरत या तलाश है तो वह मत और जो कुछ कि कार्रवाई उन में जारी है, सब ज़ाहिरी और ऊपरी, मिस्ल छिलके के है और मग़ज़ यानी तत्व-वस्तु की समझ और पहिचान और प्राप्ति उसमें बिल्कुल नहीं है। फिर जीव का उद्धार और माया के मंडल से उबार वहाँ कैसे हो सकता है? शुभ-कर्म का फल ऐसी कार्रवाई से अलबत्ता हासिल हो सकता है, पर सच्चे और कुल्ल मालिक का दीदार या उसके धाम में रसाई या चढ़ाई की कार्रवाई शुरू करने के वक़्त से थोड़ा-बहुत चरनों का रस और आनन्द का मिलना और बढ़ना हरगिज़ मुमकिन नहीं है।

बचन ३३

मन और सुरत नौ द्वारों से झाँक कर इस लोक के भोगों में फँस गये हैं, सो दसवें द्वार की तरफ़ झाँकने और चलने से उन बंधनों से छुटकारा होगा और संत सतगुरु की दया से एक दिन निज घर में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होंगे।

१–मालूम होवे कि सुरत की धार, अव्वल, मन के स्थान पर, और फिर वहाँ से (अनेक धारों में तक़सीम हो कर) इंद्रिय घाट पर बैठी, और इन्द्रियों के मुक़ाम से धारें जारी होकर, उनका मेल इस संसार की रचना और भोगों और पदार्थों के साथ हुआ, और हर एक इन्द्रिय द्वार पर जुदा २ रस और स्वाद भोगों का लेकर मन मगन होने लगा।

२–हर एक इन्द्रिय का रस भारी है और मन सर्व-अंग करके इन रसों का आशिक़ और आधीन हो गया है और तवज्जह उसकी, इन द्वारों के वसीले से, बाहर पदार्थों में, और अनेक चीज़ों में निहायत मज़बूती के साथ जम गई है, यहाँ तक कि उन पदार्थों और चीज़ों की हालत बदलने में मन की भी हालत बदल जाती है और उस तवज्जह को जो कोई हटाया चाहे तो नहीं हटती है, और ज़ोर और दबाव डालने में निहायत दुख मन को होता है।

३–यह धारें जो इन्द्रिय द्वारों से निकस कर अनेक जीवों और चीज़ों में बँध गई हैं, इस मन के बाँधने के वास्ते गोया ज़ंजीरें हो गई हैं, और आदत करके ऐसी कड़ी और मज़बूत हो गई हैं कि उनके हटाने या तोड़ने में मन को भारी तकलीफ़ होती है, और जो क़ुदरती तौर पर एकाएक कोई बंधन ढीला होता है या टूट जाता है, तो मन निहायत ग़मगीन और उदास होता है और

वावैला करता है यानी चिल्लाता-बिल्लाता है और रोता और भींकता है।

४-दुनियादारों की समझ ऐसी ओछी है कि जिस किसी के ऐसे बंधन भारी और कसरत से हैं, उसी को वे दुनिया में भागवान और सुखी समझते हैं, और वह शख़्स आप भी अपनी गिरिफ़्तारी को बड़भागता समझ कर, बहुत ख़ुशी के साथ झेलता है, और दिल और जान से उसको क़बूल करके, दिन २ उसकी ज़ियादती चाहता है, और बा-वजूदे कि हर रोज़ झटके और धक्के खाता है, फिर भी ऐसा उस नशे में मस्त और दीवाना हो रहा है कि ज़रा ख़ौफ़ और होश नहीं लाता, और ज़रा भी सोच और विचार नहीं करता कि मैं किस आफ़त में फँस गया हूँ, और आइंदा क्या हालत होगी और कैसी सख़्ती और तकलीफ़ उठानी पड़ेगी।

५-जब कभी ऐसे जीवों को कोई परमार्थ का बचन सुनावे, और उनके हाल की ख़राब हालत से उनको ख़बर देवे, और जो कुछ कि इस तरह की रहनी का आइन्दा नतीजा यानी फल होवेगा, उसको जतावे, तो ये जीव अचरज करके, उसके बचन को तवज्जह के साथ नहीं सुनते। बल्कि वह बचन इनको बहुत बुरे और सख़्त मालूम होते हैं, क्योंकि उनमें इनके भोगों और प्यारे रिश्तेदारों और पदार्थों की नाशमानता और बे-वफ़ाई का ज़िक्र है और

जो २ हर्ज, इन में प्रीत और बंधन जारी रखने से, आइंदा पैदा होंगे, उनका बयान है।

६–ये लोग बा-वजूदे कि रोग-सोग और मरी और मौत वग़ैरा की कार्रवाई हर रोज़ अपनी आँख से इस दुनिया में देखते हैं और जीवों को अनेक तरह की तकलीफ़ों और बीमारियों और मुसीबतों में मुबतिला और निहायत दुखी मुलाहिज़ा करते हैं, पर उनके दिल पर बहुत कम असर इन बातों का होता है और कभी सोच और विचार इस बात का नहीं करते कि एक दिन दुनिया और देह और घर और कुटुम्ब-परिवार और माल और असबाब को ज़रूर छोड़ना पड़ेगा, और उस वक़्त कैसी सख़्त चोट मन पर पड़ेगी ? और आइन्दा कहाँ जाना होगा ? और वहाँ क्या हाल होवेगा ? यानी सुख मिलेगा या दुख ? और इस ज़िन्दगी में उसका कुछ बन्दोबस्त करना चाहिये या नहीं ?

७–जो जीव कि संसार में पैदा होते हैं, शुरू में सब भोले और अनजान होते हैं, पर संग करके उनकी हालत और चाह बदलती जाती है यानी जैसा संग मिला और जैसी हालत की महिमा सुनी और जिन चीज़ों का लोगों की तबीयत में भाव और बड़ाई देखी, उसी मुवाफ़िक़ चाहें भी उठती हैं, और वैसी ही हालत पसंद आती है और उसके हासिल करने को जतन किया जाता है। जतन सिद्ध होने

पर मन खुश होता है और सिद्ध न होने में दुखी होता है।

८–और परमार्थ का यह हाल है कि अनेक मत, मन और बुद्धि के रचे हुए या ईश्वर और देवताओं और महात्माओं के (जो ब्रह्माण्डी मन की अंस और कला हैं) जारी किये हुये, इस दुनिया में फैल रहे हैं, और हर एक अपनी २ समझ और तजरुबा और चाह और पहुँच के मुवाफ़िक़, अनेक रीत से, बयान करता है कि फ़लाँ २ काम करने से आइन्दा सुख मिलेगा, या ईश्वर या किसी देवता या महात्मा की भक्ति और सेवा करने से यह २ फ़ायदा होगा। फिर बिचारे जीव हैरान हैं कि किसका कहना मानें और किस का न मानें। इस वास्ते सब के सब, अपने २ क़ौम और बुज़ुर्गों की चाल-ढाल और कार-वाई के मुवाफ़िक़, थोड़ा-बहुत अमल दरामद करने लगे, और खोज और तलाश, पूरी और सच्ची समझ देने वाले की, किसी के दिल में पैदा नहीं हुई। और जो किसी ने अपनी बुद्धि और विद्या के ब-मूजिब तलाश भी करी तो विद्यावानों के ग्रन्थ और किताबें पढ़ कर और ओछी या उलटी समझ धारन करके और भारी ग़लती में पड़ गये, कि वहाँ से उनका निकलना ज़्यादा मुश्किल हो गया।

९–खुलासा यह कि सच्चे और कुल्ल मालिक का पता और भेद किसी को नहीं मिला और न सच्चा और सीधा रास्ता अपने निज घर में जाने का, कि जिससे

आवागवन और देह धर कर दुख-सुख भोगना दूर हो जावे, मालूम हुआ। फिर सब जीव, मन और बुद्धि की निकाली हुई चालों में, कि जिन से भूल और भरम नहीं मिट सकता और न दुख-सुख के जाल से छुटकारा मुमकिन है, अटक गये।

१०—असल हाल यह है कि ईश्वर या ब्रह्म या महात्मा या देवता मिस्ल ब्रह्मा, विष्णु और महादेव वग़ैरा, आप ही सच्चे और कुल्ल मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के भेद से बे-ख़बर थे। इस सबब से जो बानी और बचन और किताबें मज़हबी उन्होंने बनाई, उनमें वह भेद कुल्ल मालिक का, और जुगत पहुँचने की, उसके धाम में, बयान नहीं की। और जो ब्रह्म पद तक का भेद और जैसी जुगत उसकी प्राप्ति की, प्राणायाम और और साधनों के वसीले से वर्णन करी, वह ऐसी कठिन और ख़तरनाक, और संजम उसके, ऐसे सख़्त कहे कि उसकी कार्रवाई गृहस्थ और विरक्त दोनों से न हो सकी, और इस तरह सब के सब ख़ाली रह गये यानी सच्ची मुक्ति के रास्ते पर कोई न चल सका। सिर्फ़ थोड़ा-बहुत अभ्यास शुरू करके, और कुछ लज़्ज़त और सरूर या सिद्धि-शक्ति के हासिल होने पर, रास्ते में तृप्त हो गये और आगे न बढ़े।

११—और जो कि ख़ुद-मतलबी यानी स्वार्थी लोग जीवों को उपदेश देने के वास्ते जा-ब-जा बहुत से प्रकट

हो गये, और उनका संग करके और बचन मान कर जीवों को तकलीफ़ पहुँची, और सरीह यानी प्रत्यक्ष धोखा मालूम पड़ा, इस सबब से, अब जो कोई सच्चा रास्ता और भेद बताने वाला मिलता है, तो उसके बचन की ज्यों की त्यों प्रतीत नहीं करते, और अनेक तरह के भरम और ख़ौफ़ उठा कर बचन नहीं मानते, और पुरानी नाक़िस चालों में, बारम्बार फँसे और अटके रहना मंज़ूर करते हैं, और अपने नफ़े और नुक़सान का बहुत कम ख़्याल करके, सच्चे गुरू की तलाश में भी ढीले रहते हैं।

१२–जो जीव कि मूर्ख और निपट दुनियादार और मन–सैलानी हैं, वह तीर्थ, ब्रत, और मूर्ति पूजा में अटक रहे और जिन्होंने कि थोड़ी-बहुत विद्या पढ़ कर अपनी बुद्धि किसी क़दर जगाई, वे ज्ञान के ग्रन्थ पढ़ने-पढ़ाने में बाचक रह गये, यानी समझ-बूझ परमार्थ की, किसी क़दर हासिल की, पर उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास नहीं किया, इस सबब से उनकी सुरत-रूह का घाट यानी स्थान नहीं बदला और निरे बातूनी रह गये।

१२–इन में से बाज़ों ने अपने तईं ब्रह्म मान कर बिल्कुल निचिन्ताई और बेख़ौफ़ी इख़्तियार करी, और अपने मन और इन्द्रियों की चाल और चाह को, उनका स्वभाव समझ कर, बे-धड़क सैर और तमाशा और भोगों में (जब वे भाग से मिल गये) बर्तने लगे, और गृहस्थियों को इस क़िस्म

का ज्ञान सिखा कर उनको भक्ति-मार्ग से हटा कर बे-धर्म कर दिया ।

१४—कोई २ जीव तप, जप, और अनेक क्रियाओं के साधन में लग गये, जैसे नेती, धोती, बस्ती क्रिया करना, और खड़े रहना, या मौन साधना, या जल सैन करना, या पंच अग्नि तपना, या हमेशा तीर्थों में भरमते रहना, या मेले तमाशों में उल्टे लटकना, या कीलों पर बैठना, या नंगे रहना, और अनेक तरह के स्वाँग बना कर जगत को रिझाना, वग़ैरा । इन कामों में किसी तरह का परमार्थी फ़ायदा नहीं है । अलबत्ता थोड़ी सफ़ाई जिसमानी हासिल हो सकती है, या यह कि लोगों को खुश करके धन कमाना और अपनी मान-बड़ाई करानी ।

१५—बहुत से जीव, ख़ास कर वे जिन्होंने नई विद्या पढ़ी, अनेक तरह के शक और शुभे निस्बत कुल्ल मालिक और सुरत-रूह के, अपने मन में पैदा करके, परमार्थ से बिल्कुल बे-मुख हो गये, और खान-पान और सैर और तमाशे और कुटुम्ब-परिवार और धन-सम्पत्ति के मोह में फँस कर, और उसी को माहसल अपनी जिंदगी का, यानी इस नर देही का फल और लाभ समझ कर, मगन हो गये, और परमार्थ का खोज फ़िज़ूल समझ कर उस तरफ़ की कार्रवाई बिल्कुल बन्द कर दी, और आज़ादी को पसंद करके बे-धड़क और बे-क़ैद जैसी रहनी

कि उनको पसंद आई, उसी मुवाफ़िक़ रहने लगे और अपने मन की चाह के मुवाफ़िक़ खान-पान और लिबास वग़ैरा में बर्तने लगे।

१६—ऐसी हालत जगत की देख कर, यानी जीवों का परमार्थी उद्धार क़तई बन्द मुलाहिज़ा करके, कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल संत सतगुरु रूप धारने करके प्रकट हुए, और अति दया करके भेद अपने धाम का, और हाल रास्ते और मंज़िलों का, और जुगत सुरत के वहाँ चढ़ कर पहुँचने की, आसान और निर्विघ्न तरीक़े से वर्णन करी, और जीवों को निहायत मेहरबानी से समझाया कि नौ द्वारों में सुरत की धार का बर्ताव रोज़मर्रा इस लोक में हो रहा है, और हर एक द्वारे पर थोड़ा-बहुत रस या स्वाद या खुशी मन को, उन इन्द्रियों के विषय यानी भोगों के वसीले से हासिल होती है, और इसी क़दर रस और स्वाद और खुशी को प्राप्त होकर, कुल्ल जीव बहुत शौक़ के साथ भोगों में लिपट गये, और असली आनन्द जो मन और सुरत को अंतर में दसवें द्वार की तरफ़ तवज्जह करने से मिल सकता है, और जो आनन्द कि निर्मल और ठहराऊ और स्वतंत्र (यानी जीव के इख़्तियार में) है, उसको भूल कर और किसी से उसका भेद और पता न पाकर, बिलकुल बे-ख़बर रह गये, और इस तरह अपने जीव का भारी अकाज किया।

१७–दसवें द्वार से मुराद उस द्वारे से है कि जिस में होकर रूह की धार, ऊँचे मुक़ाम से उतर कर, पिंड को तरोताज़ा करती है, और ताक़त बख़्शती है और वही धार नौ धारों में तक़सीम होकर, हर एक इन्द्रिय के द्वार पर बैठ कर, दुनिया के भोगों का रस देती है। तो जब कि उसके एक २ हिस्से में इस क़दर स्वाद है कि जीव उसी में लिपट कर मस्त और बेहोश हो गये, तो उस एक धार में (जिसकी वह नौ धारें एक एक हिस्से में हैं) किस क़दर रस और आनंद, बग़ैर वसीले भोगों के, हासिल होना मुमकिन है ? इस वास्ते कुल्ल जीवों को लाज़िम और मुनासिब मालूम होता है कि उस धार का पता और भेद लेकर, उससे, मन और सुरत और इन्द्रियों को, थोड़ा-बहुत समेट कर, मेल करें, तब उसकी बुज़ुर्गी और महिमा की थोड़ी-बहुत ख़बर होवे कि अपने घट में ही महा आनन्द हर वक़्त तैयार और मौजूद है, और कोई दिन अभ्यास करके मन और सुरत के लगाने से मिल सकता है।

१८–और राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है कि जिस धार पर सुरत उतरी है (और वही धार जान और नूर और अमृत और शब्द की धार है) उसी धार को पकड़ के, यानी शब्द की धुन को सुनते हुए सुरत को चढ़ाना चाहिये, यानी पिंड देश से जो दुख-सुख और मलीनता का भंडार है, सुरत को निकाल कर पहिले ब्रह्माण्ड में

और उसके परे सत्त पुरुष राधास्वामी धाम में, जहाँ से कि आदि में सुरत उतरी थी, पहुँचाना चाहिये। जब तक यह कार्रवाई न की जावेगी, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होवेगा यानी देहियों के साथ दुख-सुख के भोग और जनम-मरन के चक्कर से छुटकारा और बचाव नहीं होगा।

१६–नौ द्वारों के वार, यानी इस लोक की रचना में, सुरत और मन की धार, इंद्रियों के वसीले से, बराबर जारी है और हर एक द्वारे पर थोड़ा-बहुत रस लेती है। फिर दसवें द्वार की तरफ़ भी, जो कि निज घट (यानी मस्तक में) है, सुरत की धार को संत सतगुरु से, भेद रास्ते का, और जुगत चलने की लेकर ज़रूर चलाना चाहिये, तब उस गहरे आनंद और रस की, जिसके सामने सर्व रस यहाँ के भोगों के, आहिस्ता २ फीके पड़ते जावेंगे, और जो घट में स्वतन्त्र, बग़ैर मेहनत और ख़र्च करने धन के, जब चाहो जब, छिन भर में हासिल हो सकता है, ख़बर पड़े, और तब मन और सुरत उमंग कर, उस आनन्द और रस के दिन २ ज़्यादा लेने के वास्ते, ऊँचे देश की तरफ़ दौड़ने लगेंगे।

२०–यह काम, बग़ैर दया और मदद संत सतगुरु के, दुरुस्ती से, नहीं बन सकता है। इस वास्ते राधास्वामी दयाल ने ताकीद के साथ फ़रमाया कि पहले सतगुरु का खोज करके, उनके चरनों में प्रतीत सहित प्रीत करो, और उनका सतसंग और सेवा और आरती करके, उनको, अपने

ऊपर मुतवज्जह और मेहरबान करलो, तब वे प्रसन्न होकर जो उपदेश सुरत-शब्द के अभ्यास का करें, उसकी कमाई आहिस्ता २ बन पड़ेगी, यानी मन और सुरत, शब्द की धुन को पकड़ के, घट में आँखों के मुक़ाम से चलना और चढ़ना शुरू करेंगे, और जिस क़द्र दसवें द्वार की तरफ़ इनकी धारा जारी होवेगी, यानी मन और सुरत की चाल चलेगी, उसी क़द्र रस और आनन्द आवेगा, और दिन २ बढ़ता जावेगा, और संत सतगुरु की दया से माया और काल के विघ्न रास्ते में हलके और दूर होते जावेंगे, और रास्ता आसानी से तै होता जावेगा। इस तरह एक दिन सुरत, पिंड और ब्रह्माण्ड और मन और माया के घेर से न्यारी होकर, अपने निज देश में पहुँच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होगी।

२१—और राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया कि माया और काल ने अनेक तरह के भोग और बिलास इस लोक में, वास्ते लुभाने और फँसाने सुरत के, रचे हैं और सुरत यहाँ इस कद्र मन और इन्द्रियों के बस में पड़ गई है कि अपने बल से भोगों को छोड़ नहीं सकती, और चाहे जिस क़द्र समझौती इसको दी जावे, लेकिन भोगों के सन्मुख होते ही, मन उनकी तरफ़ झुक जाता है, और उनमें लिपट जाता है, और सुरत की धार भी लाचारी से उसके साथ भोगों की तरफ़ रवाँ हो जाती है। इस वास्ते, जब तक कि

संत सतगुरु का संग न होगा और वे अपनी मेहर और दया से इसको सहारा नहीं देंगे, और वक़्त २ पर इसकी सम्हाल नहीं करेंगे, तब तक इसका बचाव और छुटकारा मन और इन्द्रियों के भोगों से कठिन बल्कि ना-मुमकिन है ।

२२–कुल्ल जीवों को (जो अपना बचाव और छुटकारा चाहते हैं) चाहिये कि संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की, सच्चे दिल से, भरन दृढ़ करके, उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाते रहें और उनके उपदेश के मुवाफ़िक़ अंतरमुख अभ्यास सुरत-शब्द मार्ग का करके अपना जनम सुफल करें ।

२३–नर देही का फल और लाभ यही है कि अपने कुल्ल मालिक और निज धाम का पता और भेद दरियाफ़्त करके, वहाँ पहुँचने का जतन, उमंग और प्रेम के साथ, शुरू करें, नहीं तो मनुष्य और पशुओं में कुछ भेद नहीं है, यानी जो जीव कि भोगों की प्राप्ति के लिये उमर भर जतन करते रहे और उन्हीं की आसा मन में धरी रही, तो उनकी कार्रवाई पशुओं की कार्रवाई के साथ बराबर हुई और नर देही जिसमें निज घर की तरफ़ चलने की ताक़त मिली थी, मुफ़्त बरबाद हुई । इस बात की समझ लेकर जो जीव अपने निज फ़ायदे के वास्ते, राधास्वामी दयाल के उपदेश को मानेंगे, और उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करेंगे,

वे एक दिन परम आनंद को प्राप्त होंगे, नहीं तो ऊँचे-नीचे देशों और जोनों में हमेशा भटकते रहेंगे और दुख-सुख भोगते रहेंगे ।

अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन नम्बर ३५, पोथी सारबचन राधास्वामी छंद बंद (दूसरा भाग)

आरत गाऊँ स्वामी सुरत चढ़ाऊँ । गगन मंडल में धूम मचाऊँ ॥१॥

अर्थ

आरती राधास्वामी दयाल की गाऊँ और सुरत को गगन मंडल में चढ़ा कर धूम मचाऊँ यानी बिलास करूँ ।

श्याम सुँदर पद निरख निहारूँ । सेत पदम पर तन मन वारूँ ॥२॥

अर्थ

और चढ़ाई के वक़्त श्याम सुन्दर पद यानी श्याम पद जो अति सुन्दर है, और वहीं सुन्न यानी चैतन्य मंडल का द्वारा है, देखती चलूँ, और सेत पदम यानी सत्तलोक में पहुँच कर सत्तपुरुष पर तन-मन वारूँ यानी इन दोनों से न्यारी होकर पहुँचूँ ।

बृन्दावन मथरा पद लीना । गोकुल जीत कालिन्द्री छीना ॥३॥

अर्थ

बृन्दाबन यानी देह को जो बिन्द से बनी है, मथ कर, रकार पद यानी सुन्न में पहुँची और गोकुल यानी इन्द्रियों के देश से न्यारी हुई, और काल की शक्ति छीन हुई, यानी जाती रही ।

सुन्न महावन गिरवर चीन्हा । महासुन्न जा अमृत पीना ॥४॥

अर्थ

सुन्न मंडल की, जो कि महावन है और वही ऊँचा देश यानी पहाड़ है, पहिचान करी और वहाँ से आगे महासुन्न पहुँच कर अमृत पान किया ।

धीरज थाल प्रेम की जोती । धुन विवेक घट मोती पोती ॥५॥

अर्थ

धीरज का थाल लेकर, यानी चित्त में धीरज धर कर और प्रेम की जोति जगा कर, यानी प्रेम तेज़ कर के, मोती रूप धुनों को घट में छाँट कर पोती हुई यानी सुनती हुई चली ।

विरह राग तज रंग लगाऊँ । सुरत निरत ले शब्द समाऊँ ॥६॥

अर्थ

संसारी भोगों को विरह छोड़ कर प्रेम बढ़ाऊँ, और सुरत और निरत को जगा कर और संग लेकर शब्द में लगूँ ।

रास मँडल घट लीला ठानी । काली नाथ निरख नभ जानी ॥७॥

अर्थ

यानी घट में रास मंडल की लीला करके और काल अंग को नीचे डाल कर सुरत रास्ते की सैर करती हुई आकाश में पहुँची ।

घोर उठा अब गगन कुंज में । मगन हुई लख तेज पुंज में ॥८॥

अर्थ

आकाश में चढ़ कर आवाज़ गगन मंडल की, सुनाई दी, और वहाँ पहुँच कर त्रिकुटी में जो स्वरूप है, उसका दर्शन करके खुश हुई ।

मद और मोह हने और सूदे । मोहन मुरली बजी मन बोधे ॥९॥

अर्थ

और मद और मोह दूर हुए और निहायत रसीली बाँसुरी की आवाज़ सुन कर मन को नया बोध हुआ ।

गोपी धुन और शब्द ग्वाल मिल । सुरत गूजरी आई चल चल ॥१०॥

अर्थ

शब्द की धुनें और शब्द सुनती हुई जो कि गोपी और ग्वाल हैं, सुरत गूजरी, यानी इन्द्रियों को जलाने वाली, ऊपर को चढ़ती चली जाती है ।

खेलत कूदत शोर मचावत । दधि अकाश सब मथ मथ लावत ॥११॥

अर्थ

गोपी और ग्वाल यानी मन-इन्द्रिय वग़ैरा बिलास और शोर करते हुए और आकाश में से दधि यानी चैतन्य को समेटते और छाँटते हुए मगन हो रहे हैं ।

पी पी चहुँ दिश होत पुकारा । सुन २ राधा मगन बिहारा ॥१२॥

अर्थ

और सब चारों तरफ़ से अपने प्रीतम शब्द गुरू को पुकारते हैं और राधा यानी सुरत चलने वाली इस बिलास को देख कर मगन होती है ।

स्वामी २ धुन अब जागी । उमंग हिये में छिन २ लागी ॥१३॥

अर्थ

फिर स्वामी नाम की धुन सुनती हुई नवीन उमंग हिरदे में बढ़ती जाती है ।

जगत बासना सब हम त्यागी । मन हुआ मेरा सहज बैरागी ॥१४॥

अर्थ

यह कैफ़ियत देख कर जगत की चाह और बासना बिलकुल छोड़ दी और मन सहज में बैरागी यानी उदासीन हो गया ।

कृपा करो अब राधास्वामी। करत रहूँ तुम चरन नमामी ॥१५॥

अर्थ

हे राधास्वामी दयाल ऐसी ही कृपा मेरे ऊपर जारी रक्खो, और मैं तुम्हारी बंदना करती रहूँ।

मन को फेरो दीन दयाला। छिन २ निरखूं दर्श विशाला ॥१६॥

अर्थ

और मेरे मन को इस तौर से फेर दीजिये कि छिन २ आपका दर्शन करती रहूँ।

अब तो लिये जात मोहिं खींचे। मानत नाहिं डार मोहिं भींचे.॥१७॥

अर्थ

इस वक़्त तो मुझको अपनी तरफ़ खींचे लिये जाता है, और कहना नहीं मानता और मुझको तंग कर रहा है।

भक्ति पौद जो तुमहिं लगाई। मेहर दया से सींचो आई ॥१८॥

अर्थ

भक्ति की पौद जो आपने लगाई है, उसको आप ही अपनी मेहर और दया से सींचो, यानी बढ़ाओ और तरक़्क़ी दो।

मेरा बस मन से नहिं चाले। बहुत लगाये इन जंजाले ॥१९॥

अर्थ

क्योंकि मेरा मन मेरे क़ाबू में नहीं है, और बहुत संसारी जाल इसने फैला रक्खा है।

पर तुम समरथ पुरुष अपारा। काटोगे हम निश्चय धारा ॥२०॥

अर्थ

लेकिन आप सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल समर्थ हो, और मुझ को यक़ीन है कि आप दया करके इस जंजाल को काटोगे।

अब आरत सब विधि हुई पूरी। राधास्वामी रहूँ हुज़ूरी ॥२१॥

अर्थ

अब यह आरती सम्पूर्ण हुई और मेरी अर्ज़ और माँग यही है कि राधास्वामी दयाल के सदा सन्मुख रहूँ।

अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन ४१, पोथी सारबचन राधास्वामी छंद बंद (दूसरा भाग)

सुर्त बन्नी गुरु पाया बन्ना। देख दरश छिन २ मन भिन्ना ॥१॥

अर्थ

प्रेमी सुरत को जब सतगुरु प्रीतम मिले, तब उनका दर्शन करके मन छिन छिन मगन हुआ।

तुरिया घोड़ी सहज सिंगारी। धीरज पाखर ता पर डारी ॥२॥

अर्थ

तुरिया यानी चैतन्य आत्मा की धार को घोड़ी बना कर, उस पर धीरज की पाखर डारी, यानी धीरज के साथ उस पर सतगुरु सवार हुए।

चाँद सूरज दोउ करी रकावें। गगन ज़ीन ता पीठ धरावें ॥३॥

अर्थ

चाँद सूरज यानी इड़ा और पिंगला की रकावें बनाईं और गगन यानी चैतन्य आकाश रूपी ज़ीन उस पर धरी।

बिजली पवन चाल चली घोड़ी। फेर लगाम एड़ दे मोड़ी ॥४॥

अर्थ

इस तरह सतगुरु उस तुरिया की घोड़ी यानी चैतन्य धार पर सवार होकर, बिजली और पवन की चाल के मुवाफ़िक़ चले, और लगाम यानी मुख उस धार का, घर की तरफ़ मोड़ कर, ऊपर चढ़ने के वास्ते ज़ोर दिया, यानी एड़ लगाई।

हीरे लाल झालरें मोती। माणिक पन्ना वारूँ जोती ॥५॥

अर्थ

ऐसे सतगुरु के ऊपर हीरे, लाल और मोती का

झालरें और माणिक, पन्ना और जोत स्वरूप को (जो कि मुराद शब्दों की धुन और स्थानों के स्वरूप से है) वार दूँ। असल में जैसे कि सुरत चढ़ती जाती है, सब रास्ते के स्थान और वहाँ की रचना सब सतगुरु पर अपने आपे को वारते हैं, यानी नीचे पड़ते चले जाते हैं।

ता पर बन्ना करी असवारी। बिजली चाल पवन धधकारी ॥६॥

अर्थ

ऐसी चैतन्य धार की घोड़ी पर सतगुरु बन्ने सवार हुए, और वह धार बिजली और पवन की चाल और ज़ोर-शोर के साथ चली और चढ़ी।

चल बरात पहुँची गगना पुर। बन्नी बन्ना मिले शिष्य गुरु ॥७॥

अर्थ

चलते २ सतगुरु और प्रेमी सुरत और बरात, यानी और सतसंगी और सतसंगियों की सुरतें, त्रिकुटी में पहुँचीं और वहाँ सतगुरु और सेवक का मेल हुआ।

ब्याह हुआ और फेरे डाले। बन्नी ले बन्ना घर चाले ॥८॥

अर्थ

और प्रेमी सुरत सतगुरु की परिक्रमा करके, उनके साथ घर को चली।

घर में धसे मात पितु हरषे । प्रेम मगन मानो बादल बरसे ॥९॥

अर्थ

जब सत्तलोक में पहुँचे तब सत्तपुरुष (जो कि कुल्ल रचना के माता-पिता हैं) देख कर मगन हुए। जैसे कि बादल की वर्षा होती है, इसी तरह प्रेम और आनंद की वर्षा होने लगी ।

मोती हीरे लाल जवाहर । बुआ बहन मिल किये निछावर ॥१०॥

अर्थ

मोती, हीरे, लाल और जवाहर, बुआ और बहन यानी हंस और हंसनियों ने न्यौछावर किये, यानी सत्त शब्द की धुनों की, जो कि हर एक हीरा, मोती और लाल रूप है, सतगुरु और प्रेमी सुरत पर वर्षा होने लगी ।

करें आरत हँस बन्ना बन्नी । हंस पुकारें धन्ना धन्नी ॥११॥

अर्थ

फिर सतगुरु और प्रेमी सुरत ने, मगन हो कर, उमंग सहित, सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल की आरत उतारी, और चारों तरफ़ से हंस धन्य २ पुकारने लगे ।

राधास्वामी रलियाँ मन्नी । मगन हुए भइया और बहनी ॥१२॥

अर्थ

यह कैफ़ियत देख कर राधास्वामी दयाल मगन और प्रसन्न हुए और हंस हंसनी भी उस बिलास में शामिल होकर आनंद को प्राप्त हुए ।

—

बचन ३४

कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा और भेद सुन कर (हर एक जीव को जो उनके बाल-बच्चे हैं) शौक़ मिलने का, बिछुड़े हुए बालक के मुवाफ़िक़ पैदा करके, और सतगुरु से चलने की जुगत दरियाफ़्त करके, दिन २ बिरह और प्रेम अंग के साथ रास्ता तै करना चाहिए।

१—जब कि सतसंग में निर्णय सुन कर जीव को अच्छी तरह इस बात की समझ और प्रतीत आ गई कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ हैं, तब उसके हिरदे में प्रीत उनके चरनों की, और अभिलाषा उनके दर्शनों की, जरूर जागनी चाहिए और यही प्रीत

सतगुरु से उपदेश हासिल करके थोड़ी-बहुत करनी यानी अभ्यास ज़रूर करावेगी।

२—वह निर्णय कि जिससे राधास्वामी दयाल के कुल्ल मालिक और सर्व-समर्थ होने का निश्चय दिल में पैदा होवे, खुलासा तौर पर यह है कि कुल्ल रचना जो नज़र आती है, उसको ग़ौर के साथ मुलाहिज़ा करने से, कुल्ल कर्त्ता का इरादा और मतलब और कारीगरी और क़ायदे के साथ बन्दोबस्त जारी रहने कार्रवाई कुल्ल रचना का, साफ़ २ पाया जाता है और यह बातें वास्ते सबूत मौजूद और हस्ती ऐसे मालिक और कर्त्ता की, जो कि सर्व-समर्थ और आगे-पीछे के हाल का जानने वाला है, काफ़ी है।

३—सिवाय इसके, रचना के हाल और कैफ़ियत को देख कर यह भी बात पाई जाती है कि चैतन्य में ब-सबब मिलौनी और हायल होने पर्दे माया के, कितने ही दरजे हो गये, यानी जहाँ माया मलीन और कसीफ़ है, वहाँ का चैतन्य ज़्यादातर पर्दा यानी आवरण से ढका हुआ और इस वास्ते उसकी ताक़त का ज़हूर कम है, और जिस क़दर कि ऊँचे देश में माया सूक्ष्म और लतीफ़ होती गई है, उसी क़दर वहाँ के चैतन्य पर पर्दा ख़फ़ीफ़, और इस वास्ते उसकी ताक़त का ज़हूर ज़्यादा है, यानी नीचे दरजे के चैतन्य की कार्रवाई (रचना करने और उसके सम्हाल की)

ऊँचे देश के चैतन्य के आसरे है। यानी जब तक कि किरनियाँ या धारा ऊँचे देश के चैतन्य से आकर मदद न करें, तब तक नीचे के देश का चैतन्य कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता। इस वास्ते विशेष से विशेष चैतन्य के दरजे तै करके, जो अख़ीर में महा विशेष चैतन्य है, उसी के आसरे कुल्ल रचना प्रकट हुई, और वहीं से कुल्ल की सम्हाल हो रही है, और वह पद आप निराधार है यानी किसी दूसरे के आसरे नहीं है, और अनन्त है और अपार है। उसी का नाम कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल है।

४—जब ऊपर की समझौती से चित्त में निश्चय हो गया कि कुल्ल मालिक, राधास्वामी दयाल हैं, और उन्हीं के देश में परम आनन्द और अमर सुख प्राप्त हो सकता है, क्योंकि वहाँ माया नहीं है और इसी सबब से आवरण यानी देही और उसका जनम-मरन यानी प्रकट और गुप्त होना भी नहीं है, और न किसी क़िस्म का कष्ट और क्लेश और माया देश का सा दुख-सुख है, तब इस बात की चाह और अभिलाषा मन में उठनी चाहिए कि जैसे बने तैसे राधास्वामी धाम में पहुँच कर, पूर्ण आनन्द को प्राप्त होवें। और यह बात बग़ैर सतगुरु की मदद और दया के हासिल नहीं हो सकती। इस वास्ते लाज़िम आया कि पहले सतगुरु का खोज किया जावे, और जब वे मिल जावें तो उनके चरनों में प्रेम-प्रीत करे और उनका सतसंग

होशियारी के साथ करके, अपने भरम और संदेह दूर करावे, और फिर रास्ते का भेद और सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश लेकर, राधास्वामी दयाल की दया के आसरे अभ्यास शुरू करे, तो जिस क़दर अभ्यास दुरुस्ती से बनेगा और बढ़ता जावेगा, उसी क़दर रस और आनन्द अंतर में मिलता जावेगा, और संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से दिन २ चित्त हटता जावेगा। और जिस क़दर सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया और रक्षा के परचे, अंतर और बाहर मिलते जावेंगे, उसी क़दर प्रतीत मज़बूत होती जावेगी और प्रीत बढ़ती जावेगी।

५-ऐसी प्रतीत और प्रीत के पैदा होने में मन और इच्छा, संसार के भोग और बिलास की तरंगें उठा कर, जीव के मन में परमार्थी समझ और दर्शन की चाह को ठहरने और बढ़ने नहीं देते। इस सबब से, अभ्यास में भी अकसर गुनावन पैदा करके, स्वरूप और शब्द का रस जैसा चाहिये, नहीं लेने देते हैं, और प्रतीत और प्रीत को अनेक तरह के भरम उठा कर पकने नहीं देते। इस सबब से जीव अकसर दुखी रहता है।

६-जो कि राधास्वामी दयाल, कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ हैं, और वेही कुल्ल जीवों के सच्चे माता और पिता हैं, और जब कि अभ्यासी जीव को उनकी मेहर और

दया और रक्षा के परचे अंतर और बाहर मिलने लगे, तो सच्चे प्रेमी के मन में ऐसा शौक़ उनके मिलने का पैदा होना चाहिये, जैसे कि बिछड़े हुए बालक को अपने माँ-बाप से मिलने का, और स्त्री को अपने बिछुड़े हुए पुरुष से मिलने का। यह दोनों, यानी बालक और स्त्री, अपने २ प्रीतम से बिछुड़ी हुई हालत में निहायत दुखी रहते हैं, यानी उनके मन को सच्चा चैन और पूरा आराम नहीं मिलता। ऐसे ही, सच्चा प्रेमी इस संसार को विदेश समझ कर, अपने निज देश यानी सच्चे माता-पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम में पहुँचने की अभिलाषा रखता है, और इस लोक में चाहे जैसे भोग और माया के पदार्थ उसको प्राप्त हो जावें, पर पूरी शान्ति नहीं आती, और मन में बेकली और घबराइट अपने प्यारे पिता राधास्वामी दयाल से मिलने की, बनी रहती है। ऐसे प्रेमी के अभ्यास में मन और इच्छा बहुत कम विघ्न डालते हैं।

७—सच तो यह है कि हर एक परमार्थी के मन में जो राधास्वामी दयाल की सरन में आया, थोड़ी-बहुत बेकली और घबराहट अपने निज घर में जाने के वास्ते ज़रूर रहना चाहिये, क्योंकि बग़ैर ऐसी विरह के, रास्ते का तै होना, और मन और माया के विघ्नों को राधास्वामी दयाल की मेहर के बल से जीतना, और दूर करना दुरुस्ती से, मुमकिन नहीं है।

शब्द भेद ले सुरत लगाऊँ ॥
सुन सुन धुन अब अधर चढ़ी ॥ ५ ॥

दरस दिखाय किया गुरु प्यारा ॥
तन मन तज हुई आज छड़ी ॥ ६ ॥

राधास्वामी सतगुरु दीन दयाला ॥
अब मोपै पूरन दया करी ॥ ७ ॥

———

शब्द

गुरु प्यारे नजर करो मेहर भरी ॥टेक॥

मैं हुई दासी तुम्हरे चरन की ॥
सब तज तुम्हरे द्वारे पड़ी ॥ १ ॥

तुम्हरे चरन की ओट गही अब ॥
काल कर्म से नाहिं डरी ॥ २ ॥

जबसे तुम्हरी सरना लीनी ॥
माया ममता सकल जरी ॥ ३ ॥

प्रीत प्रतीत बढ़त गुरु चरनन ॥

बचन मुतफ़र्रिक पिछले महात्माओं के

(१)

बड़ी भारी अभागता क्या है ? मन का मुर्दा होना। और मन का मुर्दा होना क्या है ? मालिक को भूलना और दुनिया को चाहना।

(२)

लोग कहते हैं कि हम मालिक को पूजते हैं, और हक़ीक़त में वे अपने मन के पुजारी हैं, और कहते हैं कि मालिक हमारा सहाई है, और इससे और उससे मदद चाहते हैं और किसी का शुकर और किसी की शिकायत करते हैं।

(३)

दुनिया से होशियार और बचते रहो कि इसने विद्यावान और बुद्धिवान और धनवानों को अपना ग़ुलाम बना रक्खा है।

(४)

तीन मर्द भक्त, एक औरत भक्त के पास गये और सच्ची भक्ति का ज़िक्र करने लगे। एक भक्त ने कहा कि उसकी भक्ति पूरी और सच्ची है, जो उस तकलीफ़ में कि

उसका मालिक भेजे, सबर करे। स्त्री ने कहा कि इस बचन से अहंकार की बू आती है। दूसरे भक्त ने कहा कि जो तकलीफ़ में मालिक का शुकर करे, उसकी भक्ति पूरी और सच्ची है। स्त्री ने कहा कि कुछ इससे बढ़कर कहो। तीसरा भक्त बोला कि जो अपने प्यारे की भेजी हुई तकलीफ़ में रस पावे, उसकी पूरी और सच्ची भक्ति है। तब फिर स्त्री भक्त ने कहा कि इससे भी बढ़कर कहो। तब तीनों भक्त बोले कि अब आप ही कहो। तब वह बोली कि मैं उसकी भक्ति पूरी और सच्ची जानती हूँ जो कि तक़लीफ को, अपने प्यारे के ध्यान और दर्शन में, इस क़दर भूल जावे कि उसको उस तकलीफ़ की ख़बर भी न होवे।

(५)

जिस पर मालिक मेहरबान होता है तो उसका दिल अकसर ग़मगीन और उदास रखता है, और जिस पर उसकी नज़र मेहर की नहीं है, उसको दुनिया का सामान और ऐश और आराम ज़्यादा देता है।

(६)

दुनिया से प्रीत लगानी तो आसान है, पर उससे अलेहदा होना और छूटना निहायत मुश्किल है। जिस किसी को, जिस क़दर दुनिया के ऐश और आराम का सामान दिया गया है, उसके एवज़ में उससे सौ गुना परमार्थ घटा दिया गया है। अगर दुनिया सोने की होती

और परमार्थ मिट्टी का, तो भी चाहिये था कि लोग परमार्थ ही को क़बूल करते, मगर अफ़सोस है कि परमार्थ सोना और हीरा है, और दुनिया ख़ाक है, और फिर लोग ख़ाक को ही चाहते हैं ।

(७)

जिसका मन इन तीनों कामों से बिल्कुल संग न देवे, तो जानना चाहिये कि अभी उस पर मालिक की दया नहीं आई—एक, मालिक के बचनों के पाठ और सतसंग के वक़्त, दूसरे, मालिक के नाम के सुमिरन और भजन के वक़्त, और तीसरे, मालिक के स्वरूप के ध्यान के वक़्त ।

(८)

भक्ति में तीन परदे हैं । इन तीनों को मन से हटाना चाहिये, तब परमार्थ और भजन का पूरा रस आवेगा और मालिक का दर्शन पावेगा । पहिला, यह कि इस लोक और परलोक का राज और भोग उसको दिये जावें और वह उसको पाकर मगन न होवे, क्योंकि जो मगन हो गया तो लालची है, और लोभी को दर्शन नहीं मिलेगा । दूसरा परदा यह है, कि जो इस लोक और परलोक का राज और भोग उसको हासिल है और वह उससे छीन लिया जावे, तो दुखी न होवे और अफ़सोस न करे, क्योंकि जो अफ़सोस किया तो झूठा है और झूठा, परमार्थ के क़ाबिल नहीं है । तीसरा परदा यह है, कि चाहे जिस क़दर कोई स्तुति

और आदर करे, उस पर अपने मन में खुश न होवे और ग़ाफ़िल न हो जावे, क्योंकि जो ऐसा है तो ओछा पात्र है, और अभी ऊँचे देश और गहरे रस के क़ाबिल नहीं है।

(६)

शाह इबराहीम ने (जो बलख़ देश की बादशाही को छोड़ कर फ़क़ीर हुआ) कहा है कि एक वक़्त मैंने एक गुलाम ख़रीद किया, और उससे पूछा कि तेरा नाम क्या है ? उसने जवाब दिया कि जिस नाम से आप पुकारें। फिर मैंने पूछा कि क्या खायगा ? उसने जवाब दिया जो आप खिलावेंगे। फिर मैंने कहा, क्या पहिनेगा ? वह बोला जो आप पहिनावेंगे। फिर मैंने कहा, क्या काम करेगा ? बोला जो आप हुक्म करेंगे। फिर मैंने कहा, क्या चाहता है ? तो जवाब दिया कि बंदे को अपनी चाह नहीं उठानी चाहिये, जो मालिक की मरज़ी और चाह है, वही उसकी चाह होनी चाहिये। फिर मैंने अपने दिल में सोचा कि तू भी इसी तरह से मालिक का बंदा है, और इस क़दर उम्र तेरी गुज़र गई, और अब तक चरन-सरन और भक्ति की रीत न जानी। यह ख़्याल करके मैं बहुत रोया।

(१०)

किसी ने शाह इबराहीम से पूछा कि किस तरह गुज़रान करते हो, ? जवाब दिया, मैंने चार दस्तूर मुक़र्रर किये हैं। पहला, जब कोई ख़ास दया होती है तब शुकर करके

चरनों की तरफ़ दौड़ता हूँ। दूसरे, जब कोई क़सूर बन पड़ता है, तब पछताता हूँ और अंतर में प्रार्थना करता हूँ। तीसरे, जब कभी तकलीफ़ आती है, तब सब्र और बर-दाश्त के साथ उसकी अगवानी करता हूँ। चौथे, जब भजन और सेवा दुरुस्त बन आती है, तब प्रेम के साथ क़दम आगे रखता हूँ।

(११)

जो कोई अपने गुरु की आज्ञा में न बरतेगा, वह कभी सेवक नहीं बनेगा, और जो गुरु से डरता है और गुरु ही की तरफ़ दौड़ता है, उसी का एक दिन सच्चा उद्धार होवेगा।

(१२)

मालिक कहता है कि जो तू मुझ से मिलना चाहता है, तो वह चीज़ भेंट लेकर आ जो मेरे पास नहीं है। और वह चीज़ सच्ची दीनता है।

(१३)

दो बातें याद रखनी चाहिये-एक यह कि मालिक तेरा अंतरयामी है, दूसरे यह कि जो कुछ तू करता है, वह उसको देखता है।

(१४)

एक सेवक ने अपने गुरू से पूछा कि सेवा और भजन में बराबर रस क्यों नहीं मिलता है? जवाब दिया

कि जो बराबर रस हर रोज़ मिलता रहेगा तो विरह और तड़प नहीं उठेगी, और इस सबब से तरक़्क़ी बंद होजावेगी।

(१५)

जो मालिक के प्यारे हैं, उनमें तीन सिफ़तें ज़रूर होंगी—उदारता, दया और ख़ातिरदारी सच्चे परमार्थी की।

(१६)

अच्छे लोगों की संगत अच्छे काम करने से बेहतर है, और बुरे लोगों की संगत बुरे काम करने से बदतर है।

(१७)

जो कोई तुझ को कुछ देवे तो पहले मालिक का शुकर कर, और उसके पीछे उस शख़्स का शुकर कर, जिसके दिल को मालिक ने प्रेर कर तुझ पर मेहरबान किया। और जो कोई मुसीबत तुझ पर आवे, तो दीनता के साथ मालिक की प्रार्थना कर, क्योंकि जो तू सब्र और बरदाश्त नहीं कर सकता है, तो मालिक तुझ पर दया करेगा। और प्रार्थना फ़ौरन कर, क्योंकि जो पछता कर प्रार्थना करता है, वह नादान है।

(१८)

असल बंदगी और भजन यह है कि सच्चा ख़ौफ़ और सच्चा भरोसा और विश्वास और सच्ची प्रीत मालिक के चरनों में होवे। निशान ख़ौफ़ का यह है कि पाप-कर्म

छोड़ देवे, और निशानी सच्चे भरोसे और विश्वास की यह है कि हमेशा मालिक का भजन और याद करता रहे, और निशान प्रीत का यह है कि शौक़ दर्शन का दिन २ बढ़ता रहे।

(१९)

जो कोई खूब पेट भर कर खाता है, उसमें यह पाँच इल्लतें पैदा होती हैं—एक, यह कि भजन में उसको रस नहीं मिलता। दूसरे, उसकी तन्दुरुस्ती में फ़र्क़ आता है। तीसरे, दयावंत कम होता है। चौथे, मालिक की सेवा और भजन उसको भारी पड़ता है। पाँचवे, मन उसका ज़बर हो जाता है।

(२०)

तीन वक़्त अपने मन को होशियार रक्खो—एक करतूत के वक़्त याद रक्खो कि मालिक तुझको देखता है। और जब बात करो तो याद रक्खो कि जो कुछ कि तू कह रहा है, मालिक सुनता है। और जब चुप हो तो याद रक्खो कि मालिक जानता है कि तू किस वास्ते चुप हुआ है।

(२१)

जो मन कि विद्या और बुद्धि और चतुराई से भरा हुआ है, वह सब के मनों से ज़्यादा सख़्त हो जाता है और

ऐसे कठोर मन की पहिचान यह है कि हमेशा नाक़िस तदबीरों और बहाने बाज़ियों में बँधा रहता है और अपनी समझ और तदबीर के आगे गुरू या मालिक के हुक्म को क़बूल नहीं करता ।

(२२)

परमार्थी को इन तीन बातों का लिहाज़ रखना चाहिये—एक, यह कि जो किसी को फ़ायदा न पहुँचा सके तो नुक़सान भी न पहुँचावे । दूसरे, जो किसी को खुश नहीं कर सके, तो नाखुश और दुखी भी न करे । तीसरे, अगर किसी की तारीफ़ करना नहीं चाहे तो बुराई भी न करे ।

(२३)

परमार्थी को इन दस नाक़िस बातों से परहेज़ करना गोया काल के जाल से बचना है—(१) ममता, (२) अहंकार (३) मान, (४) ईर्षा, (५) छल और कपट, (६) क्रोध, (७) हिर्स और तृष्णा खान-पान में, (८) बे-मौक़े और बे-फ़ायदे बोलना, (६) चाह और प्रीत धन और माल की, (१०) चाह और प्रीत मान-बड़ाई और मर्तबा और हुकूमत की । और इन दस भली बातों को इख़्तियार करना गोया मालिक को प्रसन्न करना है । (१) पछताना और प्रार्थना करना अपने क़सूरों पर, (२) सब्र और धीरज, (३) जैसे बने तैसे मालिक की मौज पर राज़ी होना,

(४) शुकराना मालिक की दात और दया का, (५) ख़ौफ़ मालिक की नाराज़गी का, (६) भरोसा मालिक की दया और बख़्शायश का, (७) बैराग चित्त में रखना, (८) सेवा और भजन मालिक का करना, (६) सब के साथ मित्र-भाव से बरतना, (१०) बढ़ाना प्रेम का सतगुरु और मालिक के चरनों में।

(२४)

इन पाँच बातों को याद रखना ज़रूर चाहिए। एक, किसी की पीठ पीछे बुराई न करना। दूसरे, किसी के भेद या गुप्त बात को प्रकट न करना। तीसरे, झूठ बात न बोलना। चौथे, सतगुरु की आज्ञा में बर्तना। पाँचवें, चोरी न करना अंतर या बाहर।

(२५)

शैतान हज़रत मूसा की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहने लगा कि मैं आपको तीन बातें सिखाता हूँ ताकि मालिक से आप मेरे हक़ में दुआ-ए-नेक माँगें। उन्होंने पूछा कि वे तीन बातें क्या हैं? कहा कि क्रोध और तुनक मिज़ाज से परहेज कीजिए क्योंकि जो कोई तेज़-मिज़ाज और हलका होता है, यानी जल्द भड़क उठता है, उससे मैं ऐसे खेलता हूँ जैसे लड़के गेंद से, कि जिधर चाहा गेंद को फेंक दिया। दूसरे, औरतों से बचे रहिए, क्योंकि संसार में मैंने जितने जाल और फंदे बिछाये हैं, उन सब से ज़्यादा मज़बूत और भारी फंदा औरत का है, और

मुझे इस फंदे का पूरा एतबार है। तीसरे, कँजूसी से बचिये क्योंकि जो कंजूस होता है उसका मैं संसार और परमार्थ दोनों मलियामेट कर देता हूँ।

(२६)

जिस में यह तीन बातें यानी संतोष और मालिक का ख़ौफ़ और दर्शन की बिरह और बेकली नहीं है, उसका उद्धार मुश्किल है।

(२७)

किसी अभ्यासी से पूछा कि तुम शादी क्यों नहीं करते। कहा कि दो भूतों से लड़ने की मुझमें ताक़त नहीं है। एक तो मेरा मन भूत है, दूसरे, उसका मन होगा। मैं अकेला दो भूतों से किस तरह लड़ सकूँगा।

(२८)

तीन काम न करने चाहिए, चाहे उनमें किसी क़द्र लोगों का ज़ाहिरी उपकार भी हो–(१) राजों और अमीरों का संग, (२) किसी स्त्री के साथ अकेले उठना-बैठना, चाहे वह परमार्थी होवे, और तू उसे परमार्थ ही सिखाता होवे, (३) कानों का कच्चा होना कि इसमें बहुत हर्ज और नुक़सान पैदा होते हैं।

(२९)

थोड़ा सा हाल मनमुख और गुरुमुख की चाल का लिखा जाता है, जिससे अपनी हालत की परख होती रहे–

(१) गुरुमुख का मतलब, कुल परमार्थी करतूत से यह रहता है कि मालिक और सतगुरु प्रसन्न होवें। मनमुख, सब कामों में अपने मन और इन्द्रियों का बिलास और प्रसन्नता देखता है।

(२) गुरुमुख, भूख-प्यास को सहता है ताकि उसका भजन बंदगी अच्छी तरह बने। मनमुख, जानवरों की तरह खाने-पीने में मगन होता है, और परमार्थी करतूत में मन नहीं लगाता, और आलस करता है।

(३) गुरुमुख, हमेशा विचार में रहता है और डरता है। मनमुख, तृष्णा और चाह दिन-दिन बढ़ाता है और बे-फ़िक्र और निडर रहता है।

(४) गुरुमुख, सतगुरु के सिवाय सब से बे-ख़ौफ़ रहता है। मनमुख, सतगुरु के सिवाय सबसे डरता है।

(५) गुरुमुख, सतगुरु के सिवाय सबसे निरास रहता है। मनमुख, सतगुरु के सिवाय सबसे आस रखता है।

(६) गुरुमुख, धन को परमार्थ पर नौछावर करता है, मनमुख, परमार्थ को धन पर नौछावर करता है, यानी धन के लिये अपने परमार्थी नुक़सान का ख़्याल नहीं करता है।

(७) गुरुमुख, भजन और बन्दगी करता है और रोता है। मनमुख, गुनाह करता है और हँसता है।

(८) गुरुमुख, तनहाई और एकान्त को पसंद करता है। मनमुख, भीड़-भाड़ और शोर-ओ-ग़ुल से राज़ी होता है

(९) गुरुमुख, जोतता और बोता है, पर डरता है कि शायद खेत न काटने पाऊँ। मनमुख, न जोतता है और न बोता है, पर आस बाँधता है कि काट कर खलियान लगाऊँ।

(१०) गुरुमुख, शरमीला और हयादार होता है। मनमुख, ढीठ, निलज्ज और बेहया होता है।

(११) गुरुमुख, कम-गो,-कम-रंज और सच्चा है। मनमुख, बकवादी, ज़ूद-रंज और झूठा है।

(१२) गुरुमुख, सब काम सलाह और धीरज के साथ करता है मनमुख, सब काम बे सोचे-समझे और घब-राहट के साथ पूरा करना चाहता है।

(१३) गुरुमुख, भजन और ध्यान में लौलीन रहता है। मनमुख, ऐंड़ने और सोने में मगन रहता है और बे-फ़ायदे वक़्त खोता है।

(१४) गुरुमुख, सबका हितकारी है। मनमुख, ख़ुद-मतलबी है।

(१५) गुरुमुख की बड़ाई सबके मन में समा जाती है। मनमुख, सब के मनों से गिर जाता है।

(१६) गुरुमुख, जो मालिक ने दिया है, उसमें सब्र करता है और शुकर करता है। मनमुख, बे-सब्र और ना-शुकरा है।

(१७) गुरुमुख का दिल, फूल से ज़्यादा कोमल होता है। मनमुख का दिल, पत्थर से ज़्यादा सख़्त होता है।

(१८) गुरुमुख, किसी बात की तमा नहीं रखता, क्योंकि वह कहता है कि मालिक ने मेरे लायक़ मुझे बहुत दे रक्खा है और उसी में राज़ी रहता है। मनमुख, लालची है। उसकी तृष्णा कभी नहीं बुझती, चाहे जितना उसको मिल जावे। इस सबब से वह हमेशा दुखी और नाराज़ रहता है।

(१९) गुरुमुख, कभी गाली या बुरा लफ़्ज़ मुँह से से नहीं निकालता है। मनमुख, अक्सर गाली के साथ बोलता है, और बुरा लफ़्ज़ निकालते उसे शरम नहीं आती।

(२०) गुरुमुख, सतगुरु की याद और दर्शन में मगन रहता है। मनमुख, दर्शनों में रूखा-सूखा और फीका रहता है।

(२१) गुरुमुख की बोली, मीठी है, क्योंकि वह हमेशा अमृत-रूपी बचन सतगुरु की महिमा और उनके गुणानुवाद में पगी रहती है। मनमुख की बोली, कड़वी है क्योंकि वह हमेशा संसार की बुराई और भलाई में सनी रहती है।

(३)

जीव को अपनी कसरों की चार तरह से ख़बर पड़ सकती है। एक तो, गुरू के सतसंग से कि वे दया करके इसकी कसरों को जतावेंगे। दूसरे, हितकारी सतसंगी के

पास बैठने से कि वह प्रीत की रीत से इसकी कसरों को दिखाता और समझाता रहेगा। तीसरे, निंदक और विरोधी के बचन सुनने से, क्योंकि उसकी नज़र हमेशा ऐबों पर पड़ती है, और वह, बग़ैर किसी लिहाज़ के, उनको प्रकट कर देता है। चौथे, और जीवों के हालात को ग़ौर से देखने और सुनने से, और जो कसरें उनमें दाखें, उनको अपने ऊपर घटा कर, उनसे परहेज़ करना।

(३१)

वह बड़ा मूर्ख है जो अपने को उत्तम जानता है, और वह बड़ा अक़्लमंद है जो अपनी कसरें निहारता रहता है, क्योंकि जो अपने तईं रोगी नहीं जानेगा, वह अपना इलाज न कर सकेगा, और यह जीव मन के रोगों में ग्रसा हुआ है, और इस बीमारी का दूर करना ज़रूर है।

(३२)

जो साधू, राजे लोग और बड़े आदमियों के पास जाता है, वह अपने परमार्थ को गँवाता है, क्योंकि उनके ख़ुश करने के वास्ते वह ऐसी बातें और काम करेगा, जिनके सबब से सच्चे मालिक की अप्रसन्नता होगी।

(३३)

किसी ने एक साधू से कहा कि मैं तुम्हारा सतसंग चाहता हूँ। उसने कहा कि दीनता करनी पड़ेगी। फिर कहा कि मैं मालिक को चाहता हूँ। उसने जवाब दिया

कि जो मुसीबत और तकलीफ़ आन कर पड़े, उसको ख़ुशी से झेलना पड़ेगा।

(३४)

सतगुरु अपने सेवक की वक़्त मुसीबत और तकलीफ़ और नुक़सान वग़ैरा के, इस तरह आज़माइश करते हैं, जैसे सुनार सोने को आग से आज़माता है। कोई सोना ख़ालिस निकलता है, और कोई ख़राब यानी मिलौनी का।

(३५)

एक साधू ने एक शख़्स को बीमार देख कर मालिक के चरनों में प्रार्थना की कि हे मालिक इस पर दया कर। मालिक ने फ़रमाया कि इस पर और क्योंकर दया करूँ, मैं तो इसी बीमारी के सबब से इस पर दया कर रहा हूँ क्योंकि उसके कर्म इसी तरह काटने के लायक़ हैं और उसकी अंतरी तरक़्क़ी इसी बीमारी के सबब से होगी।

(३६)

जो कोई थोड़ा-बहुत रोगी बना रहता है, उस पर परमेश्वर की दया है, क्योंकि इसके सबब से वह बहुत से गुनाहों से बच जाता है। ईश्वर का वचन है कि जो मेरे भक्त हैं, उनको मैं तीन बातें देता हूँ—निर्धनता, बीमारी और निरादर। इसी जुगत से मैं अपने भक्त की रक्षा करता हूँ।

(३७)

एक ने किसी साधू से पूछा कि साधू किसका नाम

है ? उसने जवाब दिया कि जिसकी बातों से भजन की कैफ़ियत और प्रेम की हालत दिल में पैदा होवे, और शौक़ बढ़े, और जिसका चुप रहना बिलकुल ध्यान और विचार की हालत है, और देखना बिलकुल बैराग और इबरत और नसीहत लेना ।

(३८)

किसी ने एक साधू से पूछा कि ऐसी बात मुझे बताइये कि जिससे मालिक मुझ को दोस्त रक्खे और प्यार करे । कहा कि संसार और मन के संसारी अंगों को दुश्मन, यानी परमार्थ में विघ्नकारक जान, मालिक तुझको दोस्त रक्खेगा, यानी तुझ पर दया करेगा ।

(३९)

जिसने इन छः बातों को इख़्तियार किया, वह सतगुरु का प्यारा हुआ और चौरासी के चक्कर से बच कर निज घर में पहुँचने का अधिकारी हुआ—एक, सतगुरु की, जिस क़दर बन सके, पहिचान करना और उनकी आज्ञा में बर्तना । दूसरी, मन को जानना और उसके कहने में न चलना । तीसरी, सत्य वस्तु को पहचानना और उसको जकड़ कर पकड़ना । चौथी, झूठी और असार वस्तु को जानना और उससे हाथ खींचना । पाँचवी, संसार को जाँचना और उसमें होशियारी से बर्तना यानी फँसना नहीं ।

छठी, परमार्थ की क़द्र जानना और दृढ़ कर पकड़ना यानी उसके मुवाफ़िक़ अपनी करनी और रहना दुरुस्त करना।

(४०)

इस संसार में जो वस्तु कि मालिक ने तुमको दी है, वह पहिले भी किसी को दे चुका होगा और जब तुम नहीं रहोगे, तब भी किसी को देगा। फिर ऐसी ना-पायदार चीज पर, कि जरूर छोड़नी पड़ेगी, दिल नहीं लगाना चाहिये। सुबह-शाम के खाना खाने और तन ढकने के सिवाय, और कुछ तुम्हारा हिस्सा नहीं है। इतने के वास्ते काहे को अपने तईं इस क़द्र खपाते हो? सतगुरु के चरनों में पहुँच कर उस चीज़ की प्राप्ति के वास्ते क्यों नहीं कोशिश और मेहनत करते कि जो हमेशा रहे और तुम भी उसका हमेशा आनंद ले सको?

(४१)

मालिक की एक घड़ी की प्रीत और प्रतीत सहित सेवा, सत्तर वर्ष की बे-प्रीत और बे-प्रतीत की सेवा से बेहतर है।

(४२)

परमार्थ तीन बातों में है—खौफ़, उम्मेद और मुहब्बत। खौफ़ क्या है? जो बातें परमार्थ में मनै हैं, उनसे परहेज करना। उम्मेद क्या है? सेवा और भजन, पित्ता मारके करना, जिससे एक दिन अपने निज मुक़ाम

को पा जायेगा। मुहब्बत क्या है? मालिक की मौज और हुक्म में राज़ी रहना।

(४३)

सवाल–अभ्यासी सेवक कब सच्चे हिरदे से बिनती और प्रार्थना करता है? और कब सच्चे मन से अंग २ उसका सेवा और भजन में लगता है? और कब सच्चा होकर मन के विकारों को छोड़ता है?

जवाब–जिस वक़्त मन उसका सच्चा डरता है और ख़ौफ़ खाता है, या जब उसके मन में गहरा प्रेम पैदा होता है।

(४४)

मालिक ने अपने तईं जीवों से मसलहत समझ कर गुप्त रक्खा है, और जो संत या फ़क़ीर उसके भेदी हैं, वह भी संसार में इसी तरह गुप्त रहते हैं, और जो मौज होवे तो प्रकट होकर उसका भेद कहते हैं।

(४५)

सवाल–परम पद के उपदेश का सच्चा और पूरा अधिकारी कौन है?

जवाब–परम पद के उपदेश का सच्चा अधिकारी वह है, जिसमें यह तीन बातें पाई जावें–एक, निरलोभी होना यानी जिसके नज़दीक सोना, चाँदी, और मिट्टी बराबर हों। दूसरी, यह कि संसारियों के बचन की क़दर उसके मन से

बिलकुल जाती रही हो, यानी निंदा और स्तुति दोनों उसके नज़दीक समान हों, न स्तुति में ख़ुशी और न निंदा में दुखी। तीसरी, यह कि मन की तरंगों और बिकारों में न बर्तने में ऐसा ख़ुश होता होवे, जैसा कि संसारी उनके बर्तने में मगन होते हैं। वही परम पद के उपदेश का पूरा अधिकारी है।

(४६)

जो कोई मालिक की याद में ऐसा लगा रहता है कि और कामों की उसको सुध नहीं रहती, तो मालिक उसके ज़रूरी कामों की आप सुध लेता है, और उनको दुरुस्त बना देता है, यानी सब तरह से रक्षा और सम्हाल अपने भक्त की, वह आप करता है।

(४७)

मालिक का जलवा और ज़हूर यानी प्रकाश अंतर में प्रकट है, यानी जो करतूत कि हम करते हैं, उसको वह देखता है। पिता के रूबरू लड़का बद-फ़ेली नहीं करता, इस वास्ते हमको भी चाहिये कि अपने सच्चे पिता यानी मालिक के रूबरू, बुरे काम सोचने और करने से डरें।

(४८)

सच्चे और कपटी भगत की क्या पहिचान है? सच्चा, अंतर और बाहर एकसाँ बर्तता है। उसके किसी काम में दिखावा और नमूद नहीं होती, और कपटी दिखावे और नमूद के काम ज़्यादा करता है, पर उसके अंतर में मालिक

की प्रीत कम होती है, और धन का प्यार उसके दिल में ज़्यादा रहता है। इसी वजह से उसका मन दो-रुख़ा है, जैसे कि रुपया, कि जिसकी दोनों तरफ़ें एकसाँ नहीं होतीं

(४९)

ख़ास दया मालिक की उस शख़्स पर जाननी चाहिये जिसको वह अपने चरनों का सच्ची प्रतीत बख़्शे। यह प्रतीत ऐसी रोशनी है जो मालिक और जीव के बीच में जितने परदे हैं, सब को दूर कर देता है।

(५०)

मालिक के सच्चे प्रेम और दर्शन के हासिल करने के वास्ते, चार दरियाओं को पार करना चाहिये, तब उसके चरनों में पहुँचना मुमकिन है—एक, संसार और किश्ती उसकी बैराग है। दूसरा, संसारियों का संग, और किश्ती उसकी सतगुरु का संग और संसारियों से जिस क़दर बने, दूर रहना है। तीसरा, मन, और किश्ती उसकी प्रीत-सहित सुमिरन और ध्यान और शब्द का श्रवन है। चौथा, गुनावन और तरंगें, और किश्ती उसकी मालिक के चरनों का प्रेम और चित्त को एकाग्र करके चरनों में लगाना है।

(५१)

मालिक के प्रेमियों का हिरदा मालिक के भेद और प्रेम का एक संदूक़चा है और वह अपना यह अनमोल जवाहिर ऐसे संदूक़चे में नहीं रखता है, जिसमें संसारी चीज़ें

रक्खी हुई हैं, यानी सच्चे मालिक की प्रीत उसी दिल में पैदा होगी, जो दुनिया की ख़्वाहिशों से ख़ाली है और वही उसके भेद को जानेगा।

(५२)

जो आँख कि अपने मालिक के नूर और जमाल के देखने में मशग़ूल न होवे, अंधी बेहतर है। और जो ज़बान कि उसके गुणानुवाद के गाने में मगन न होवे, गूँगी भली है। और जो कान कि सतगुरु का बचन और मालिक का अंतरी शब्द श्रवन करने में न लगा रहता हो, बहरा अच्छा है। और जो तन कि उसकी सेवा में न लगे वह नाकारा है।

(५३)

जो वक़्त कि गुज़र जाता है, वह फिर हाथ नहीं आता है। इस वास्ते वक़्त से ज़्यादा कोई क़ीमती चीज़ नहीं है। इसकी क़दर हमेशा चित्त में रखना चाहिये, और उसको बे-फ़ायदा और बुरे कर्मों में ख़र्च नहीं करना चाहिये। जहाँ तक बने उसको सतगुरु और मालिक की सेवा और बंदगी और याद में ख़र्च करो, ताकि यहाँ और वहाँ दोनों जगह फ़ायदा और सुख हासिल हो।

(५४)

जो काम कि मालिक के निमित्त किया जाता है, उसमें बंधन नहीं होता है, पर जो कर्म मालिक के निमित्त न होगा, उसमें मन को बंधन ज़रूर होगा। इस वास्ते, फल की आशा छोड़ कर, सब काम मालिक के चरनों में अर्पन

करके यानी मौज के आसरे करना चाहिये, ताकि मन फँसने न पावे, क्योंकि मन के बंधन से दुख-सुख पैदा होता है।

(५५)

जो लोग कहते हैं कि मालिक है और फिर उसकी बंदगी और उसके चरनों में प्रीत नहीं करते, और बानी पढ़ते हैं और फिर उस पर अमल नहीं करते, और मालिक की दात भोगते हैं और फिर उसका शुक्र नहीं करते, और जानते हैं कि भजन करके महा सुख का स्थान प्राप्त होगा और फिर उसकी चाह नहीं उठाते, और समझते हैं कि बिना भजन, नर्क और चौरासी में जावेंगे और फिर उसका ख़ौफ़ नहीं करते, और जानते हैं कि काल और मन बैरी हैं और फिर उन्हीं के कहने में चलते हैं, और जानते हैं कि मौत सिर पर खड़ी है और फिर उसका सामान नहीं करते, और बहुतेरों को गाड़ दिया और फूंक दिया पर अपने मरने का ख़ौफ़ नहीं करते, और औरों की कसरें देखते हैं और अपनी कसर दूर नहीं करते—ऐसे शख़्सों की दुआ और प्रार्थना मालिक किस तरह क़बूल करे ?

(५६)

जो कोई कि बहुत खाना खाता है, या बहुत कम खाता है और वह जो बहुत कम सोता है, या बहुत सोता है, वह कभी परमार्थ दुरुस्ती से नहीं कमा सकता। मगर जो शख़्स खाना खाने और सोने-जागने में ऐतदाल रक्खेगा, वह परमार्थ की कमाई ब-ख़ूबी कर सकेगा।

———